বিজ্ঞাপন।

হর্ষচরিত কাদম্বরীরচয়িতা, মহাকবি বাণভট্টের প্রণীত। উভয় গ্রন্থই এক কবির লেখনীর মুখ হইতে বিনির্গত, এক প্রণালীতে রচিত, এবং উভয়ই অসম্পূর্ণ অবস্থায় অবস্থিত। এ তিন বিষয়ে উভয় গ্রন্থের কোনও বৈলক্ষণ্য নাই, কিন্তু, উৎকর্ষ বিষয়ে, পরস্পর তুলনা করিলে, অনেক বৈলক্ষণ্য লক্ষিত হইবেক। কাদম্বরীর চমৎকারিতা ও মনোহারিতা হর্ষচরিতে ভূরি পরিমাণে উপলব্ধ হয় না। তদ্ভিন্ন, অনায়াসে অর্থ বোধ জন্মে না, কাদম্বরীতে এরূপ স্থলের সংখ্যা অতি অল্প; হর্ষচরিতে তাদৃশ স্থলের সংখ্যা অপেক্ষাকৃত অনেক অধিক। ফলকথা এই, হর্ষ-চরিত কাদম্বরী অপেক্ষা অনেক অংশে নিকৃষ্ট কাব্য। কাদম্বরী অপেক্ষা নিকৃষ্ট বটে, কিন্তু উহা যে এক প্রশংসনীয় গ্রন্থ, সে বিষয়ে সংশয় নাই। প্রথম ও দ্বিতীয় উচ্ছ্বাসে যেরূপ দৃষ্ট হইতেছে, তদনুসারে হর্ষচরিত বাণ-ভট্টের প্রথম কাব্য।

বাণভট্ট হর্ষচরিত নামে গদ্য গ্রন্থ লিখিয়াছিলেন, ইহা আমি পূর্ব্বে অবগত ছিলাম না। দ্বাদশ বৎসর অতিক্রান্ত হইল, আমার পরম বন্ধু, প্রসিদ্ধ চিকিৎসক, অধুনা

বিজ্ঞাপন।

হর্ষচরিত কাদম্বরীরচয়িতা, মহাকবি বাণভট্টের প্রণীত। উভয় গ্রন্থই এক কবির লেখনীর মুখ হইতে বিনির্গত, এক প্রণালীতে রচিত, এবং উভয়ই অসম্পূর্ণ অবস্থায় অবস্থিত। এ তিন বিষয়ে উভয় গ্রন্থের কোনও বৈলক্ষণ্য নাই, কিন্তু, উৎকর্ষ বিষয়ে, পরস্পর তুলনা করিলে, অনেক বৈলক্ষণ্য লক্ষিত হইবেক। কাদম্বরীর চমৎকারিতা ও মনোহারিতা হর্ষচরিতে ভূরি পরিমাণে উপলব্ধ হয় না। তদ্ভিন্ন, অনায়াসে অর্থ বোধ জন্মে না, কাদম্বরীতে এরূপ স্থলের সংখ্যা অতি অল্প; হর্ষচরিতে তাদৃশ স্থলের সংখ্যা অপেক্ষাকৃত অনেক অধিক। ফলকথা এই, হর্ষ-চরিত কাদম্বরী অপেক্ষা অনেক অংশে নিকৃষ্ট কাব্য। কাদম্বরী অপেক্ষা নিকৃষ্ট বটে, কিন্তু উহা যে এক প্রশংসনীয় গ্রন্থ, সে বিষয়ে সংশয় নাই। প্রথম ও দ্বিতীয় উচ্ছ্বাসে যেরূপ দৃষ্ট হইতেছে, তদনুসারে হর্ষচরিত বাণ-ভট্টের প্রথম কাব্য।

বাণভট্ট হর্ষচরিত নামে গদ্য গ্রন্থ লিখিয়াছিলেন, ইহা আমি পূর্ব্বে অবগত ছিলাম না। দ্বাদশ বৎসর অতিক্রান্ত হইল, আমার পরম বন্ধু, প্রসিদ্ধ চিকিৎসক, অধুনা

লোকান্তরবাসী হারাধন বিদ্যারত্ন মহাশয়, জম্বু রাজধানীতে কিছু দিন অবস্থিতি করিয়াছিলেন। তথা হইতে প্রত্যাগত হইয়া, তিনি আমাকে, এক খানি পুস্তক দেখাইয়া, কহিলেন, শ্রীযুত শেষ শাস্ত্রী নামে একটি পণ্ডিত, পুরস্কারলাভের প্রত্যাশায়, আমার নিকট এই পুস্তক খানি দিয়াছেন। ইহার নাম হর্ষচরিত; ইহা বাণভট্টপ্রণীত। বাণভট্টপ্রণীত, এই কথা শুনিয়া, আমি, যার পর নাই, আহ্লাদিত হইলাম, এবং পুরস্কারদানের অঙ্গীকার করিয়া, কবিরাজ মহাশয়ের নিকট হইতে, পুস্তক খানি লইলাম। এইরূপে অদৃষ্টচর, অশ্রুতপূর্ব্ব, অপূর্ব্ব এক গদ্য কাব্য হস্তগত হওয়াতে, আমি, কালবিলম্ব না করিয়া, নিরতিশয় আহ্লাদিত চিত্তে, সবিশেষ আগ্রহ সহকারে, উহা মুদ্রিত করিতে আরম্ভ করিলাম।

কিন্তু, অল্প দিনেই বুঝিতে পারিলাম, এক মাত্র পুস্তক অবলম্বন করিয়া, হর্ষচরিত মুদ্রিত করিলে, সম্যক্ শুদ্ধ হইবার সম্ভাবনা নাই। ফলকথা এই, এত স্থল অশুদ্ধ ও অসংলগ্ন প্রতীয়মান হইতে লাগিল, যে পুস্তকান্তরের সাহায্য না পাইলে, হর্ষচরিত মুদ্রিত করা পরামর্শসিদ্ধ বলিয়া বোধ হইল না। সুতরাং, হর্ষচরিতের মুদ্রাঙ্কনকার্য্য স্থগিত রাখিতে হইল। আমার সবিশেষ স্নেহভাজন শ্রীযুত নীলাম্বর মুখোপাধ্যায়, জম্বু রাজধানীতে, এক প্রধান

রাজপুরুষের পদে প্রতিষ্ঠিত আছেন। প্রসঙ্গক্রমে হর্ষচরিতের কথা উত্থাপিত হইলে, সবিশেষ সমস্ত অবগত হইয়া, তিনি কাশ্মীর দেশ হইতে দুই খানি পুস্তক পাঠাইয়া দেন। এইরূপে তিন পুস্তক হস্তগত হইলে, আমি, সাহস করিয়া, হর্ষচরিতের মুদ্রাঙ্কনকার্য্যে পুনরায় প্রবৃত্ত হই।

এক্ষণে, হর্ষচরিত মুদ্রিত হইল। এ বিষয়ে আমি যথোচিত যত্ন ও পরিশ্রম করিয়াছি; কিন্তু তাদৃশ যত্নের ও পরিশ্রমের অনুরূপ ফললাভ হয় নাই। আমার স্পষ্ট বোধ হইতেছে, পুস্তকের অনেক স্থল অশুদ্ধ ও অসংলগ্ন রহিয়া গেল। অর্দ্ধ ভাগ পর্য্যন্ত মুদ্রিত হইলে, আমি, বিরক্ত হইয়া, পুনরায়, হর্ষচরিতের মুদ্রাঙ্কনকার্য্য হইতে বিরত হইবার সঙ্কল্প করিয়াছিলাম; কিন্তু, অনেকের সবিশেষ অনুরোধের বশবর্ত্তী হইয়া, সে সঙ্কল্পের অনুসরণ করিতে পারিলাম না। অনুরোধকারী মহাশয়েরা আমায়, নানা কারণ দর্শাইয়া, হর্ষচরিতের মুদ্রাঙ্কনকার্য্য হইতে, কোনও মতে, বিরত হইতে দিলেন না।

শ্রীঈশ্বরচন্দ্রশর্ম্মা

কলিকাতা।
১লা অগ্রহায়ণ, সংবৎ ১৯৩৯।

T. G. Krishnasawmy
B. A. class
Presidency col
Madras

हर्षचरितम् ।

प्रथम उच्छ्वासः ।

नमस्तुङ्गशिरश्चुम्बिचन्द्रचामरचारवे ।
त्रैलोक्यनगरारम्भमूलस्तम्भाय शम्भवे ॥ १ ॥

हरकण्ठग्रहानन्दमीलिताक्षीं नमाम्युमाम् ।
कालकूटविषस्पर्शजातमूर्च्छागमामिव ॥ २ ॥

नमः सर्व्वविदे तस्मै व्यासाय कविवेधसे ।
चक्रे पुण्यं सरस्वत्या यो वर्षमिव भारतम् ॥ ३ ॥

प्रायः कुकवयो लोके रागाधिष्ठितदृष्टयः ।
कोकिला इव जायन्ते वाचालाः कामकारिणः (१) ॥ ४ ॥

सन्ति श्वान इवासंख्या जातिभाजो गृहे गृहे ।
उत्पादका न बहवः कवयः शरभा इव ॥ ५ ॥

अन्यवर्णपरावृत्त्या बन्धचिह्ननिगूहनैः ।
अनाख्यातः सतां मध्ये कविश्चौरो विभाव्यते ॥ ६ ॥

श्लेषप्रायमुदीच्येषु प्रतीच्येष्वर्थमात्रकम् ।
उत्प्रेक्षा दाक्षिणात्येषु गौडेष्वक्षरडम्बरः ॥ ७ ॥

नवोऽर्थो जातिरग्राम्या श्लेषोऽक्लिष्टः स्फुटो रसः ।
विकटाक्षरबन्धश्च कृत्स्नमेकत्र दुष्करम् ॥ ८ ॥

(१) कामचारिणः । २ ।

किं कवेस्तस्य काव्येन सर्व्ववृत्तान्तगामिनी ।
कथेव भारती यस्य न प्राप्नोति दिगन्तरम् ॥ ९ ॥
उच्छ्वासान्तेऽप्यखिन्नास्ते येषां वक्त्रे सरस्वती ।
कथमाख्यायिकाकारा न ते वन्द्याः कवीश्वराः ॥ १० ॥
कवीनामगलद्दर्पो नूनं वासवदत्तया ।
शक्त्येव पाण्डुपुत्राणां गतया कर्णगोचरम् ॥ ११ ॥
पदबन्धोज्ज्वलो हारी कृतवर्णक्रमस्थितिः ।
भट्टारहरिचन्द्रस्य गद्यबन्धो नृपायते ॥ १२ ॥
अविनाशिनमग्राम्यमकरोत् सातवाहनः ।
विशुद्धजातिभिः कोषं रत्नैरिव सुभाषितैः ॥ १३ ॥
कीर्त्तिः प्रवरसेनस्य प्रयाता कुमुदोज्ज्वला ।
सागरस्य परं पारं कपिसेनेव सेतुना ॥ १४ ॥
सूत्रधारकृतारम्भैर्नाटकैर्बहुभूमिकैः ।
सपताकैर्यशो लेभे भासो देवकुलैरिव ॥ १५ ॥
निर्गतासु न वा कस्य कालिदासस्य सूक्तिषु ।
प्रीतिर्मधुरसार्द्रासु मञ्जरीष्विव जायते ॥ १६ ॥
समुद्दीपितकन्दर्पा कृतगौरीप्रसाधना ।
हरलीलेव नो कस्य विस्मयाय बृहत्कथा ॥ १७ ॥
आढ्यराजकृतोत्साहैर्हृदयस्थैः स्मृतैरपि ।
जिह्वान्तः कृष्यमाणेव न कवित्वे प्रवर्त्तते ॥ १८ ॥
तथापि नृपतेर्भक्त्या भीतो निर्वहणाकुलः ।
करोम्याख्यायिकाम्भोधौ जिह्वाप्लवनचापलम् ॥ १९ ॥
सुखप्रबोधललिता सुवर्णघटनोज्ज्वलैः ।
शब्दैराख्यायिका भाति शय्येव प्रतिपादकैः ॥ २० ॥

जयति ज्वलत्प्रतापज्वलनप्राकारकृतजगद्रक्षः।
सकलप्रणयिमनोरथसिद्धिश्रीपर्वतो हर्षः॥ २१ ॥

एवमनुश्रूयते पुरा किल भगवान् स्वलोकमधितिष्ठन् परमेष्ठी विकासिनि पद्मविष्टरे समुपविष्टः सुनासीरप्रमुखैर्गीर्वाणैः परिवृतो ब्रह्मोद्याः कथाः कुर्वन् अन्याश्च निरवद्या विद्यागोष्ठीर्भावयन् कदाचिदासाञ्चक्रे। तथासीनञ्च तं त्रिभुवनप्रतीक्ष्यं मनुदक्षचाक्षुषप्रभृतयः प्रजापतयः सर्वे च सप्तर्षिपुरःसरा महर्षयः सिषेविरे। केचिदृचः स्तुतिचतुराः समुदचारयन्। केचिदपचितिभाञ्जि यजूंष्यपठन्। केचित् प्रशंसासामानि जगुः। अपरे विवृतक्रतुक्रियातन्त्रान् मन्त्रान् व्याचचक्षिरे। विद्याविसंवादकृताश्च तत्र तेषामन्योन्यस्य विद्याविवादाः प्रादुरभवन्।

अथातिरोषणः प्रकृत्या महातपा मुनिरत्रेस्तनयस्तारापतेर्भ्राता नाम्ना दुर्वासा द्वितीयेन मन्दपालनाम्ना मुनिना सह कलहायमानः साम गायन् क्रोधान्धो विस्वरमकरोत्। सर्वेषु च शापभयप्रतिपन्नमौनेषु मुनिषु अन्यालापलीलया अवधीरयति कमलसम्भवे भगवती कुमारी किञ्चिदुन्मुक्तबालभावे भूषितनवयौवने नवे वयसि वर्त्तमाना गृहीतचामरप्रचलद्भुजलता पितामहमुपवीजयन्ती निर्भर्त्सनताडनजातरागाभ्यामिव स्वभावारुणाभ्यां पादपल्लवाभ्यां समुद्भासमाना शिष्यद्वयेनेव पदक्रममुखरेण नूपुरयुगलेन वाचालितचरणा मदननगरतोरणस्तम्भविभ्रमं बिभ्राणा' जङ्घाद्वितयं सलीलमुत्कलहंसकुलकलालापप्रलापिनि मेखलादाम्नि (२) विन्यस्तवामहस्तकिसलया विद्वन्मानसनिवास-

अन्येन गुणकलापेनेव अंसावलम्बिना ब्रह्मसूत्रेण पवित्रीकृतकाया, भास्वन्मध्यनायकम् अनेकमुक्तानुयातम् अपवर्गमार्गमिव हारमुद्वहन्ती, वदनप्रविष्टसर्वविद्या अलक्तकरसेनेव पाटलेन (३) स्फुरता दशनच्छदेन विराजमाना, संक्रान्तकमलासनकृष्णाजिनप्रतिमा मधुरगीताकर्णनावतीर्णशशिहरिणामिव कपोलस्थलीं दधाना, तिर्यक् सावज्ञमुन्नमितैकभ्रूलता श्रोत्रमेकं विस्वरश्रवणकलुषितं प्रक्षालयन्तीव अपाङ्गनिर्गतेन लोचनाम्बुजलप्रवाहेण दूरतरश्रवणेन च विकसितसितसिन्धुवारमञ्जरीजुषा हसतेव प्रकटितविद्यामदा श्रुतिप्रणयिभिः प्रणवैरिव (४) कर्णावतंसकुसुममधुकरकुलैरुपास्यमाना, सूक्ष्मविमलेन प्रज्ञाप्रतानेनेव अंशुकेनाच्छादितशरीरा वाङ्मयमिव निर्मलं दिक्षु दशनज्योत्स्नालोकं विकिरन्ती देवी सरस्वती श्रुत्वा जहास ।

दृष्ट्वा च तां तथा हसन्तीं स मुनिः आः पापकारिणि दुर्गृहीतविद्यालवावलेपदुर्विदग्धे मामुपहससि इत्युक्त्वा शिरःकम्पशीर्यमाणबन्धविशरारोः उन्मिषत्पिङ्गलिम्नो जटाकलापस्य शोचिषा सिञ्चन्निव रोषदहनद्रवेण दश दिशः कृतकालसन्निधानामिव अन्धकारितललाटपट्टाष्टापदाम् अन्तकान्तःपुरमण्डनपत्रभङ्गमकरिकां भ्रुकुटिमाबध्नन् अतिलोहितेन चक्षुषा अमर्षदेवतायै स्वरुधिरोपहारमिव प्रयच्छन् निर्दयदष्टदशनच्छदभयपलायमानामिव वाचं रुन्धन् दन्तांशुच्छलेन अंसावलम्बिनः शापशासनपटस्येव ग्रथ्नन् ग्रन्थिम् अन्यथा कृष्णाजिनस्य स्वेदकणप्रतिबिम्बितैः शापशङ्काशरणागतैरिव सुरासुरमुनिभिः प्रतिपन्नसर्वावयवः कोपकम्पतर-

(३) चरणालक्तकरसपाटलेनेव च । १ । २ । चरणालक्तकरसेनेव पाटलेन । ३ ।

(४) प्रणवैरिव च । १ । २ ।

स्थिताङ्गुलिना करेण प्रवाहमजस्राम् अक्षरमालामिव अक्षमालाम् आक्षिप्य वामकरतलेन वारिणा समुपस्पृश्य शापजलं जग्राह ।

अत्रान्तरे स्वयम्भुवोऽभ्याशे समुपविष्टा देवी मूर्त्तिमती पीयूष-फेनपटलपाण्डुरं कल्पद्रुमदुकूलवल्कलं वसाना बिसतन्तुमयेनांशु-केन उन्नतस्तनमध्यबद्धगात्रिकाग्रन्थिः तपोबलनिर्जितत्रिभुवनजय-पताकाभिरिव तिसृभिर्भस्मपुण्ड्रकराजिभिर्विराजितललाटाजिरा स्कन्धावलम्बिना सुधाफेनधवलेन तपःप्रभावकुण्डलीकृतेन गङ्गा-स्रोतसेव योगपट्टकेन विरचितवैकक्ष्यका सव्येन ब्रह्मोत्पत्तिपुण्ड-रीकमुकुलमिव स्फटिककमण्डलुं करेण कलयन्ती दक्षिणमक्ष-मालाकृतपरिक्षेपं कम्बुनिर्मितोर्मिकादन्तुरितं तर्जनतरङ्गिततर्ज-नीकम् उत्क्षिपन्ती करम् आः पाप क्रोधोपहत दुरात्मन् अज्ञ अनात्मज्ञ ब्रह्मबन्धो मुनिखेट निराकृत कथमात्मस्खलितविलक्षः सुरासुरमुनिमनुजवृन्दवन्दनीयां त्रिभुवनमातरं भगवतीं सरस्वतीं शप्तुमभिलषसि इत्यभिदधाना रोषविमुक्तवेत्रासनैः ओङ्कारमुख-रितमुखैः उत्क्षेपदोलायमानजटाभारभरितदिग्भिः परिकरबन्ध-भ्रमितकृष्णाजिनपटच्छायाश्यामायमानदिवसैः अमर्षनिश्वास-दोलाप्रेङ्खोलितब्रह्मलोकैः सोमरसमिव स्वेदविसरव्याजेन वमद्भिः अग्निहोत्रपवित्रभस्मस्मेरललाटैः कुशतन्तुचारुचामरचीरचीवरिभिः आषाढिभिः प्रचलचलितकमण्डलुमण्डलैः मूर्त्तैश्चतुर्भिर्वेदैः सह दूर्वासमपहाय सावित्री समुत्तस्थौ ।

ततो मर्षय भगवन् अभूमिरेषा शापस्य इत्यनुनाथ्यमानोऽपि विबुधैः उपाध्याय स्खलितमेकं क्षमस्वेति बद्धाञ्जलिपुटैः प्रसाद्य-मानोऽपि स्वशिष्यैः पुत्र मा कृथास्तपसः प्रत्यूहमिति निवार्य-माणोऽप्यत्रिणा रोषावेशविवशो दुर्वासा दुर्विनीते व्यपनयामि ते

लम्बेन गुणकलापेनेव अंसावलम्बिना ब्रह्मसूत्रेण पवित्रीकृतकाया, भास्वन्मध्यनायकम् अनेकमुक्तानुयातम् अपवर्गमार्गमिव हारमुद्वहन्ती, वदनप्रविष्टसर्व्वविद्या अलक्तकरसेनेव पाटलेन (३) स्फुरता दशनच्छदेन विराजमाना, संक्रान्तकमलासनकृष्णाजिनप्रतिमां मधुरगीताकर्णनावतीर्णशशिहरिणामिव कपोलस्थलीं दधाना, तिर्यक् सावज्ञमुन्नमितैकभ्रूलता श्रोत्रमेकं विस्वरश्रवणकलुषितं प्रक्षालयन्तीव अपाङ्गनिर्गतेन लोचनाम्बुजलप्रवाहेण दूरतरश्रवणेन च विकसितसितसिन्धुवारमञ्जरीजुषा हसतेव प्रकटितविद्यामदा श्रुतिप्रणयिभिः प्रणवैरिव (४) कर्णावतंसकुसुममधुकरकुलैरुपास्यमाना, सूक्ष्मविमलेन प्रज्ञाप्रतानेनेव अंशुकेनाच्छादितशरीरा वाङ्मयमिव निर्मलं दिक्षु दशनज्योत्स्नालोकं विकिरन्ती देवी सरस्वती श्रुत्वा जहास।

दृष्ट्वा च तां तथा हसन्तीं स मुनिः आः पापकारिणि दुर्गृहीतविद्यालवावलेपदुर्विदग्धे मामुपहससि इत्युक्त्वा शिरःकम्पशीर्य्यमाणबन्धविशरारोः उन्मिषत्पिङ्गलिम्नो जटाकलापस्य शोचिषा सिञ्चन्निव रोषदहनद्रवेण दश दिशः कृतकालसन्निधानामिव अन्धकारितललाटपट्टाष्टापदाम् अन्तकान्तःपुरमण्डनपत्रभङ्गमकरिका भ्रुकुटिमाबध्नन् अतिलोहितेन चक्षुषा अमर्षदेवतायै स्वशिरोपहारमिव प्रयच्छन् निर्दयदष्टदशनच्छदभयपलायमानामिव वाचं रुन्धन् दन्तांशुच्छलेन अंसावलम्बिनः शापशासनपटस्येव ग्रथ्नन् ग्रन्थिम् अन्यथा कृष्णाजिनस्य स्वेदकणप्रतिबिम्बितैः शापशङ्काशरणागतैरिव सुरासुरमुनिभिः प्रतिपन्नसर्व्वावयवः कोपकम्पतर-

(३) चरणालक्तकरसपाटलेनेव च। १। २। चरणालक्तकरसेनेव पाटलेन। ३।
(४) प्रणवैरिव च। १। २।

ल्लिताङ्गुलिना करेण प्रवाहमवम्भाम् अक्षरमालामिव अक्षमालाम् आक्षिप्य कमण्डलुजलेन वारिणा समुपस्पृश्य शापजलं जग्राह।

अत्रान्तरे स्वयम्भुवोऽन्तिके समुपविष्टा देवी मूर्तिमती पीयूष-फेनपटलपाण्डुरं कल्पद्रुमदुकूलवल्कलं वसाना, बिसतन्तुमयेनांशुकेन उन्नतस्तनमध्यबद्धगात्रिकाग्रन्थिः तपोबलनिर्जितत्रिभुवनजय-पताकाभिरिव तिसृभिर्भस्मपुण्ड्रकराजिभिर्विराजितललाटाजिरा स्कन्धावलम्बिना सुधाफेनधवलेन तपःप्रभावकुण्डलीकृतेन गङ्गा-स्रोतसेव योगपट्टकेन विरचितवैकक्ष्यका सव्येन ब्रह्मोत्पत्तिपुण्ड-रीकमुकुलमिव स्फटिककमण्डलुं करेण कलयन्ती दक्षिणमक्ष-मालाकृतपरिक्षेपं कम्बुनिर्मितोर्मिकाकन्दुरितं तर्जनतरङ्गिततर्ज-नीकम् उत्क्षिपन्ती करम् आः पाप क्रोधोपहत दुरात्मन् अज्ञ अनात्मज्ञ ब्रह्मबन्धो मुनिखेट निराकृत कथमात्मस्खलितविलक्षः सुरासुरमुनिमनुजवृन्दवन्दनीयां त्रिभुवनमातरं भगवतीं सरस्वतीं शप्तुमभिलषसि इत्यभिदधाना रोषविमुक्तवेत्रासनैः ओङ्कारमुख-रितमुखैः उत्क्षेपदोलायमानजटाभारभरितदिग्भिः परिकरबन्ध-भ्रमितकृष्णाजिनपटच्छायाश्यामायमानदिवसैः अमर्षनिश्वास-दोलाप्रेङ्खोलितब्रह्मलोकैः सोमरसमिव स्वेदविसरव्याजेन स्रवद्भिः अग्निहोत्रपवित्रभस्मस्मेरललाटैः कुशतन्तुचापचामरचीरचीवरिभिः आषाढिभिः प्रचरणीकृतकमण्डलुमण्डलैः मूर्तैश्चतुर्भिर्वेदैः सह तूष्णीमपहाय सावित्री समुत्तस्थौ।

ततो मर्षय भगवन् अभूमिरेषा शापस्य इत्यनुनीयमानोऽपि विबुधैः उपाध्याय स्खलितमेकं क्षमस्वेति बद्धाञ्जलिपुटैः प्रसाद्य-मानोऽपि स्वशिष्यैः पुत्र मा कृथास्तपसः प्रत्यूहमिति निवार्य-माणोऽप्यत्रिणा रोषावेशविवशो दुर्वासा दुर्विनीते व्यपनयामि ते

विद्याजनिताम् उन्नतिमिमाम् अधस्तादच्छ मर्त्यलोकम् इत्युक्त्वा तच्छापोदकं विससर्ज। प्रतिशापदानोद्यतां सावित्रीं सखि संहर रोषम् (५) असंस्कृतमतयोऽपि जात्यैव द्विजन्मानो माननीया इत्यभिदधाना सरस्वत्येव न्यवारयत्।

अथ तां तथा शप्तां सरस्वतीं दृष्ट्वा पितामहो भगवान् कमलोत्पत्तिलग्नमृणालसूत्रामिव धवलयज्ञोपवीतिनीं तनुमुद्वहन् उद्गच्छदच्छाङ्गुलीयकमरकतमयूखलताकलापेन त्रिभुवनोपप्लवप्रथमकुशापीडधारिणेव दक्षिणेन करेण निवार्य्य शापकलकलम् अतिविमलदीर्घैर्भाविकृतयुगारम्भसूत्रपातमिव दिक्षु पातयन् दशनकिरणैः सरस्वतीप्रस्थानमङ्गलपटहेनेव पूरयन्नाशाः स्वरेण धीरमुवाच ब्रह्मन् न खलु साधुसेवितोऽयं पन्थाः येनासि प्रवृत्तः। निहन्त्येष परस्तात्। उद्दामप्रवृत्तेन्द्रियाश्वसमुत्थापितं हि रजः कलुषयति दृष्टिमनक्षजिताम्। कियद्दूरं वा चक्षुरीक्षते विशुद्धया हि धिया पश्यन्ति कृतबुद्धयः सर्व्वानर्थान् असतः सतो वा। निसर्गविरोधिनी चेयं पयःपावकयोरिव धर्म्मक्रोधयोरेकत्र वृत्तिः। आलोकमपहाय कथं तमसि निमज्जसि। क्षमा हि मूलं सर्व्वतपसाम्। परदोषदर्शनदक्षा दृष्टिरिव कुपिता बुद्धिर्न ते आत्मरागदोषं पश्यति। क्व महातपोभारवैवधिकता क्व पुरोभागित्वम्। अतिरोषणश्चक्षुष्मान् अन्ध एव जनः। नहि कोपकलुषिता विमृशति मतिः कर्त्तव्यमकर्त्तव्यं वा। कुपितस्य प्रथममन्धकारीभवति विद्या ततो भ्रुकुटिः। आदाविन्द्रियाणि रागः समास्कन्दति चरमं चक्षुः। आरम्भे तपो गलति पश्चात् स्वेदसलिलम्। पूर्व्वमयशः स्फुरति अनन्तरमधरः। कथं लोकविनाशाय ते विषपादपस्येव

(५) कोपम्। १।

जटावल्कलानि जातानि। अनुचिता चास्य मुनिवेशस्य हार-
यष्टिरिव इन्द्रमुक्ता चित्तवृत्तिः। शैलूष इव वृथा वहसि कृत्रिमम्
उपशमशून्येन चेतसा तापसाकल्पम्। अल्पमपि न ते पश्यामि
कुशलजातम्। अनेनातिलघिम्ना अद्याप्युपर्येव प्लवसे ज्ञानो-
दन्वतः। न खल्वनेन मूकाः पशवो जडा वा सर्व एते महर्षयः।
रोषदोषनिषण्णे स्वहृदये निग्राह्ये किमर्थमसि निगृहीतवाननागसं
सरस्वतीम्। एतानि तानि आत्मप्रमादस्खलितवैलक्ष्याणि यै-
र्याप्यतां यात्यविदग्धो जन इत्युक्त्वा पुनराह वत्से सरस्वति विषादं
मा गाः। एषा त्वामनुयास्यति सावित्री विनोदयिष्यति चास्म-
द्विरहदुःखिताम्। आत्मजमुखकमलावलोकनावधिश्च ते शापोऽयं
भविष्यतीति। एतावदभिधाय विसर्जितसुरासुरमुनिमनुजमण्डलः
ससम्भ्रमोपगतनारदस्कन्धविन्यस्तहस्तः (१) समुचिताह्निककरणा-
योदतिष्ठत्। सरस्वत्यपि शप्ता किञ्चिदधोमुखी धवलकृष्णशारां
कृष्णाजिनलेखामिव दृष्टिमुरसि पातयन्ती सुरभिनिश्वासपरि-
मललग्नैर्मूर्त्तैः शापाक्षरैरिव षट्चरणचक्रैराकृष्यमाणा शापशोक-
शिथिलितहस्ता अधोमुखीभूतेनोपदिश्यमानमर्त्यलोकावतरण-
मार्गेव नखमयूखजालकेन नूपुरवाचालितैर्भवनकलहंसकुलैर्ब्रह्म-
लोकनिवासिहृदयैरिवानुगम्यमाना समं सावित्र्या गृहमगात्।

अत्रान्तरे सरस्वत्यवतरणवार्तामिव कथयितुं मध्यमं लोक-
मवततारांशुमाली। क्रमेण च मन्दायमाने मुकुलितबिसिनी-
विसरव्यसनविषण्णसरसि वासरे मधुमदमुदितकामिनीकोपकुटिल-
कटाक्षक्षिप्यमाण इव क्षेपीयः क्षितिधरशिखरमवतरति तरुणतर-
कपिलपललोहिते लोकैकचक्षुषि भगवति प्रस्नुतस्तनमाहेयीयूथ-

चरत्क्षीरधाराधवलितेषु आसन्नचन्द्रोदयोद्दामक्षीरोदलहरी-
क्षालितेष्विव दिव्याश्रमोपशल्येषु, अपरार्णवप्रचारचलिते, चामरिणि
चामीकरतटताडनरञ्जितरदने रदति सुरस्रवन्तीरोधांसि स्वैरम्
ऐरावते, प्रवृत्तानेकविद्याधराभिसारिकासहस्रचरणालक्तकरसानु-
लिप्त इव प्रकटयति च तारापथे पाटलतां तारापथप्रस्थितसिद्ध-
दत्तदिनकरार्घ्यावर्जिते रञ्जितककुभि कुसुम्भभासि स्रवति
पिनाकिप्रणतिमुदितसन्ध्यास्वेदसलिल इव रक्तचन्दनद्रवे वन्दारु-
मुनिवृन्दारकवृन्दबध्यमानसन्ध्याञ्जलिवने, ब्रह्मोत्पत्तिकमलसेवागत-
सकलकमलाकर इव राजति ब्रह्मलोके, समुच्चारिततृतीयसवन-
ब्रह्मणि ब्रह्मर्षि, ज्वलितवैतानज्वलनज्वालाजटालाजिरेषु आरब्ध-
धर्म्मसाधनशिबिरनीराजनेष्विव सप्तर्षिमन्दिरेषु अघमर्षणमुषित-
किल्बिषविषगरोद्गारवत्सु यतिषु सन्ध्योपासनासीनतपस्विपंक्ति-
पूतपुलिने प्लवमाननलिनयोनियानहंससहासदन्तुरितोर्मिणि मन्दा-
किनीजले जलदेवतातपत्रे चञ्चरीककुलकलत्रान्तःपुरसौधे निजमधु-
मधुरामोदिनि मधुपमुदि मुमुद्रिषमाणे कुमुदवने दिवसाव-
सानताम्यत्तामरसमधुरमधुरसपीतिप्रीते सुषुप्सति चटुलचपलकारण्ड-
कहूवनकुञ्चितकन्धरे धुतपक्षराजिवीजितराजीवसरसि राज-
हंसयूथे नटलताकुसुममधूलिधूसरितसरिति सिद्धपुरपुरन्ध्रिधम्मिल्ल-
मल्लिकामन्थपाशिनि सायन्तने तनीयसि निशानिश्वासनिभे
नभस्वति सद्योभेदवदुग्रकेसरकोटिसङ्कटकुशेशयकोटरकुटी-
शायिनि षट्चरणचक्रे सद्योद्भूतधूर्जटिजटाटवीकुटजकुड्मलनिकर-
निभे नभस्तलं स्तबकयति तारागणे सन्ध्यानुबन्धताम्रे परिणम-
त्तालफलत्वक्त्विषि कालमेघमेदुरे मेदिनीं मीलयति नववयसि
तमसि तरुणतरतिमिरपटलपाटनपटीयसि समुन्मिषति यामिनी-

कामिनीकर्णपूरचम्पककलिकाकलापके प्रदीपप्रकरे, प्रतनुतुहिन-
किरणकिरणलावण्यालोकपाण्डुनि भाखाननीलनीरमुक्ताकालिन्दी-
कूलवालुकापुलिनायमाने घ्रातमातबे जयवति तिमिरमायासुबे वसुधि
मेचकितविकसितकुवलयसरसि शशधरकरनिकरकचग्रहाविले (७)
विलीयमाने मानिनीमनसीव शर्वरीशबरीचिकुरचये चापपल-
लिवि तमसि उदिते, भगवत्युदयगिरिशिखरकटककुहरहरिखरनखर-
निवहहेतिनिहतनिजहरिणगलितरुधिरनिवहनिचितमिव लो-
हितं वपुरुदयरागधरमधरमिव विभावरीवध्वा धारयति शीतभानौ,
अचलच्युतचन्द्रकान्तजलधाराधौत इव ध्वस्ते ध्वान्ते गोलोकगलित-
दुग्धविसरवाहिनि दन्तमयमकरमुखमहाप्रणाल इवापूरयितुम्
प्रवृत्ते पयोधिमिन्दुमण्डले स्पष्टे प्रदोषसमये सावित्री शून्यहृदयाम्
इव किमपि ध्यायन्तीं सास्रां (८) सरस्वतीमवादीत् सखि त्रि-
भुवनोपदेशदानदक्षायास्तव(९) पुरो जिह्वा जिह्रेति मे जल्पन्ती ।
जानास्येव यादृशो विसंस्थुलाः गुणवत्यपि जने दुर्जनवन्नि-
र्दाक्षिण्याः क्षणभङ्गिन्यो दुरतिक्रमणीया न रमणीया दैवस्य वामा
वृत्तयः । निष्कारणा च निकारकणिकापि कलुषयति मनस्विनो
ऽपि मानसमसदृशजनादापतन्ती । अनवरतनयनजलसिच्यमानश्च
तरुरिव विपल्लवोऽपि सहस्रधा प्ररोहति । अतिसुकुमारश्च जनं
सन्तापपरमाणवो मालतीकुसुममिव म्लानिमानयन्ति । महतां
चोपरि निपतन्नणुरपि सृणिरिव करिणां क्लेशः कदर्थनायालम् ।
सहजस्नेहपाशग्रन्थिबन्धनाश्च बान्धवभूता दुस्त्यजा जन्मभूमयः ।
दारयति दारुणः क्रकचपात इव हृदयं संस्तुतजनविरहः । सा

(७) शशधरकरनिकरकरम्बिते च पक्षाविले । २ । ४ ।

(८) सास्रा । २ । (९) ते । १ । २ ।

नार्हस्येवं भवितुम्। अभूमिः खल्वसि दुःखक्ष्वेडाङ्कुरप्रसवानाम्। अपिच पुराकृते कर्म्मणि बलवति शुभेऽशुभे वा फलकृति तिष्ठति अधिष्ठातरि प्रष्ठे पृष्ठतश्च कोऽवसरो विदुषि शुचाम्। इदञ्च ते त्रिभुवनमङ्गलैककमलममङ्गलभूताः कथमिव मुखमपवित्रयन्ति अश्रुबिन्दवः। तदलम् अधुना कथय कतमं भुवो भागमलङ्कर्त्तुम् इच्छसि। कस्मिन्नवतितीर्षति ते पुण्यभाजि प्रदेशे हृदयम्। कानि वा तीर्थान्यनुग्रहीतुमभिलषसि (१०)। केषु वा धन्येषु तपोवनधामसु तपस्विनी स्थातुमिच्छसि (११)। सज्जोऽयमुपचरणचतुरः सहपांशुक्रीडापरिचयपेशलः प्रेयान् सखीजनः। क्षितितलावतरणाय्रानन्यशरणा चाद्यैव प्रभृति प्रतिपद्यस्व मनसा वाचा क्रियया च सर्व्वविद्याविधातारं दातारञ्च श्रेयसश्च चरणरजःपवित्रितत्रिदशासुरं सुधासूतिकलिकाकल्पितकर्णावतंसं देवदेवं त्रिभुवनगुरुं त्र्यम्बकम्। अल्पीयसैव कालेन स ते शापशोकविरतिं वितरिष्यतीति।

एवमुक्ता मुक्तमुक्ताफलधवललोचनजललवा सरस्वती प्रत्यवादीत् प्रियसखि त्वया सह विचरन्त्या न मे काचिदपि पीडाम् उत्पादयिष्यति ब्रह्मलोकविरहः शापशोको वा केवलं कमलासनसेवासुखमार्द्रयति मे हृदयम्। अपिच त्वमेव वेत्सि मे भुवि धर्म्मधामानि समाधिसाधनानि योगयोग्यानि च स्थानानि स्थातुम् इत्येवमभिधाय (१२) विरराम रचरणकोपनीतप्रजागरा च अनिमीलितलोचनैव तां निशामनयत्।

अन्येद्युः(१३) उदिते भगवति त्रिभुवनशेखरे खखखणायमान-

(१०) स्पृहयसि। २।
(११) अभिलषसि। २।
(१२) अभिदधाना। २।
(१३) अपरेद्युः। २।

स्फुरत्खलीनक्षतनिजतुरगमुखक्षरितेन क्षतजेनेव पाटलितवपुषि उच्चावचचूडामणौ अरुणकृकवाकुचूडारुणारुणपुरःसरे विरोचने नातिदूरवर्त्ती पितामहधामहंसकुलपालः पर्य्यटन् अपरवक्त्रम् उच्चैरगायत्

तरलयसि दृशं किमुत्सुकामकलुषमानसवासलालिते ।

अवतर कलहंसि वापिकां पुनरपि यास्यसि पङ्कजालयम् ॥

तच्छ्रुत्वा सरस्वती पुनरचिन्तयत् अहमिवानेन पर्य्यनुयुक्ता । भवतु मानयामि मुनेर्वचनम् (१४) इत्युक्त्वोत्थाय सततमशीतलावतरण-सङ्कल्पा परित्यज्य वियोगविक्लवं स्वपरिजनं ज्ञातिवर्गमवगणय्य अवगत्य त्रिः प्रदक्षिणीकृत्य चतुर्मुखं कथमप्यनुनयनिवर्त्तितानु-यायिव्रतिव्राता ब्रह्मलोकतः सावित्रीद्वितीया निर्जगाम ।

ततः क्रमेण ध्रुवप्रवृत्तां धर्म्मधेनुमिव अधोधावमानधवलपयो-धराम् उद्धुरध्वनिम् अन्धकमथनमौलिमालतीमालिकाम् आलीय-मानबालखिल्यवल्कलरोधसम् अरुन्धतीधौततारवत्वचं त्वक्तुङ्ग-तरङ्गतरलतरतारतारकां तापसवितीर्णतरलतिलोदकपुल-कितपुलिनाम् आप्लवनपूतपितामहपातितपितृपिण्डपाण्डुरितपारां पर्य्यन्तसुप्तसप्तर्षिकुशशयनसूचितसूर्य्यग्रहसूतकोपवासाम् आचमन-शुचिशचीपतिमुच्यमानार्च्चनकुसुमनिकरशारां शिवपुरपतित-निर्म्माल्यमन्दारदामकाम् अनादरदारितमन्दरदरीदृषदम् अनेक-नाकनायकनिकायकामिनीकुचकलशविलुलितविग्रहां ग्राहग्राव-ग्रामस्खलनमुखरितस्रोतसं सुफेनाप्लुतशशिसुधाशीकरस्तबक-तारकिततीरां धिषण्याग्निकार्य्यधूमधूसरितसैकतां सिद्धविरचित-वालुकालिङ्गलङ्घनत्रासविद्रुतविद्याधरां निर्मोकमुक्तिमिव गगनो-

(१४) मुनेर्वचनं मानयामि । १ । २ ।

रगस्य लीलाललाटिकामिव त्रिविष्टपविटस्य विक्रयवीथीमिव पुण्यपण्यस्य दत्तार्गलामिव नरकनगरद्वारस्य अंशुकोष्णीषपट्टिकाम् इव सुमेरुनृपस्य दुकूलकदलिकामिव कैलासकुञ्जरस्य पद्धतिम् इवापवर्गस्य नेमिमिव कृतयुगस्य सप्तसागरराजमहिषीं मन्दाकिनीमनुसरन्ती मर्त्यलोकमवततार अपरस्वर्गाम्बरतलस्थितैव हारम् इव वरुणस्य अमृतनिर्झरमिव चन्द्राचलस्य शशिमणिनिष्यन्दम् इव विन्ध्यस्य कर्पूरद्रुमद्रवप्रवाहमिव दण्डकारण्यस्य लावण्यरसप्रस्रवणमिव दिशां स्फाटिकशिलापट्टशयनमिवाम्बरश्रियः स्वच्छशिशिरसुरसवारिपूर्णं भगवतः पितामहस्यापत्यं हिरण्यवाहनामानं महानदं यं जनाः शोण इति कथयन्ति। दृष्ट्वा च तं रामणीयकहृतहृदया तस्यैव तीरे वासमरचयत् उवाच च सावित्रीं सखि मधुरमयूरविरुतयः कुसुमपांशुपटलसिकतिलतरुतलाः परिमलमत्तमधुपवेणीवीणारणितरमणीया रमयन्ति मां मन्दीकृतमन्दाकिनीद्युतेरस्य महानदस्योपकण्ठभूमयः पक्षपाति च हृदयम् अत्रैव स्थातुं मे इति। अभिनन्दितवचना च तथेति तया तस्य पश्चिमे तीरे समवातरत्। एकस्मिंश्च शुचौ शिलातलसनाथे तटलतामण्डपे गृहबुद्धिं बबन्ध। विश्रान्ता च नातिचिरादुत्थाय सावित्र्या सार्द्धम् उच्चितार्चनकुसुमा स्नात्वा पुलिनपृष्ठप्रतिष्ठितसैकतशिवलिङ्गा च भक्त्या परमया पञ्चब्रह्मपुरःसरां सम्यङ्मुद्राबन्धविहितपरिकरां ध्रुवागीतिगर्भाम् अवनिपवनवनगगनदहनतपनतुहिनकिरणयजमानमयीर्मूर्तीरष्टावपि ध्यायन्ती सुचिरमष्टपुष्पिकामदात् अयत्नोपनतेन फलमूलेन अमृतरसमप्यतिशिशयिषमाणेन च स्वादिम्ना शिशिरेण शोणवारिणा शरीरस्थितिम् अकरोत्। अतिवाहितदिवसा च तस्मिन् लतामण्डपशिलातले

कल्पितपल्लवशयना सुष्वाप। अन्येद्युरपि अनेनैव क्रमेण सकलदिनम् अत्यवाहयत्।

एवमतिक्रामत्सु दिवसेषु गच्छति च काले याममात्रोद्गते च रवौ उत्तरस्यां ककुभि प्रतिरवपूरितवनगह्वरं गम्भीरतारतरं तुरङ्गहेषितरवमशृणोत्। उपजातकुतूहला च निर्गत्य लतामण्डपाद्विलोकयन्ती विकचकेतकीगर्भपत्रपाण्डुरं रजःसङ्घातं मातरिश्वीयमिव सम्मुखमापतन्तमपश्यत्। क्रमेण च सामीप्योपजायमानाभिव्यक्ति तस्मिन् महति शफरोदरधूसरे रजसि पयसीव मकरचक्रं प्लवमानं, पुरः प्रधावमानेन प्रलम्बकुटिलकचपल्लवघटितललाटतटजूटकेन धवलदन्तपत्रिकाद्युतिधवलितकपोलभित्तिना पिनद्धकृष्णागुरुपङ्ककल्ककर्बुरबलशबलकषायकञ्चुकेन उत्तरीयकृतशिरोवेष्टनेन वामप्रकोष्ठनिविष्टस्फटिककटकेन द्विगुणपट्टपट्टिकागाढग्रन्थिग्रथितासिधेनुना अनवरतव्यायामकृतकर्कशशरीरेण वातहरिणयूथेनेव मुहुर्मुहुः अभ्युदीयमानेन कल्पितसमविषमातटविटपेन कोशधारिणा कृपाणपाणिना वेगावचितविविधवनकुसुमफलदलपर्णेन अत्र अत्र यामि यामि अपसर्पापसर्प पुरः प्रयच्छ पन्थानम् इत्यनवरतकृतकलकलेन युवप्रायेण सहस्रमात्रेण पदातिबलेन सनाथमश्ववृन्दं ददर्श मध्ये च तस्य सार्द्धचन्द्रेण मुक्ताफलजालमालिना विविधरत्नखण्डखचितेन शङ्खक्षीरफेनपाण्डुरेण क्षीरोदेनेव स्वयं लक्ष्मीं दातुमागतेन गगनगतेन आतपत्रेण कृतच्छायम् अच्छाच्छेनामरयुवतीनां निवहेन श्रियामिव दर्शनानुरागलग्नेन चक्रवालेनानुगम्यमानम् आनितम्बविलम्बिन्या मालतीशेखरस्रजा सकलभुवनविजयार्जितया रूपपताकयेव विराजमानम् उत्सर्पिभिः स्निग्धहरिद्गल्लिकापद्मरागमणिरचनैरंशुजालैः

उह्यमानवनदेवताविसृष्टैर्बालपल्लवैरिव प्रमृज्यमानमार्गरेणुपरुषवपुषं बकुलकुड्मलमण्डलीमुण्डमालामण्डनमनोहरेण कुटिलकुन्तलस्तबकमालिना मौलिना मौलितातपं पिबन्तमिव दिवसम् पशुपतिजटामुकुटमृगाङ्कद्वितीयशकलघटितस्येव सकललक्ष्मीसमालिङ्गितस्य ललाटपट्टस्य मनःशिलापङ्कपिङ्गलेन लावण्येन लिम्पन्तम् इवान्तरिक्षम् अभिनवयौवनारम्भावष्टम्भप्रगल्भदृष्टिपाततृणीकृतत्रिभुवनस्य चक्षुषः प्रथिम्ना विकचकुमुदकुवलयकमलसरःसहस्रसञ्छादितदशदिशं शरदमिव प्रवर्त्तयन्तम् आयतनयननदीसीमान्तसेतुबन्धेन ललाटतटशशिमणिशिलातलगलितेन कान्तिसलिलस्रोतसेव द्राघीयसा घोणावंशेन शोभमानम् अतिसुरभिसहकारकर्पूरकक्कोललवङ्गपारिजातकपरिमलमुचा मत्तमधुकरकुलकोलाहलमुखरेण मुखेन सनन्दनवनं वसन्तमिव वमन्तम् आसन्नसुहृत्परिहासभावनोत्तानितमुखमुग्धहसितैः दशनज्योत्स्नास्नपितदिङ्मुखैः पुनःपुनर्नभसि सञ्चारिणं चन्द्रालोकमिव कल्पयन्तं कदम्बमुकुलस्थूलमुक्ताफलयुगलमध्याध्यासितमरकतस्य त्रिकण्टककर्णाभरणस्य प्रेङ्खतः प्रभया समुत्सर्पन्त्या शातशरकुसुमहरितकुन्दपल्लवकर्णावतंसमिवोपलक्ष्यमाणम् आमोदितमृगमदपङ्कलिखितपत्रभङ्गभास्वरं भुजयुगलमुद्दाममकराक्रान्तशिखरमिव मकरकेतुकेतुदण्डद्वयं दधानं धवलब्रह्मसूत्रसीमन्तितं सागरमथनसामर्षगङ्गास्रोतःसन्दानितमिव मन्दरं देहमुद्वहन्तं कर्पूरक्षोदमुष्टिच्छुरणपांशुलेनेव कान्तोरुकुचचक्रवाकयुगलविपुलपुलिनेनोरःस्थलेन स्थूलभुजायामपुञ्जितं पुरो विस्तारयन्तमिव दिक्चक्रं पुरस्तादीषदधोनाभिनिहितैककोणकमनीयेन पृष्ठतः कक्ष्याधिकक्षिप्तपल्लवेनोभयतः सम्बलनप्रकटितोरुत्रिभागेन हारीतहरिता निबिडनिपीडितेन अधर

शालसा विमलमालतनुतरमश्चमानम् अनवरतश्रमोपचितमांस-
कठिनविकटमकरमुखसंलग्नजानुभ्यां विशालवक्षःस्थलोपलवेदिको-
त्तम्भनशिलास्तम्भाभ्यां चारुचन्दनस्थासकस्थूलकान्तिभ्याम् ऊरु-
दण्डाभ्यामुपहसन्तमिव ऐरावतकरायामम् अतिभरितोद्भार(१५)
वहनखेदेनेव तनुतरजङ्घाकाण्डे कल्पपादपपल्लवद्वयस्येव पाटलस्य
उभयपार्श्वावलम्बिनः पादद्वयस्य दोलायमानैर्नखमयूखैरश्वमण्डन-
चामरमालामिव रचयन्तम् अभिमुखमुच्चैश्चलद्भिरतिचिरमुपरि
विश्राम्यद्भिरिव वलितविकटं पतद्भिः खुरैः खण्डितभुवि प्रतिक्षण-
दशनविमुक्तक्षणक्षणायितखरखलीने दीर्घप्राणालीनलालिक-
ललाटलुलितचारुचामीकरचक्रके जिह्मानयातकौञ्चजयन-(१६)
शोभिनि मनोरंहसि गोलाङ्गूलकपोलकालकायशोणि नीलसिन्धु-
वारवर्णे वाजिनि मरुति समारूढम् उभयतः पर्याणपट्टश्लिष्ट-
हस्ताभ्यामासन्नपरिचारकाभ्यां दोधूयमानधवलचामरिकायुगलम्
अग्रतः पठतो वन्दिनः सुभाषितमुत्कण्टकितकपोलफलकेन लग्न-
कर्णोत्पलकेसरपक्ष्मशकलेनेव मुखशशिना भावयन्तम् अनङ्गयुगा-
यतारमिव दर्शयन्तं चन्द्रमयीमिव सृष्टिमुत्पादयन्तं विलासप्रायमिव
जीवलोकं जनयन्तम् अनुरागमयमिव सर्गान्तरमानयन्तं शृङ्गार-
मयमिव दिवसमापादयन्तं रागराज्यमिव प्रवर्तयन्तं आकर्षणा-
ञ्जनमिव चक्षुषोः वशीकरणमन्त्रमिव मनसः स्वस्थावेशचूर्णम्
इन्द्रियाणाम् असन्तोषमिव कौतुकस्य सिद्धयोगमिव सौभाग्यस्य
पुनर्जन्मदिवसमिव मन्मथस्य रसायनमिव यौवनस्य ऐकराज्यमिव
रामणीयकस्य कीर्तिस्तम्भमिव रूपस्य मूलकोशमिव लावण्यस्य
पुण्यकर्मपरिणाममिव संसारस्य प्रथमाङ्कुरमिव कान्तिलतायाः

(१५) अतिभरितोद्भागभर। १। २। ३।   (१६) यातकौञ्चायान। २। ३।

सर्गाभ्यासफलमिव प्रजापतेः प्रतापमिव विक्रमस्य यशःप्रवाहमिव वैदग्ध्यस्य अष्टादशवर्षदेशीयं युवानमद्राक्षीत् पार्श्वे च तस्य द्वितीयमपरसंश्लिष्ट (१७) तुरङ्गं प्रांशुमुत्तप्ततपनीयस्तम्भाकारं परिणतवयसमपि व्यायामकठिनकायं नीचनखश्मश्रुकचं शुक्तिखलतिम् ईषत्तुन्दिलं रोमशोरःस्थलम् अनुल्बणोदारवेशतया जरामपि विनयमिव शिक्षयन्तं गुणानपि गरिमाणमिवानयन्तं महानुभावतामपि शिष्यतामिवानयन्तम् आचारस्याचार्यकमिव कुर्वाणं धवलवारबाणधारिणं धौतदुकूलपट्टिकापरिवेष्टितमौलिं पुरुषम्।

अथ स युवा पुरोयायिनां यथादर्शनं प्रतिनिवृत्त्य विस्मितमनसां कथयतां पदातीनां सकाशादुपलभ्य दिव्याकृति तत् कन्यायुगलम् उपजातकुतूहलः प्रवर्णतुरगो दिदृक्षुः लतामण्डपोद्देशम् आजगाम दूरादेव च तुरगादवततार निवारितपरिजनश्च तेन द्वितीयेन साधुना सह चरणाभ्यामेव सविनयमुपससर्प। कृतोपसंग्रहणौ तौ सावित्री समं सरस्वत्या किसलयासनदानादिना सकुसुमफलार्घ्यावसानेन वनवासोचितेनातिथ्येन यथाक्रममुपजग्राह। आसीनयोश्च तयोरासीना (१८) नातिचिरमिव स्थित्वा तं द्वितीयं प्रथममुद्दिश्यावादीत् आर्य सहजलज्जाधनस्य प्रमदाजनस्य प्रथमाभिभाषणमशालीनता विशेषतो वनहरिणीमुग्धस्य कुलकुमारीजनस्य। केवलमियमालोकनकृतार्थाय चक्षुषे स्पृहयन्ती प्रेरयत्युदन्तश्रवणकुतूहलिनी श्रोत्रवृत्तिः। प्रथमदर्शने च उपायनमिवोपनयन्ति सज्जनाः (१९) प्रणयम्। अप्रगल्भमपि जनं प्रभवता प्रश्रयेणार्पितं मनो मध्विव वाचालयति। चंचलेनैव च

(१७) संसक्त। १।   (१८) आसीनयोस्तयोश्चासीना। १। २।

(१९) उपनयन्ति सज्जना। २।

प्रतिपन्ने साधौ धनुषीव गुणः परां कोटिमारोपयति विस्मयः। जनयन्ति च विस्मयमतिधीरधियामदृष्टपूर्वा दृश्यमाना जगति सृष्टेः रूपातिशयाः यत्त्रिभुवनाभिभावि रूपमिदमस्य महानुभावस्य। सौजन्यपरतन्त्रा चेयं देवानां प्रियस्यातिभद्रता कारयति कथां मां तु युवतिजने सहोत्था तरलता। तत् कथय आगमनेन कपुण्यभाक् कतमो विजृम्भितविरहव्यथः शून्यतां नीतो देशः। क्व वा गन्तव्यम्। कस्य चायमपहृतहरहुङ्काराहङ्कारोऽपर इव अनन्यजो युवा। किन्नाम्नः सञ्चिततपसः पितुरयमवतर्पी कौस्तुभमणिरिव हरेर्हृदयमाह्लादयति। का चास्य त्रिभुवननमस्या प्रभातसन्ध्येव महतस्तेजसो जननी। कानि वास्य पुण्यभाञ्जि भजन्त्यभिख्यामक्षराणि। पार्श्वपरिग्रामेऽप्ययमेव क्रमः कौतुकानुरोधिनो हृदयस्य।

इत्युक्तवत्यां तस्यां प्रकटितप्रश्रयोऽसौ प्रतिव्याजहार आयुष्मति सतां हि प्रियंवदता कुलविद्या। न केवलमाननं हृदयमपि च ते चन्द्रमयमिव सुधाशीकरशीतलैरानन्दयति वचोभिः। सौजन्यजन्मभूमयो भूयसा शुभेन सज्जननिर्माणशिल्पकला भवादृश्यो जायन्ते। दूरे तावदन्योन्यस्यालापनम् अभिजातैः सह दृष्टोऽपि मित्रीभूता महतीं भूमिमारोपयन्ति। श्रूयताम् अयं खलु भूषणं भार्गववंशस्य भगवतो भूर्भुवःस्वस्त्रितयतिलकस्य अद्भुतप्रभावस्तम्भितच्युतारिभुजस्तम्भस्य सुरासुरमुकुटमणिशिलाशयनदुर्ललितपादपङ्केरुहस्य(२०)निजतेजःप्रसरप्लुष्टपुलोम्नश्च्यवनस्य बहिश्चरं जीवितं दधीचो नाम तनयः। जनन्यस्य जितजगतोऽनेकपार्थिवसहस्रानुयातस्य शर्यातस्य सुता राजपुत्री त्रिभुवनकन्यारत्नं

२०) पादपङ्कजद्वयस्य । २ ।

सुकन्या नाम। तां खलु देवीमन्तर्वत्नीं विदित्वा वैजनने मासि प्रसवाय पिता पत्युः पार्श्वात् स्वगृहमानाययत्। असूत च सा तत्र देवी दीर्घायुषमेनम्। अनेहसावर्धत तत्रैवायम् (२१) आनन्दितज्ञातिवर्गो बालस्तारकराज इव राजीवलोचनो राजगृहे। भर्तृभवनमागच्छन्त्यामपि दुहितरि नासेचनकदर्शनमिमम् (२२) अमुञ्चन्मातामहो मनोविनोदनं नप्तारम्। अधिगतायं तत्रैव सर्वा विद्याः सकलाश्च कलाः।

कालेन चोपारूढयौवनमिममालोक्य अहमिव असावप्यनुभवतु मुखकमलावलोकनानन्दमस्येति मातामहः कथंकथमप्येनं पितुरन्तिकमधुना व्यसर्जयत्। मामपि तस्य देवस्य सुगृहीतनाम्नः शर्यातस्याज्ञाकारिणां विकुक्षिनामानं भृत्यपरमाणुमवधारयतु भवती। पितुः पादमूलमायान्तं मया साभिसारमकरोत् स्वामी। तद्धि नः कुलक्रमागतं राजकुलम्। उन्नमनाच्च चिरन्तनता जनयत्यनुजीविन्यपि जने कियन्मात्रमपि मन्दाक्षम्। अशेषः खलु दाक्षिण्यकोशो महताम्। इतश्च गव्यूतिमात्रमिव पारेशोणं तस्य भगवतश्च्यवनस्य स्वनाम्ना निर्मितव्यपदेशं च्यावनं नाम चैत्ररथकल्पं काननं निवासः। तदवधिश्चेयं नौ यात्रा। यदि च स्फीतमस्य दाक्षिण्यम् अनवलेपो वा हृदयमस्माकमुपरि भूमिर्वा प्रसादानामयं जनः श्रवणार्हो वा ततो न विमाननीयोऽयं नः प्रथमः प्रणयः कुतूहलस्य। एवमपि शुश्रूषवो वृत्तान्तमायुष्मत्योः। नेयमाकृतिर्दिव्यतां व्यभिचरति। गोत्रनामनी तु श्रोतुम् अभिलषति नौ हृदयम्। तत्कथय कतमो वंशः(२३) स्पृहणीयतां

(२१) अवर्द्धतानेहसा च तत्रायम्। १। २।

(२२) आसेचनकदर्शनमिम न। २।

(२३) देश। १।

जन्मना नीतः। का चेयमत्रभवती भवत्याः समीपे समवाय इव विरोधिनां पदार्थानाम्। तथाहि सन्निहितबालान्धकारा भास्वन्मूर्त्तिश्च पुण्डरीकमुखी हरिणलोचना च बालातपप्रभाधरा कुमुदहासिनी च कलहंसस्वना समुन्नतपयोधरा च कमलकोमलकरा हिमगिरिशिलापृथुनितम्बा च करभोरुर्विलम्बितगमना च अमुक्त-(२४)कुमारभावा स्निग्धतारका चेति।

सा त्ववादीत् आर्य्य श्रोष्यसि कालेन। भूयसो दिवसानत्र(२५) स्थातुमभिलषति नौ हृदयम्। अल्पीयांश्चायमध्वा। परिचय एव प्रकटीकरिष्यति। आर्य्येण न विस्मरणीयोऽयमनुषङ्गदृष्टो जन इत्यभिधाय तूष्णीमभूत्। दधीचस्तु नवाम्भोभरगम्भीराम्भो-धर(२६)ध्वाननिभया भारत्या नर्त्तयन् वनलताभवनभाजो भुजग-भुजः सुधीरमुवाच आर्य्ये करिष्यति प्रसादमार्य्या याराश्रमाना पश्यामस्तावत्तातम् उत्तिष्ठ व्रजाम इति। तथेति च तेनाभ्यनु-ज्ञातः शनकैश्चलाय कृतनमस्कृतिरश्वचाल। तुरगारूढं च तं प्रयान्तं सरस्वती सुचिरमुत्तम्भितपक्ष्मणा निश्चलतारकेण लिखि-तेनेव चक्षुषा व्यलोकयत्। उत्तीर्य्य शोणम् अचिरेणैव कालेन दधीचः पितुराश्रमपदं जगाम। गते च तस्मिन् सा तामेव दिशम् आलोकयन्ती सुचिरमतिष्ठत् लज्जादिव च सञ्चचार हृदयम्।

अथ मुहूर्त्तमिव स्थित्वा स्मृत्वा च तां तस्य रूपसम्पदं पुनः पुनर्व्वैक्लवतास्या हृदयम्। भूयोऽपि चक्षुराचकाङ्क्ष तद्दर्शनम्। अवशेव केनाप्यनीयत तामेव दिशं दृष्टिः। अप्रार्थितमपि मनस्तेनैव सार्द्धमगात्। अजायत च नवपल्लव इव बालवनलतायाः कुतोऽपि

अमुक्त। १। (२५) भूयसोऽपि दिवसानत्र स्थाने। २। ३।
(२६) नवाम्भोभारगम्भीराम्भोद। २।

अस्या अनुरागचेतसि। सालस्येव शून्येव सनिद्रेव दिवसमनयत्। अस्तमुपयाति च प्रत्यक्पर्य्यस्तमण्डले लाङ्गलिकास्तबकताम्रत्विषि कमलिनीकामुके कठोरसारसशिरःशोणशोचिषि सावित्रे त्रयीमये तेजसि तरुणतरतमालश्यामले च मलिनयति व्योम व्योमव्यापिनि तिमिरसञ्चये सञ्चरत्सिद्धसुन्दरीनूपुररवानुसारिणि च मन्दं मन्दं मन्दाकिनीहंस इव समुत्सर्पति शशिनि,(२७) गगनतलं कृतसन्ध्याप्रणामा निशामुख एव निपत्य विमुक्ताङ्गी पल्लवशयने तस्थौ। सावित्र्यपि कृत्वा यथाक्रियमाणं सायन्तनं क्रियाकलापम् उचिते शयनकाले किसलयशयनमभजत जातनिद्रा च सुष्वाप।

इतरा तु मुहुर्मुहुरङ्गवलनैर्विलुलितकिसलयशयनतला निमीलितलोचनापि नाभजत निद्राम् अचिन्तयच्च मर्त्त्यलोकः खलु सर्व्वलोकानामुपरि यस्मिन्नेवंविधानि सम्भवन्ति त्रिभुवनभूषणानि सकलगुणग्रामगुरूणि रत्नानि। तथाहि तस्य मुखलावण्यप्रवाहस्य निष्यन्दविन्दुरिन्दुः। तस्य च चक्षुषो विक्षेपा विकचकुमुदकुवलयकमलाकराः। तस्य चाधरमणेर्दीधितयो विकसितबन्धूकवनराजयः। तस्य चाङ्गस्य परभागोपकरणमनङ्गः। पुण्यभाञ्जि तानि चक्षूंषि चेतांसि यौवनानि वा स्त्रैणानि येषाम् असौ विषयो(२८) दर्शनस्य। अयं तु दर्शयता च तम् अन्यजन्मजनितेनेव(२९)मे फलितमधर्म्मेण। का प्रतिपत्तिरिदानीम्। इति चिन्तयन्त्येव कथंकथमप्युपजातनिद्रा चिरात् क्षणमशेत सुप्ता च तं(३०)दीर्घलोचनं ददर्श। स्वप्नासादितद्वितीयदर्शना च आकर्णाकृष्टकार्मुकेण मनसि निर्दयमताड्यत मकरकेतुना। प्रतिबुद्धाया

(२७) समुत्सर्पति शशिनि च। १। २। (२८) येषां विषयोऽसौ। १। २।
(२९) अन्यजन्मनि जनितेनैव। २। (३०) तमेव। २।

मदनशरताडितायाश्च(२१)तस्या वार्त्तामिवोपलब्धुमरतिराजगाम। तथाहि ततःप्रभृति कुसुमधूलिधवलाभिर्वनलताभिरताडितापि वेदनामधत्त। मन्दमन्दमारुतविधुतैः कुसुमरजोभिरदूषितलोचना अपि अश्रुजलं मुमोच। हंसपक्षतालवृन्तवातविततैः शोण-शीकरैरसिक्तापि आर्द्रतामगमत्। प्रेङ्खत्कादम्बमिथुनैरनूढापि अघूर्णत वनकमलिनीकल्लोलदोलाभिः। विघटमानचक्रवाकयुगल-विसृष्टैरस्पृष्टापि श्यामतामाससाद विरहनिश्वासधूमैः। पुष्प-धूलिधूसरैरदष्टापि व्यचेष्टत मधुकरकुलैः।

अथ गणरात्रापगमे निवर्त्तमानस्तेनैव वर्त्मना(२२) तं देशम् आगत्य तथैव निवारितपरिजनस्तलधारद्वितीयो विकुक्षिर्ढौके। सरस्वती तु तं दूरादेव सम्मुखमागच्छन्तं प्रीत्या सम्यक् समुत्थाय वनमृगीवोद्ग्रीवा विलोकयन्ती मार्गोपरि श्रान्तमस्नपयदिव धव-लितदशदिशा दृशा। कृतासनपरिग्रहन्तु तं प्रीत्या सावित्री पप्रच्छ आर्य्य कच्चित् कुशली कुमार इति। सोऽब्रवीत् आयुष्मति कुशली स्मरति च भवत्योः केवलममीषु दिवसेषु तनीयसीमिव तनुं बिभर्त्ति अविज्ञायमानां आनिमित्तां शून्यतामिवाधत्ते। अपिच अन्वक् समागमिष्यत्येव मालतीति नाम्ना वाणिनी वार्त्तां वो विज्ञातुम् उच्छ्वसितं सा कुमारस्येति। तच्छ्रुत्वा पुनरपि सावित्री समभाषत अतिमहानुभावः खलु कुमारो यदेवम्(२३) अविज्ञाय-माने अयदृष्टेऽपि जने परिचितिमनुबध्नाति। तस्य हि गच्छतो यदृच्छया कथमपि अंशुकमिव मार्गलतासु मानसमस्मासु मुहूर्त्तम् आसक्तमासीत्। अमूल्यं हि सौजन्यमाभिजात्येन वः स्वामि-

(२१) मदनशराहतायाश्च।१।२।

२२ पथा।१।२। (२३) यन्नैवम्।१।

सूनोः। अलसः खलु लोको यदेवं सुलभसौहार्द्दानि येन केनचिच्च क्रीणाति महतां मनांसि। सोऽयमौदार्य्यातिशयः कोऽपि महात्मनामितरजनदुर्लभो येनोपकरणीकुर्व्वन्ति त्रिभुवनमिति (३४)। विकुक्षिः(३५) उच्चावचैरालापैः सुचिरमिव स्थित्वा यथाभिलषितं देशमयासीत्।

अपरेद्युरुद्यति (३६) भगवति द्युमणावुद्दामद्युतावभिद्रुततारके तिरस्कृततमसि तामरस(३७)व्याकोश(३८)व्यसनिनि सहस्ररश्मौ शोणमुत्तीर्य्यायान्ती तरलदेहप्रभावितानच्छलेनात्यच्छं सकलं शोणसलिलमिवानयन्ती स्फुटितातिमुक्तककुसुमस्तवकसमत्विषि सटाले महति नगपताविव गौरी तुरङ्गमे स्थिता सलीलम् उरोभारोपितस्य तिर्य्यगुत्कर्णतुरगाकर्ण्यमाननूपुरपटुरणितस्य अतिबहलेन पिण्डालक्तकेन पल्लवितस्य कुङ्कुमपिञ्जरितपृष्ठस्य चरणयुगलस्य प्रसरद्भिरतिलोहितैः प्रभाप्रवाहैरुभयतस्ताडनदोहदलोभागतानि किसलयितानि रक्ताशोकवनानीवाकर्षयन्ती, सकलजीवलोकहृदयबठहरणघोषणयेव रशनया शिञ्जानजघनस्थला, धौतधवलनेत्रनिर्म्मितेन निर्मोकलघुतरेणाप्रपदीनेन कञ्चुकेन तिरोहिततनुलता स्नात (३९) कञ्चुकान्तरदृश्यमानैराश्यानचन्दनधवलैरवयवैः स्वच्छसलिलाभ्यन्तरविभाव्यमानमृणालकाण्डेव सरसी कुसुम्भरागपाटलं पुलकबन्ध (४०) चित्रं चण्डातकमन्तःस्फुटं स्फटिकभूमिरिव रत्ननिधानमादधाना हारेणामलकीफलनिस्तलमुक्ताफलेन स्फुरितस्थूलग्रहगणशारा शारदीव क्षतविरलजलधर-

(३४) त्रिभुवनमपीति। २। (३५) विकुक्षिश्च। २। ३।
(३६) उदिते। २। (३७) तामरसिनी। १
(३८) विकाश। १। २। (३९) तनु। १। (४०) पुलकबन्ध। १।

पटलावृता द्यौः कुचपूर्णकलशयोरुपरि रत्नप्रालम्बमालिकाम् अनवरतकिरणविसरवर्षिणीं कस्यापि पुण्यवतो हृदयप्रवेशवन-मालिकामिव (४१) वहन्तीं धारयन्ती, प्रकोष्ठनिविष्टस्य एकैकस्य (४२) हाटककटकस्य मरकतमकरवेदिकासनाथस्य हरितीकृतदिग-न्ताभिर्मयूखसन्ततिभिः स्थलकमलिनीभिरिव लक्ष्मीपक्षपातानु-गम्यमाना बहलताम्बूलकृष्णिकान्धकारितेनाधरसम्पुटेन सुधयाभि-षीतं ससन्ध्यारागं तिमिरमिव वमन्ती विकचनयनकुवलयकुतू-हलालीनया (४३) अलिकुलसंहत्या नीलांशुकजालिकयेव निरुद्धा-र्धवदना नीलीरागनिश्चितनीलिम्ना शितिगलशितिना वाम-श्रवणाश्रयिणा हस्तपल्लवेन कालमेघपल्लवेनेव विद्युदिव द्योतमाना बकुलफलानुकारिणीभिरतिस्थूलाभिर्मुक्ताभिः कल्पितेन बालिका-युगलेनाधोमुखेनालोकजलवर्षिणा सिञ्चन्तीवातिकोमले भुजलते दक्षिणकर्णावतंसितया केतकीगर्भपलाशलेखया रजनिकरजिह्वा-लतयेव लावण्यलोभेन लिह्यमानकपोलतला तमालश्यामलेन मृगमदामोदनिष्यन्दिना तिलकबिन्दुना मुद्रितमिव मनोभवसर्वस्वं वदनमुद्वहन्ती ललाटलासकस्य सीमन्तचुम्बिनश्चटुलातिलकमणेः उदयता चटुलेनांशुजालेन रक्तांशुकेनेव कृतशिरोऽवगुण्ठना पृष्ठ-प्रेङ्खदमादरसंयमनशिथिलजूटिकाबन्धा नीलचामरावचूलिनीव चूडामणिमकरिकासनाथा, मकरकेतुकेतुपताका कुलदेवतेव चन्द्रमसः पुनःसञ्जीवनौषधिरिव पुष्पधनुषः वेलेव रागसागरस्य ज्योत्स्नेव यौवनचन्द्रोदयस्य महानदीव रतिरसामृतस्य कुसुमो-द्गतिरिव सुरततरोः बालविद्येव वैदग्ध्यस्य कौमुदीव कान्तेः

(४१) बन्दनमालामिव । २ । (४२) एकैकस्य । १ । २ ।

(४३) कुतूहलानिलीयमानया । २ । १ ।

धृतिरिव धैर्य्यस्य गुरुशालेव गौरवस्य बीजभूमिरिव विनयस्य गोष्ठीव गुणानां मनस्वितेव महानुभावतायाः तृप्तिरिव तारुण्यस्य कुवलयदलदामदीर्घलोचनया पाटलाधरया कुन्दकुड्मलस्फटदशनया शिरीषमालासुकुमारभुजयुगलया कमलकोमलकरया बकुलसुरभि-निश्वसितया चम्पकावदाततया कुसुममय्येव ताम्बूलकरङ्कवाहिन्या महाप्रमाणाश्वतरारूढयानुगम्यमाना कतिपयपरिचारकपरिकरा मालती समदृश्यत। दूरादेव च दधीचप्रेम्णा सरस्वत्या लुण्ठितेव मनोरथैः आक्रष्टेव कुतूहलेन प्रत्युद्गतेवोत्कलिकाभिः आलिङ्गितेव उत्कण्ठया अन्तःप्रवेशितेव हृदयेन स्नपितेवानन्दाश्रुभिः विलुप्तेव स्मितेन वीजितेवोच्छ्वसितैः आच्छादितेव चक्षुषा अभ्यर्च्चितेव वदन-पुण्डरीकेण सखीकृतेवाशया सविधमुपययौ। अवतीर्य्य च तुर-गात् दूरादेवावनतेन मूर्ध्ना प्रणाममकरोत् आलिङ्गिता च ताभ्यां सविनयमुपाविशत्। सप्रश्रयं(४४)ताभ्यां सम्भाषिता च पुण्यभाजम् आत्मानममन्यत अकथयच्च दधीचसन्दिष्टं शिरसि विनिहितेन अञ्जलिना नमस्कारम् अपहृतञ्च आकारतः प्रभृति अग्राम्यतया तैस्तैरतिपेशलैरालापैः सावित्रीसरस्वत्योर्मनसी।

क्रमेण च अतीते मध्यन्दिनसमये शोणमवतीर्णायां सावित्र्यां स्नातुम् उत्सारितपरिजना साकूता मालती कुसुमप्रस्तरशायिनीं समुपसृत्य सरस्वतीमावभाषे देवि विज्ञाप्यं नः किञ्चिदस्ति रहसि अतो (४५) मुहूर्त्तमवधानदानेन प्रसादं क्रियमाणमिच्छामीति। सरस्वती तु दधीचसन्देशाशङ्किनी (४६) किं वक्ष्यतीति स्तनविनि-हितवामकरनखकिरणदन्तुरितम् उद्भिद्यमानकुतूहलाङ्कुरनिकरम्

(४४) सविनयं। २।
(४५) अतः। १। ३।
(४६) दधीचसन्देशशङ्किनी। ३।

इव हृदयमुत्तरीयदुकूलवल्कलैकदेशेन संछादयन्ती गलतावतंस-पल्लवेन श्रोतुं श्रवणेनेव धावमानेन अनवरतश्वाससन्दोहदोला-यितां जीविताशामिव समालम्बलतामवलम्बमाना समुत्सुकस्य कुसुमधन्विनो लावण्यप्रवाहेण शृङ्गाररसेनेव स्नापयन्ती जीवलोकं नवकुसुमपरिमलस्नातैर्मधुकरकदम्बकैः मदनानलदाहश्यामलैः मनोरथैरिव निर्गत्य मूर्त्तैरनुबध्यमाना कुसुमशयनीयात् स्मर-ज्वरसंज्वरिणी मन्दं मन्दमुदगात् उपांशु कथयेति कपोलतलप्रति-बिम्बितां लज्जयेव कर्णमूलं मालतीं प्रवेशयन्ती मधुरया गिरा सुधीरमुवाच सखि मालति किमर्थमेवमभिदधासि। काममव-धानदानस्य। शरीरस्य प्राणानां वा सर्व्वस्याप्रार्थितोऽपि प्रभवत्येव अतिपेशलचक्षुष्को जनः। सा न काचित् या न भवसि मे स्वसा सखी प्रणयिनी प्राणसमा च। नियुज्यतां यावतः कार्यस्य क्षमं क्षोदीयसो गरीयसो वा शरीरकमिदम्। अनवस्करमाश्रवं मे। त्वयि हृदयम्। प्रीत्या प्रतिसरा विधेयास्मि ते। व्याहरतु वर-वर्णिनि विवक्षितमिति।

सा त्वब्रवीत् देवि जानास्येव माधुर्यं विषयाणां लोलुपताञ्च इन्द्रियग्रामस्य (४७) उन्मादिताञ्च नवयौवनस्य पारिप्लवताञ्च मनसः। प्रख्यातैव मन्मथस्य दुर्निवारता। अतो न मामुपा-लम्भेनोपस्थातुमर्हसि। न च बालिशता चपलता चारणता वा वाचालतायाः कारणम्। न किञ्चिन्न कारयत्यसाधारणा स्वामि-भक्तिः। सा त्वं देवि यदैव दृष्टासि (४८) देवेन तत एवारभ्य अस्य कामो गुरुः चन्द्रमा जीवितेशः मलयमरुत् उच्छ्वासहेतुः आधयोऽन्तरङ्गस्थानेषु सन्तापः परमसुहृत् प्रजागर आप्तः मनो-

(४७) इन्द्रियवर्गस्य। २।

(४८) दृष्टा। १। २।

रथाः सर्व्वगताः निश्वासा विग्रहाग्रेसराः मृत्युः पार्श्ववर्त्ती रणरणकः सञ्चारकः सङ्कल्पा बुद्ध्युपदेशदक्षाः। किं वा विज्ञापयामि अनुरूपो देव्या इत्यात्मसम्भावना शीलवानिति प्रक्रमविरुद्धं धीर इत्यवस्थाविपरीतं सुभग इति त्वदायत्तं स्थिरप्रीतिः इति निपुणोपक्षेपः जानाति सेवितुमित्यस्वामिभावोचितम् इच्छति दासभावम् (४९) आमरणात् कर्त्तुमिति धूर्त्तालापः भवनस्वामिनी भवसीत्युपप्रलोभनं पुण्यभागिनी भजति भर्त्तारं तादृशमिति (५०) स्वामिपक्षपातः त्वं तस्य मृत्युरित्यप्रियम् अगुणज्ञासीत्यधिक्षेपः, स्वप्नेऽस्य बहुशः कृतप्रसादासीत्यसाक्षिकं प्राणरक्षार्थमर्थयत इति कातरता तत्रागम्यतामित्याज्ञा वारितोऽपि बलादागच्छतीति परिभवः तदेवमगोचरे गिरामसि इति श्रुत्वा देवी प्रमाणमित्यभिधाय तूष्णीमभूत्।

अथ सरस्वती प्रीतिविस्फारितेन चक्षुषा(५१)प्रत्यवादीत् अयि न शक्नोमि बहु भाषितुम् एषास्मि ते स्मितवादिनि वचसि स्थिता गृह्यन्तामम्मी प्राणा इति। मालती तु यदाज्ञापयसि अतिप्रसादः इति व्याहृत्य प्रहर्षपरवशा (५२) प्रणम्य प्रजविना तुरगेण ततार शोणम् अगाच्च दधीचमानेतुं च्यवनाश्रमपदम्। इतरा तु सखी-स्नेहेन सावित्रीमपि विदितवृत्तान्तामकरोत् उत्कण्ठाभारभृता च ताम्यता चेतसा कल्पायितं कथंकथमपि दिवसशेषमनैषीत्। अस्त-मुपगतवति(५३) भगवति गभस्तिमति स्तिमिततरमवतरति तमसि (५४) प्रहसितामिव सिता दिशं पौरन्दरीं दरीमिव केसरिणि

(४९) दासताम्। १। २।
(५०) तादृशं भर्त्तारमिति। २।
(५१) चक्षुषोपलक्षिता। १। २।
(५२) हर्षपरवशा। १। २।
(५३) अस्तमुपगते च। १।
(५४) अवतरति च तिमिरे। १। २।

ध्रुवति(५५) चन्द्रमसि सरस्वती शुचिनि चीनांशुकसुकुमारे(५६) तरङ्गिणि दुकूलकोमले शयन इव शोणसैकते समुपविष्टा समग्रतमार्धमापादपतनलग्नां दधीचचरणनखचन्द्रिकामिव ललाटिकां दधाना गण्डस्थलादर्शप्रतिबिम्बितेन चारुहासिनि चरमशापाङ्कितो हृदयदयितो(५७) जन इति श्रवणसमीपवर्त्तिना निवेद्यमानमदनसन्देशेनेवेन्दुना, विकीर्य्यमाणनखकिरणचक्रवालेन बालव्यजनीकृतचन्द्रकलाकलापेनेव करेण वीजयन्ती स्वेदिनं कपोलपट्टम्, अत्र दधीचादृते न केनचित् प्रवेष्टव्यमिति तिरश्चीनं चित्तभुवा पातित विलासवेत्रलतामिव बालमृणालिकामधिस्तनं स्तनयन्ती कथमपि हृदयेन वहन्ती प्रतिपालयामास। आसीच्चास्या मनसि धन्यमपि नाम सरस्वती यत्रामुना मनोजन्मना अनन्येव परवशीकृता तत्र का गणना इतरासु तपस्विनीष्वतितरलासु तरुणीष्विति।

आजगाम च मधुमास इव सुरभिगन्धवाहः हंस इव कृतमृणालधृतिः शिखण्डीव घनप्रीत्युन्मुखः मलयानिल इव आहितसरसचन्दनधवलिततनुलतोत्कम्पः कृष्यमाण इव कृतकरकचग्रहेण ग्रहपतिना, प्रेर्य्यमाण इव कन्दर्पोद्दीपनदक्षेण दक्षिणानिलेन, उह्यमान इवोत्कलिकाबहुलेन, रतिरसेन, परिमलसम्पातिना मधुपपटलेन पटेनेव नीलेनाच्छादिताङ्गयष्टिः अन्तःस्फुरता मत्तमदनकरिकर्ण(५८) शङ्खायमानेन प्रतिमेन्दुना प्रथमसमागमविलासविलक्षस्मितेनेव धवलीक्रियमाणैककपोलोदरो मालतीद्वितीयो दधीचः। आगत्य च हृदयगतदयितानूपुररवमिश्रयेव हंसगद्गदया गिरा कृतसम्भाषणो यथा मन्मथः समाज्ञापयति यथा यौवनमुप-

(५५) उदञ्चति। १। २। (५६) सुकुमारतरे। १।

(५७) अतिदयितः। २। १। (५८) मदनमत्तकरिकर्ण। २। १।

द्यति यथानुरागः शिक्षयति यथा विदग्धतामापयति तथा तामभिरामां रामामरमयत्। उपजातविस्रम्भा च आत्मानमकथयदस्य सरस्वती। तया तु सार्द्धम् एकं दिवसमिवानयत् संवत्सरमधिकम्।

अथ दैवयोगात् सरस्वती बभार गर्भम् असूत चानेहसा सर्व्वलक्षणाभिरामं तनयम्। तस्मै च जातमात्रायैव सम्यक् सरहस्याः सर्व्वे वेदाः सर्व्वाणि च शास्त्राणि सकलाश्च कलाः (५८) मत्प्रसादात् स्वयमाविर्भविष्यन्तीति वरमदात्। सद्भर्तृश्लाघया दर्शयितुमिव हृदयेनादाय दधीचं पितामहादेशात् समं सावित्र्या ब्रह्मलोकमारुरोह (६०)। गतायाञ्च तस्यां दधीचोऽपि हृदये ह्लादिन्येवाभिहतो भार्गववंशसम्भूतस्य भ्रातुर्ब्राह्मणस्य जायाम् अक्षमालाभिधानां मुनिकन्यकाम् आत्मसूनोः संवर्धनाय नियुज्य विरहातुरस्तपसे वनमगात्। यस्मिन्नेवावसरे सरस्वत्यसूत तनयं तस्मिन्नेवाक्षमालापि सुतं प्रसूतवती। तौ तु सा निर्व्विशेषं सामान्यस्तन्या शनैः शनैः शिशू समवर्धयत्। एकस्तयोः सारस्वताख्य एवाभवत् द्वितीयोऽपि वत्सनामाभवत्। आसीच्च तयोः सोदर्य्ययोरिव स्पृहणीया प्रीतिः।

अथ सारस्वतो मातुर्महिम्ना यौवनारम्भ एवाविर्भूताशेषविद्यासम्भारस्तस्मिन् सवयसि भ्रातरि प्रेयसि प्राणसमे सुहृदि वत्से वाङ्मयं समस्तमेव सञ्चारयामास चकार च कृतदारपरिग्रहस्यास्य तस्मिन्नेव प्रदेशे प्रीत्या प्रीतिकूटनामानं निवासम् आत्मनापि आषाढी कृष्णाजिनी वल्कली अक्षवलयी मेखली जटी च भूत्वा तपस्यतो जनयितुरेव जगामान्तिकम्।

(५८) कलाविद्याः।१।२।१। (६०) ब्रह्मलोकमेमारुरोह।२।१।

अथ तस्मात् प्रवर्तमानादिपुरुषजनितात्मचरणोदकातिनिर्गत-प्रवाहः परमेश्वरशिरोधृतः सकलकलागमगम्भीरः महामुनिमान्यो विपक्षक्षोभक्षमः क्षितितलख्यातिः अस्खलितप्रसरो भागीरथी-प्रवाह इव पावनः प्रावर्तत विपुलो वंशः। यस्मादजायन्त वात्स्या-यना नाम गृहमुनयः आश्रितश्रौता अपि अनालम्बिताखिलवक-काकवः, कृतकुक्कुटव्रता अपि अवैडालवृत्तयः, विवर्जितजनपङ्क्तयः(६१) परिहृतकपटकौरकुचीकूर्चाकूताः अस्पृष्टीतगह्वराः न्यक्कृतनिकृतयः प्रसन्नप्रकृतयः विगत-(६२) विकृतयः परपरिवादपराचीनचेतसो वर्णत्रयव्यावृत्तिविशुद्धान्धसो धीरधिषणाविधूताध्येषणा असङ्कसुक-स्वभावाः प्रणतप्रणयिनः शमितसमस्तशाखान्तरसंशीतयः उद्घाटित-समग्र-(६३) ग्रन्थार्थग्रन्थयः कवयो वाग्मिनो विमत्सराः सरस-भाषित-(६४) व्यसनिनो विदग्धपरिहासवेदिनः परिचयपेशला नृत्यगीतवादित्रेष्वबाह्या ऐतिह्यस्याविततृष्णाः सानुक्रोशाः सत्य-शुचयः साधुसम्मताः सर्वसत्त्वसौहार्दद्रवार्द्रहृदयाः तथा सर्व-गुणोपेता राजसेनानभिभूताः क्षमाभाजः आश्रितनन्दना अनि-न्द्यस्वभावा विद्याधरा अजडाः कलावन्तः अदोषाकराश्च अपरोप-तापिनो भास्वन्तः अहुताशा होतारः अकुहकयो भोगिनः अभुजङ्गाः पुण्यालयाः अलुप्तक्रतुक्रिया दक्षाः अव्यालाः कामजितः अद्वावारणा द्विजातयः।

तेषु चैवमुत्पद्यमानेषु संसरति संसारे यात्सु युगेषु अवतीर्णे कलौ वहत्सु वत्सरेषु व्रजत्सु वासरेषु अतिक्रामति च काले प्रसव-परम्पराभिरनवरतमापतति विकाशिनि वात्स्यायनकुले क्रमेण

(६१) विवर्जितजनहृत्तय:। १। (६२) विकृत। २।

(६३) समस्त। १। (६४) सरसमाभाषित। २।

कुबेरनामा वैनतेय इव गुरुपक्षपाती द्विजो जन्म लेभे। तस्याभवन् अच्युत ईशानो हरः पाशुपतश्चेति चत्वारो युगारम्भा इव ब्रह्मतेजोजन्यमानप्रजाविस्तारा नारायणबाहुदण्डा इव सच्चक्रनन्दकासनयाः। तत्र पाशुपतस्यैक एवाभवद्भूभार इवाचलकुलस्थितिश्चतुरुदधिगम्भीरोऽर्थपतिरिति नाम्ना समग्राग्रजन्मचक्रचूडामणिर्महात्मा सूनुः। सोऽजनयत् भृगुं हंसं शुचिं कविं महीदत्तं धर्मं जातवेदसं चित्रभानुं त्र्यक्षम् अहिदत्तं विश्वरूपञ्च इत्येकादश रुद्रानिव सोमामृतरसशीकरच्छुरितमुखान् पवित्रान् पुत्रान्। अलभत च चित्रभानुस्तेषां मध्ये राजदेव्यभिधानायां ब्राह्मण्यां बाणमात्मजम्। स बाल एव विधेर्बलवतो वशात् उपसम्पन्नया व्ययुज्यत जनन्या। जातस्नेहस्तु नितरां पितैवास्य मातृताम् अकरोत्। अवर्धत च तेनाधिकतरमेधीयमानधृतिः धाम्नि निजे।

कृतोपनयनादिक्रियाकलापस्य समावृत्तस्य चतुर्दशवर्षदेशीयस्य(६५) पितापि श्रुतिस्मृतिविहितं कृत्वा द्विजजनोचितं निखिलं पुण्यजातं कालेनादशमीस्थ एवास्तमगात् (६६)। संस्थिते च पितरि महता शोकेनाभीलमनुप्राप्तो दिवानिशं दह्यमानहृदयः कथंकथमपि कतिपयान् दिवसानात्मगृह एवानैषीत्। गते च विरलतां शोके शनैः शनैः अविनयनिदानतया स्वातन्त्र्यस्य कुतूहलबहुलतया च बालभावस्य धैर्यप्रतिपक्षतया च यौवनारम्भस्य शैशवोचितान्यनेकानि चापलान्याचरन्नित्वरो बभूव। अभवंश्चास्य वयसा समानाः सुहृदः सहायाश्च तथाच भ्रातरौ पारशवौ चन्द्रसेनमातृषेणौ भाषाकविरीशानः परं मित्रम् प्रणयिनौ रुद्रनारा-

(६५) चतुर्दशवर्षीयस्य। २। (६६) अस्तमगमत्। २।

यणौ विद्वांसौ वारबाणवासबाणौ वर्णकविर्वेणीभारत: प्राकृतकृत् कुलपुत्रो वायुविकार: बन्दिनावनङ्गबाणसूचीबाणौ कात्यायनिका चक्रवाकिका जाङ्गुलिको मयूरक: ताम्बूलदायकश्चण्डक: भिषक्पुत्रो मन्दारक: पुस्तकवाचक: सुदृष्टि: कलादश्चामीकर: हैरिक: सिन्धुषेण: लेखको गोविन्दक: चित्रकृत् वीरवर्म्मा पुस्तकृत् कुमारदत्त: मार्दङ्गिको जीमूत: गायनौ सोमिल(६७)ग्रहादित्यौ सैरन्ध्री कुरङ्गिका वांशिकौ मधुकरपारावतौ गान्धर्वोपाध्यायो दर्दुरक: संवाहिका केरलिका लासकयुवा ताण्डविक: आक्षिक आखण्डल: कितवो भीमक: शैलालियुवा शिखण्डक: नर्त्तकी हरिणिका(६८) पाराशरी सुमति: क्षपणको वीरदेव: कथको जयसेन: शैवो वक्रघोण: मन्त्रसाधक: कराल: असुरविवरव्यसनी लोहिताक्ष: धातुवादविद् विहङ्गम: दार्दुरिको दामोदर: ऐन्द्रजालिकश्चकोराक्ष: मस्करी ताम्रचूड:। स एतैश्चान्यैश्चानुगम्यमानो (६९) बालतया निघ्नतामुपगतो देशान्तरालोकनकौतुकाक्षिप्त(७०)हृदय: सत्स्वपि पितृपितामहोपात्तेषु ब्राह्मणजनोचितेषु विभवेषु सति च अविच्छिन्ने विद्याप्रसङ्गे गृहान्निरगात् अगाच्च निरवग्रहो ग्रहवानिव नवयौवनेन स्वैरिणा मनसा महतामुपहास्यताम्।

अथ शनै: शनैरत्युदारव्यवहृतिमनोहन्ति बृहन्ति राजकुलानि वीक्षमाणो निरवद्यविद्याविद्योतितानि च गुरुकुलानि सेवमानो महार्हालापगम्भीरगुणवद्गोष्ठीश्चोपतिष्ठमान: स्वभावगम्भीरधीधनानि विदग्धमण्डलानि च गाहमान: पुनरपि तामेव

(६७) सोमल।२। (६८) हरिणिका।१।२।

(६९) एतैरन्यैरननुगम्यमान:।१।२। (७०) कौतूहलाक्षिप्त।२।

वैपश्चितीमात्मवंशोचितां प्रकृतिमभजत्। महतश्च कालात् तामेव भूयो वात्स्यायनवंशाश्रयामात्मनो जन्मभुवं ब्राह्मणाधिवासमगमत् (७१)। तत्र च चिरदर्शनादभिनवीभूतस्नेहसद्भावैः ससम्भ्रमप्रकटितज्ञातेयैराप्तैरुत्सवदिवस इवानन्दिताभ्यागमनो (७२) बालमित्रमण्डलस्य मध्यगतो मोक्षसुखमिवान्वभवत्।

इति श्रीबाणभट्टकृतौ हर्षचरिते वात्स्यायनवंशवर्णनं नाम
प्रथम उच्छ्वासः।

(७१) अभजत्। २। (७२) आनन्दिताभिगमनः। १। ३।

द्वितीय उच्छ्वासः।

अतिगम्भीरे भूपे कूप इव जनस्य निरवतारस्य।
दधति समीहितसिद्धिं गुणवन्तः पार्थिवा घटकाः॥
रागिणि नलिने लक्ष्मीं दिवसो निदधाति दिनकरप्रभवाम्।
अनपेक्षितगुणदोषः परोपकारः सतां व्यसनम्॥

अथ तत्र अनवरताध्ययनध्वनिमुखराणि भस्मपुण्ड्रकपाण्डुरललाटैः कपिलशिखाजालजटिलैः कृशानुभिरिव कृतलोभागतैः बटुभिरध्यास्यमानानि सेकसुकुमारसोमकेदारिकाहरितायमानप्रघणानि कृष्णाजिनविकीर्णशुष्यत्पुरोडाशीयश्यामाकतण्डुलानि बालिकाविकीर्यमाणनीवारबलीनि शुचिशिष्यशतानीयमानहरितकुशपूलीपलाशसमिन्धि इन्धनगोमयपिण्डकूटसङ्कटानि आमिक्षीयक्षीरक्षारिणीनामग्निहोत्रधेनूनां खुरवलयैर्विलिखिताजिरवितर्दिकानि कामण्डलव्यमृत्पिण्डमर्दनव्यग्रयतिजनानि वैतानवेदीकृत्यानामौडुम्बरीणां शाखानां राशिभिः पवित्रितपर्यन्तानि वैश्वदेवपिण्डपङ्क्तिपाण्डुरितप्रदेशानि हविर्धूमधूसरिताङ्गनविटपिकिसलयानि वत्सीय बालक लालित ललत्तरल तर्णकानि क्रीडत्कृष्णसारच्छागशावकप्रकटितपशुबन्धप्रबन्धानि (१) शुकशारिकारब्धाध्ययनदीयमानोपाध्यायविश्रान्तिसुखानि साक्षात्त्रयीतपोवनानीव चिरदृष्टानां बान्धवानां प्रीयमाणो भ्रमन् भवनानि सुखमतिष्ठत्।

(१) प्रबन्धनानि।१।

ततस्तस्य चास्य कदाचित् कुसुमसमययुगमुपसंहरन्नजृम्भत ग्रीष्माभिधानः संफुल्लमल्लिकाधवलाट्टहासो महाकालः। प्रत्यग्रनिर्जितस्यास्तमुपगतवतो वसन्तसामन्तस्य बालापत्येष्विव पयःपायिषु नवोद्यानेषु दर्शितस्नेहो बहुरभूत्। अभिनवोदितश्च सर्व्वस्यां पृथिव्यां सकलकुसुमबन्धनमोक्षमकरोत् प्रतपन्नुष्णसमयः। स्वयम् ऋतुराजस्याभिषेकार्द्रोश्चामरकलापा इवाम्लायन्त कामिनीनां चिकुरचयाः कुसुमायुधेन। हिमदग्धसकलकमलिनीकोपेन इव हिमालयाभिमुखीं यात्रामदादंशुमाली।

अथ ललाटन्तपे तपति तपने लिखितललाटिकापुण्ड्रकैरलकचीरचीवरसंवीतैः स्वेदोदबिन्दुमुक्ताक्षवलयवाहिभिर्दिनकराराधननियमा इवाम्लायन्त ललनाललाटेन्दुभिः। चन्दनधूसराभिरसूर्य्यंपश्याभिः कुमुदिनीभिरिव दिवसमसुप्यत सुन्दरीभिः। निद्रालसा रत्नालोकमपि नासहन्त दृशः किमुत जरठमातपम्। अशिशिरसमयेन चक्रवाकमिथुनाभिनन्दिताः सरित इव तनिमानमानीयन्त सोष्मपाः शर्व्वर्य्यः। अभिनवपटुपाटलामोदसुरभिपरिमलं न केवलं जलं जनस्य पवनस्य पवनमपि पातुमभूदभिलाषो दिवसकरसन्तापात्।

क्रमेण च खरखरमयूखे (२) खण्डितशैशवे (३) शुष्यत्सरसि सीदत्स्रोतसि मन्दनिर्झरे झिल्लीकाझाङ्कारिणि कातरकपोतकूजितानुबन्धबधिरितविश्वे विश्वस्यतपक्षिणि करीषङ्कषमरुति विरलवीरुधि रुधिरकुङ्कुमकेसरिकिशोरकलिह्यमानकठोरधातकीस्तबके ताम्यत्स्तम्बेरमयूथवमथुतिम्यन्महामहीधरनितम्बे दूयमानद्विरददीनदानाध्मानध्यामिकालीनधूकमधुलिहि शोषितावभाव-

(२) खरखगमयूखे। ४। (३) खण्डिततरुच्छैशवे। १। २।

मन्दारसिन्दूरितसीम्नि सलिलस्यन्दसन्दोहसन्देहलुब्धमुग्धश्याममहिष-विषाणकोटिविलिख्यमानस्फुटत्स्फाटिकदृषदि घर्मघर्घरितमरुति मसृणपांशुकुकूलजालतरविकिरे विवरशरणशय्याविधि सटार्जुनकुरर-कूटाम्बरविवर्त्तमानोत्तानशफरशारपक्षपोषपल्वलाम्भसि दावजनित-जगज्जीराजने रजनीराजयक्ष्मणि कठोरीभवति निदाघकाले प्रति-दिशमाटीकमाना दूर्वोर्वरेषु प्रपावाटकुटीपटलप्रकटलुण्ठकाः प्रपक्व-कपिकच्छूगुच्छच्छटाच्छोटनचापलैरकाण्डकण्डूला इव वायवः शर्करिलाः कर्करस्थलीः स्थूलदृषच्चूर्णमुषो मुचुकुन्दकान्दलदलन-दन्तुराः समन्ततः पतन्मुर्मुरचीरीगणमुखशीकरशीर्य्यमाणतनवः तरलतरतरणितापतरले तरन्त इव तरङ्गिणि मृगतृष्णिका-तरङ्गिणीनामलीकवारिणि शुष्यच्छमीमर्म्मरमारवमार्गलङ्घन-लाघवजवजङ्घालाः रैणवावर्त्तमण्डलीरेचकरासरसरभसारब्ध-नर्त्तनारम्भारभटीनटाः दावदग्धस्थलीमषीमलनमलिनाः शिथिल-चपलचक्रच्छत्र इव वनमयूरपिच्छचयानुस्त्रिम्पन्तः सप्रयाणगुञ्जा इव भिद्यमानजरत्करञ्जमञ्जरीबीजजालकैः सप्रकोपा इव आतपातुर-वनमहिषनासानिकुञ्जस्थूलनिश्वासैः सापत्या इव उड्डीयमान-जवनवातहरिणपरिपाटीपेटकैः सभ्रुकुटय इव दह्यमानखलधान-कुटकूटकुटिलधूमकोटिभिः सापोचिपोपय इव मशोषशुक्तिभिः लोलया इव शीर्य्यमाणशाल्मलिफलतूलतन्तुभिः दद्रुला इव शुष्क-फलप्रकराटोटिभिः शिराला इव लतावेणीविकिरणैः उच्छूम्ब इव धूयमानमयवभूकशकलशङ्कुभिः दंष्ट्राला इव चलितयक्ष-सूचीशतैः जिह्वाला इव वैश्वानरशिखाभिः उत्सर्पत्सर्पकञ्चुक-चूडालाः प्रग्रासस्मरसाभ्यवहरणाय कवलग्रहमिवोष्माणः कमल-मधुभिरभ्यस्यन्तः सकलसलिलोच्छोषघर्मघोषणापटहैरिव शुष्क-

वेणुवनास्फोटनपटुरवैस्त्रिभुवनविभीषिकामुद्भावयन्त: च्युतचल-चापपक्षश्रेणीशारितद्युतय: त्रिपिमयूखलतालातशोषकल्माष-वपुष इव स्फुटितगुञ्जाफलस्फुलिङ्गाङ्गाराङ्किताङ्गा: गिरिगुहा-गम्भीरझङ्कारभीषणभ्रान्तयो भुवनभस्मीकरणाभिचारचरुपचन-चतुरा रुधिराकृतिभिरिव पारिभद्रद्रुमस्तवकदृष्टिभिस्तर्पयन्त: तारवान् वनविभावसून् अशिशिरसिकतातारकितरंहस: तप्त-शैलविलीयमानशिलाजतुरसलवलिप्तदिश: दावदहनपच्यमान चटकाण्डखण्डखचिततरुकोटरकीटपटलपुटपाकगन्धकटव: प्रा-वर्त्तन्त उन्मत्ता मातरिश्वान:।

सर्व्वतश्च भूरिभस्मासहस्रसन्धुक्षणादुभिता इव जरदजगर-गम्भीरगलगुहायाश्चिवायव: क्वचित् स्वच्छन्दतृणचारिणो हरिणा: क्वचित्तरुतलविवरविवर्त्तिनो बभ्रव: क्वचिज्जटावलम्बिन: कपिला: क्वचिच्छकुनकुलकुलायपातिन: श्येना: क्वचिद्विलीनलाक्षारस-लोहितच्छवयोऽधरा: क्वचिदासादितशकुनिपक्षक्षतपटुगतयो विशिखा: क्वचिद्गगनि.शेषजन्महेतवो निर्व्वाणा: क्वचित् कुसुम-वासिताम्बरसुरभयो रागिण: क्वचित् सधूमोद्गारा मन्दरुचय: क्वचित् सकलजगद्ग्रासघस्मरा: सभस्मका: क्वचित् वेणुशिखरलग्न-मूर्त्तयोऽत्यन्तदृष्टा: क्वचिदचलोपयुक्तशिलाजतव: क्षयिण: क्वचित् सर्व्वरस(४)भुज: पीवान: क्वचित् दग्धगुग्गुलवो रौद्रा: क्वचित् ज्वलितनेत्रदहनदग्धसकुसुमशरमदना: क्षतस्थाणुस्थितय: चटुल-शिखामत्तमारम्भारभटीनटा: शुष्ककासारद्युतिभि: स्फटकीरस-नीवारवीजलाजवर्षिभि: ज्वालाञ्जलिभिरर्च्चयन्त इव वर्म्मदृष्टिम् यष्टया इव हठहूयमानकठोरस्थलकमठवसाविस्रगन्धसद्भव: सप्तपि

(४) सर्व्वाग्निरस।१।

धूमसम्भोदसम्भूतिभियेव भक्षयन्तः सतिलाङ्कतय इव स्फुटत्स्थल-बालकीटपटलाः कक्ष्येषु क्षिप्तविषा इव शोषविघटद्वल्कलधवलशम्बूक-शुक्तयः शुष्केषु सरस्सु स्वेदिन इव विलीयमानमधुपटलगोलगलित-मधूच्छिष्टदृष्टयः काननेषु स्खलतय इव परिशीर्य्यमाणशिखासंहतयो महीधरेषु ग्टहीतशिलाकवला इव ज्वलितसूर्य्यमणि(५)शकलेषु शिलोच्चयेषु प्रत्यहमदृश्यन्त दारुणा दावाग्नयः ।

तथाभूते च तस्मिन्नत्युग्रे ग्रीष्मसमये कदाचिदस्य स्वग्टहाव-स्थितस्य भुक्तवतोऽपराह्णसमये भ्राता पारशवश्चन्द्रसेननामा प्रविश्याकथयत् एष खलु देवदेवस्य चतुःसमुद्राधिपतेः सकलराज-चक्रचूडामणिश्रेणीशाणकोणनिर्म्मलीकृतचरणनखमणेः सर्व्वचक्र-वर्त्तिनां धौरेयस्य महाराजाधिराजपरमेश्वरश्रीहर्षदेवस्य भ्राता कृष्णनाम्ना भवतामन्तिकं प्रज्ञाततमो दीर्घाध्वगः प्रहितो द्वार-मध्यास्ते इति। सोऽब्रवीत् आयुष्मन् अविलम्बितं प्रवेशयैनमिति।

अथ तेनानीयमानमतिदूरगमनगुरुजङ्घाजडं कार्द्दमिकचेल-चीरिकानियमितोच्चण्डचण्डातकं पृष्ठप्रेङ्खत्पटच्चरकर्पटघटित-गलितग्रन्थिम् अतिनिविडसूत्रबन्धनिम्नितान्तरालकृतव्यवच्छेदया लेखमालिकया परिकलितमूर्द्धानं प्रविशन्तं लेखहारकमद्राक्षीत् अप्राक्षीच्च दूरादेव भद्र भद्रमशेषभुवननिष्कारणबन्धोस्तत्रभवतः कृष्णस्येति। स भद्रमित्युक्त्वा प्रणम्यातिदूरे समुपाविशत् विश्रान्त-श्चाब्रवीत् एष खलु स्वामिनो माननीयस्य लेखः प्रहित इति विमुच्यार्पयत्। अथ बाणः सादरं ग्टहीत्वा स्वयमेवावाचयत् मेखलकात् सन्दिष्टमवधार्य्य फलप्रतिबन्धी धीमद्भिरपहरणीयः कालातिपात इति एतावदस्मार्थजातम् इतरत् वार्त्तासंवादनमात्रकम्। अवधृत-

५) ज्वलितमणि । २ । १ ।

लेखार्थश्च समुत्सारितपरिजन: सन्देशं दृष्टवान् । मेखलकश्चवादीत् एवमाह मेधाविनं स्वामी जानात्येव मान्य: यथैकगोत्रता वा समानजातिता वा समं संवर्द्धनं वा एकदेशनिवासो वा दर्शनाभ्यासो वा परस्परानुरागश्रवणं वा परोक्षोपकारकरणं वा समानशीलता वा स्नेहस्य हेतव: त्वयि तु विना कारणेनादृष्टेऽपि प्रत्यासन्ने बन्धाविव बद्धपक्षपातं किमपि स्निह्यति मे हृदयम् दूरस्थेऽपीन्दोरिव कुमुदाकरे। भवन्तमन्तरेणान्यथा चक्रवर्त्ती दुर्जनैर्ग्राहित आसीत् न च तत्तथा। न सन्त्येव ते येषां सतामपि सतां न विद्यन्ते मित्रोदासीनशत्रव:। शिशुचापलापराचीनचित्त(१)वृत्तितया च भवत: केनचिदसहिष्णुना यत् किञ्चित् असदृशमुदीरितम्। इतरो लोकस्तथैव तत् गृह्णाति वक्ति च। सलिलानीव गतानुगतिकानि लोलानि खलु भवन्त्यविवेकिना मनांसि। बहुमुखश्रवणानिश्चलीकृतनिश्चय: किं करोतु पृथिवीपति:। तस्मान्नैविभिरस्माभिर्दूरस्थितोऽपि प्रत्यक्षीकृतोऽसि। विज्ञप्तश्चक्रवर्त्ती त्वदर्थम् यथा प्रायेण प्रथमे वयसि सर्व्वस्यैव चापलै: शैशवमपराध्नोति। तथेति प्रतिपन्नं स्वामिना। अतो भवता राजकुलमकृतकालक्षेपमागन्तव्यम्। अवकेशीवादृष्टपरमेश्वरो बन्धुमध्यमधिवसन् नासि मे बहुमत: न च सेवावैषम्यविषादिना वा परमेश्वरोपसर्पणभीरुणा भवता भवितव्यम् यतो यद्यपि

स्वेच्छोपजातविषयोऽपि न याति वक्तुं
देहीति मार्गणशतैश्च ददाति दु:खम्।
मोहात् समाक्षिपति जीवनमप्यकाण्डे
कष्टं मनोभव इवेश्वरदुर्व्विदग्ध:॥

(१) चेत:। ४।

तथापि अन्ये ते भूपतयः अन्य एवायं न्यक्कृतनृगनलनिषधनहुषाम्बरीषदशरथदिलीपनाभागभरतभगीरथययातिरचरितमयः स्वामी। नास्याहङ्कारकालकूटविषदिग्धदुष्टा दृष्टयः न गर्व्वगुरुगरगलग्रहगद्गदा(७)गिरः नातिप्रयोगापस्मारविस्मृतस्थैर्य्याणि स्थानकानि मोहामदर्पदाहज्वरवेगविक्लवा विकाराः नाभिमानमहासन्निपातनिर्म्मिताङ्गभङ्गानि गतानि न मदार्हितबकोलतौष्ठनिष्ठ्यूतनिष्ठुराक्षराणि जल्पितानि तथाच अस्य विमलेषु साधुषु रत्नबुद्धिः न शिलाशकलेषु मुक्ताधवलेषु गुणेषु प्रसाधनधीः नाभरणभारेषु दानवत्सु कर्म्मसु साधनश्रद्धा न करिकीटेषु सर्व्वाग्रेसरे यशसि महाप्रीतिः न जीवितहरत्तृणे स्फीतकरास्वाद्यासु प्रसाधनताभियोगः न निजकुलतनयम्पुत्तिकासु गुणवति धनुषि सहायबुद्धिः न पिण्डोपजीविनि सेवकजने। अपिच अस्य मित्रोपकरणमात्मा भृत्योपकरणं प्रभुत्वम् पण्डितोपकरणं वैदग्ध्यम् बान्धवोपकरणं लक्ष्मीः कृपणोपकरणमैश्वर्य्यं द्विजोपकरणं सर्व्वस्वं सुकृतसंस्मरणोपकरणं हृदयं धर्म्मोपकरणमायुः साहसोपकरणं शरीरम् असिलतोपकरणं पृथिवी विनोदोपकरणं राजकम् प्रतापोपकरणं प्रतिपक्षः। नास्याल्पपुण्यैरवाप्यते सर्व्वातिशायिसुखरसप्रसूतिः पादपल्लवच्छायेति। श्रुत्वा च तमेव चन्द्रसेनं समादिशत् इतः कृष्णपुं विश्रान्तसुखिनमेनं कारयेति।

अथ गते च तस्मिन् पर्य्यस्ते च वासरे संघट्टमानरक्तपङ्कजसम्पुटपीयमान इव रविबिम्बे क्षामतां व्रजति शालवायसास्वादवर्णे अपराह्णातपे शिञ्जितनिजवाजिजवे जपापीडपाटले अस्ताचलशिखरस्खलिते स्खलतीव कमलिनीकण्टकक्षतपादपल्लवे पतङ्गे पुरः

(७) गर्वगद्गुरुगरगलग्रहगद्गदा ।१।

परापतति प्रेङ्खदन्धकारलेशशबलके शशिविरहशोकश्याम इव श्यामामुखे कृतसन्ध्योपासनः शयनीयमगात् अचिन्तयच्चैकाकी किं करोमि अन्यथा सम्भावितोऽस्मि राज्ञा निर्निमित्तबन्धुना च सन्दिष्टमेवं कृष्णेन कष्टा च सेवा विषमञ्च भृत्यत्वम् अतिगम्भीरं महद्राजकुलम् न च तत्र मे (८) पूर्व्वजप्रवर्त्तिता प्रीतिः न कुलक्रमागता गतिः नोपकारस्मरणानुरोधः न बालसेवास्नेहः न गोत्रगौरवम् न पूर्व्वदर्शनदाक्षिण्यम् न प्रज्ञासंविभागोपप्रलोभनम् न विद्यातिशयकुतूहलम् नाकारसौन्दर्य्यादरः न सेवाकाकुकौशलम् न विद्वद्गोष्ठीबन्धवैदग्ध्यम् न वित्तव्ययवशीकरणम् न राजवल्लभपरिचयः। अवश्यं गन्तव्यम् सर्व्वथा भगवान् पुरारातिर्भुवनगुरुर्गतस्य मे सर्व्वं साम्प्रतमाचरिष्यतीत्यवधार्य्य गमनाय मतिमकरोत्।

अथान्यस्मिन्नहन्युत्थाय प्रातरेव स्नात्वा धृतधवलदुकूलवासा गृहीताक्षमालः प्रास्थानिकानि सूक्तानि मन्त्रपदानि च बहुशः समावर्त्त्य देवदेवस्य विरूपाक्षस्य क्षीरस्नपनपुरःसरां सुरभिकुसुमधूपगन्धध्वजबलिविलेपनप्रदीपकबहुलां विधाय पूजां परमया भक्त्या प्रथमकृततरलतिलत्रिचटचटनचटुलमुखरशिखाशेखरं प्राज्याज्याहुतिप्रवर्द्धितदक्षिणार्च्चिषं भगवन्तमाशुशुक्षणिं कृत्वा दत्त्वा द्युम्नं यथाविद्यमानं द्विजेभ्यः प्रदक्षिणीकृत्य प्राङ्मुखीं नैचिकीं शुक्लाङ्गरागः शुक्लमाल्यः शुक्लवासा रोचनाचित्रदूर्व्वाग्रपल्लवग्रथितगिरिकर्णिकाकुसुमकृतकर्णपूरः शिखासक्तसिद्धार्थकः पितुः कनीयसा स्वस्रा मात्रेव स्नेहार्द्रहृदयया श्वेतवाससा साक्षादिव भगवत्या महाश्वेतया मालत्याख्यया कृतसकलगमनमङ्गलो दत्ता-

(८ मम मे तत्र २ २।

शीर्व्वादो बान्धववृद्धाभिः अभिनन्दितः परिजनजरतीभिः वन्दित-चरणैरनुज्ञातो गुरुभिः अभिवादितैः(९)आघ्रातः शिरसि कुल-वृद्धैः वर्द्धितगमनोत्साहः शकुनैः मौहूर्त्तिकमतेन कृतगमनदोहदः शोभने मुहूर्त्ते हरितगोमयोपलिप्ताजिरस्थण्डिलस्थापितमसितेतर-कुसुममालापरिक्षिप्तकण्ठं पिष्टपञ्चाङ्गुलपाण्डुरं मुखनिहित-(१०)नवचूतपल्लवं पूर्णकलसमुदीक्षमाणः प्रणम्य कुलदेवताभ्यः कुसुम-फलपाणिभिरप्रतिरथं जपद्भिर्निजद्विजैरनुगम्यमानः प्रथमचलित-दक्षिणचरणः प्रीतिकूटान्निरगात्।

प्रथमेऽहनि घर्म्मकालकष्टं निरुदकं निम्नतपादपविषमं पथिक-जननमस्क्रियमाणप्रवेशपादपोत्कीर्णकात्यायनीप्रतियातनं शुष्कम् अपि पल्लवितमिव तृषितश्वापदकुललम्बितलोलजिह्वालतासहस्रैः पुलकितमिव अच्छभल्ल-(११)गोलाङ्गूललिह्यमानमधुगोलचलित-सरघासङ्घातैः रोमाञ्चितमिव दग्धस्थलीरूढस्थूलाभीरुकन्दशतैः शनैश्चण्डिकाकाननमतिक्रम्य मल्लकूटनामानं ग्राममगात्। तत्र च हृदयनिर्व्विशेषेण भ्राता सुहृदा च जगत्पतिनाम्ना सम्पादित-सपर्य्यः सुखमवसत्। अथापरेद्युरुत्तीर्य्य भगवतीं भागीरथीं यष्टिगृहकनाम्नि वनग्रामके निशामनयत्। अन्यस्मिन् दिवसे स्कन्धावारमुपमणितारम् अजिरवति कृतसन्निवेशमाससाद। अतिष्ठच्च नातिदूरे (१२) राजभवनस्य।

निर्व्वर्त्तितस्नानाशनव्यतिकरो विश्रान्तश्च मेखलकेन सह याममात्रावशेषे दिवसे भुक्तवति भूभुजि प्रख्यातानां क्षितिभुजां बहून् शिबिरसन्निवेशान् वीक्षमाणः शनैः शनैः पट्टबन्धावसुध-

(९) अभिनन्दितैः। २। २।　　(१०) मुखविनिहित। १।

(११) शुष्क। २।　　(१२) अतिष्ठच्चानतिदूरे। १। २।

स्थापितैश्च डिण्डिमाधिरोहणायाहृतैश्च अभिनवबद्धैश्च विक्षेपोपार्जितैश्च कौशलिकागतैश्च (१३) नागवीथीपालप्रेषितैश्च प्रथमदर्शनकुतूहलोपनीतैश्च दूतसम्प्रेषणप्रेषितैश्च पल्लीपरिवृढढौकितैश्च स्वेच्छारब्धक्रीडाकेलिकाकारितैश्च दीयमानैश्चाच्छिद्यमानैश्च मुच्यमानैश्च यामस्थापितैश्च सर्व्वद्वीपविजिगीषया गिरिभिरिव सागरसेतुबन्धनार्थम् (१४) एकीकृतैः ध्वजपटपटुपटहशङ्खचामराङ्गरागरमणीयैः पुण्याभिषेकदिवसैरिव कल्पितैर्व्वारणेन्द्रैः श्यामायमानम् अनवरतचलितखुरपुटप्रहतम्हदङ्गैर्न्नर्त्तयद्भिरिव राजलक्ष्मीम् उपहसद्भिरिव स्वकपुटप्रहतफेनाट्टहासेन जवजडजङ्घां हरिणजातिम् आकारयद्भिरिव सङ्कटहेतोः हर्षहेषितेनोच्चैःश्रवसम् उत्पतद्भिरिव दिवसकररथतुरगतृषा पद्मायमाणमण्डनचामरमालैर्गगनतलं तुरङ्गैः तरङ्गायमानम् अन्यत्र प्रेषितैश्च प्रेष्यमाणैश्च प्रेषितप्रतीपनिवृत्तैश्च अश्वयोजनगमनगणन(१५)सङ्ख्याक्षरावलीभिरिव वराटिकावलीभिः घटितमुखमण्डनकैः तारकितैरिव सन्ध्यातपच्छेदैरवणचामरिकारचितकर्णपूरैः सरक्तोत्पलैरिव रक्तशालिशालेयैरनवरतझणझणायमानचारुचामीकरघुर्घुरकमालिकैः जरत्कारभवनैरिव रणितशुष्कबीजकोशीशतैः श्रवणोपान्तप्रेङ्खत्पञ्चरागवर्णोर्णाचित्रसूत्रकूटजटाजालैः कपिकपोलकपिलैः क्रमेलककुलैः कपिलायमानम् अन्यत्र शरज्जलधरैरिव सद्यःस्नुतपयःपटलधवलतनुभिः कल्पपादपैरिव मुक्ताफलजालकजायमानालोकलुप्तच्छायामण्डलैः नारायणनाभिपुण्डरीकैरिवाश्लिष्टगण्डपद्मैः क्षीरोदोदधैरिव द्योतमानविकटविद्रुमदण्डैः शेषफणाफलकैरिवोपरिस्फुरत्स्फीत-

(१३) कौशलिकोपागतैश्च। १। (१४) सागरसेतुबन्धार्थम्। २।

(१५) गणना। १।

माणिक्यखण्डैः श्वेतगङ्गापुलिनैरिव राजहंसोपसेवितैः अभि-
भवद्भिरिव निदाघसमयम् उपहसद्भिरिव विवस्वतः प्रतापम् आ-
पिबद्भिरिवातपं चन्द्रलोकमयमिव जीवलोकं जनयद्भिः कुमुदमयम्
इव कालं कुर्वद्भिः ज्योत्स्नामयमिव वासरं विरचयद्भिः फेनमयीमिव
दिवं दर्शयद्भिः अकालकौमुदीसहस्राणीव सृजद्भिः उपहसद्भिरिव
शातक्रतवीं श्रियं श्वेतायमानैरातपत्रषण्डैः श्वेतद्वीपायमानम्
क्षणादृष्टनष्टाष्टदिङ्मुखम् मुष्णद्भिरिव भुवनम् आक्षेपोत्क्षेपदोलायितं
दिनं गतागतानीव कारयद्भिः उत्सारयद्भिरिव कृतान्त(१६)कलङ्क-
कालीं कालेयीं स्थितिम् विकचविषदकाशवनपाण्डरदिशं शरत्-
समयमिवोपपादयद्भि(१७) बिसतन्तुमयमिवान्तरिक्षमाविर्भावयद्भिः
शशिकरशुचीनां चलतां चामराणां सहस्रैर्दोलायमानम्, अपिच
हंसयूथायमानं करिकर्णशङ्खैः कल्पलतावनायमानं कदलिकाभिः
माणिक्यहलकवनायमानं मायूरातपत्रैः मन्दाकिनीप्रवाहायमाणा-
मंशुकैः क्षीरोदायमानं क्षौमैः कदलीवनायमानं मरकतमयूखैः
जन्यमानान्यदिवसमिव पद्मरागबालातपैः उत्पद्यमानापराम्बरम्
इवेन्द्रनीलप्रभापटलैः आरभ्यमाणापूर्वनिशमिव महानील-
मयूखान्धकारैः स्यन्दमानानेककालिन्दीसहस्रमिव गरुडमणिप्रभा-
प्रतानैः अङ्गारकितमिव पुष्परागरश्मिभिः कैश्चित् प्रवेशमलभमानैः
अधोमुखैश्चरणनखपतितवदनप्रतिबिम्बनिभेन लज्जया क्ष्माङ्गानीव
विशद्भिः कैश्चिदङ्गुलीलिखितायाः क्षितेर्विकीर्यमाणकरनखकिरण-
कदम्बकच्छलेन सेवाचामराणीव अर्पयद्भिः कैश्चिदुरःस्थलदोलाय-
मानेन्द्रनीलतरलप्रभापट्टैः स्वामिप्रकोपप्रशमनाय कण्ठबद्धकृपाण-
पट्टैरिव कैश्चिदुच्छ्वाससौरभभ्राम्यद्भ्रमरपटलान्धकारितमुखैरपहृत

(१६) कन्दर्प। १। (१७) उत्पादयद्भिः। १।

लक्ष्मीशोकहतलब्धग्रहश्रुभिरिव अन्यैः (१८) शेखरोड्डीयमानमधुप-मण्डलैः प्रणामविडम्बमानमयपलायमानमौलिभिरिव निर्जितैरपि सम्मानितैरिव अनन्यशरणैः अन्तरान्तरा निष्पततां प्रविशताञ्च अन्तरप्रतीहाराणामनुमार्गप्रधावितानेकार्थिजनसहस्राणाम् अनु-यायिनः पुरुषानन्यान्तैः पुनः पुनः पृच्छद्भिः भद्र अद्य भविष्यति भुक्त्वा स्थाने दास्यति दर्शनं परमेश्वरः निष्पतिष्यति वा बाह्यां कक्ष्यामिति दर्शनाशया दिवसं नयद्भिः भुजनिर्जितैः शत्रुमहा-सामन्तैः समन्तादासेव्यमानम् अन्यैश्च प्रतापानुरागागतैः नाना-देशजैर्महीपालैः (१९) प्रतिपालयद्भिर्नरपतिदर्शनकालमध्यास्य-मानम् एकान्तोपविष्टैश्च (२०) जैनैरार्हतैः पाशुपतैः पाराशरिभिः वर्णिभिश्च सर्व्वदेशजन्मभिश्च जनपदैः सर्व्वाम्भोधिवेलावनवलय-वासिभिश्च म्लेच्छजातिभिः सर्व्वदेशान्तरागतैश्च (२१) दूतमण्डलैः उपास्यमानं सर्व्वप्रजानिर्म्माणभूमिमिव प्रजापतीनां लोकत्रयसारो-च्चयरचितं चतुर्थमिव लोकं महाभारतशतैरप्यकथनीयसद्धि-सम्भारं कृतयुगसहस्रैरिव कल्पितसन्निवेशं स्वर्गार्बुदैरिव विहित-रामणीयकं राजलक्ष्मीकोटिभिरिव कृतपरिग्रहं राजद्वारमगात्।

अभवञ्चास्य जातविस्मयस्य(२२) मनसि कथमिवेदमियत्प्रमाणं प्राणिजातं जनयतां प्रजासृजां नासीन्महाभूतानां वा परिक्षयः परमाणूनां वा परिच्छेदः कालस्य वा अन्तः आयुषो वा उपरमः आकृतीनां वा परिसमाप्तिरिति। मेखलकस्तु दूरादेव द्वारपाल-लोकेन प्रत्यभिज्ञायमानः तिष्ठतु तावत् क्षणमात्रमत्रैव पुण्य-भागीति तमभिधायाप्रतिहतः पुरः प्राविशत्।

(१८) अन्यैश्च। १। (१९) महामहीपालैः। १।

(२०) एकान्तोपविष्टैः। १। २। (२१) सर्व्वद्वीपान्तरागतैश्च। २। १।

(२२) अभवञ्चाथ जात विस्मयोऽस्य। १।

अथ स मुहूर्तादिव प्रांशुना कर्णिकारगौरेण नीलकञ्चुकच्छन्न-वपुषा समुन्मिषन्माणिक्यपदकबन्धबन्धुरशस्त्रबन्धहृद्यावलम्बेन (२३) हिमशैलशिलाविशालवक्षसा शरद्वृषककुदकूटविकटांसतटेनोरसा चपलहृषीकहरिणकुलसंयमनपाशमिव हारं बिभ्रता कथयतं यदि सोमवंशसम्भवः सूर्यवंशसम्भवो वा भूपतिरभूदेवंविध इति प्रष्टुमा-गताभ्यां सोमसूर्याभ्यामिव (२४) श्रवणागताभ्यां मणिकुण्डलाभ्यां समुल्लासमानेन वदनलावण्यविसरवेणिकाक्षिप्यमाणैरधिकार-गौरवाहूयमानमार्गेणेव दिनकृतः किरणैः (२५) प्रसादलब्धया विकचपुण्डरीकमुण्डमालिकयेव दीर्घया दृशा दूरादेवानन्दयता नैष्ठुर्याधिष्ठानेऽपि प्रतिष्ठितेन पदे प्रश्रयमिवायमन्वेण मौलिना पाण्डुरमुष्णीषमुद्वहता वामेन स्थूलमुक्ताफलच्छुरणादन्तुरत्सरु कर-किसलयेन कलयता कृपाणम् इतरेणापनीततरलतां ताडितामिव लतां शातकौम्भीं वेत्रयष्टिमुन्मृष्टां धारयता पुरुषेणानुगम्यमानो निर्गत्यावोचत् एष खलु महाप्रतीहाराणामनन्तरश्चक्षुष्यो देवस्य पारियात्रनामा दौवारिकः समनुष्ठास्वेनमनुरूपया प्रतिपत्त्या कल्याणाभिनिवेशीति। दौवारिकः समुपसृत्य (२६) कृतप्रणामो मधुरया गिरा सविनयमभाषत आगच्छत प्रविशत दर्शनाय कृत-प्रसादो देव इति। बाणस्तु धन्योऽस्मि यद्देवमनुग्राह्यं मां देवो मन्यते इत्युक्त्वा तेनोपदिश्यमानमार्गः प्राविशदभ्यन्तरम्।

अथ वनायुजैरारट्टजैः काम्बोजैः (२७) भारद्वाजैः सिन्धु-देशजैः पारसीकैश्च शोणैश्च श्यामैश्च श्वेतैश्च पिञ्जरैश्च हरिद्भिश्च

(२३) शस्त्रबन्धप्रावलम्बेन। २। ३। (२४) सूर्यसोमाभ्यामिव। २। ३
(२५) दिनकरकिरणैः। ३। (२६) दौवारिकस्तु तमुपसृत्य। १। २।
(२७) काम्बोजैरारट्टजैः। ३।

तित्तिरिकल्माषैश्च पञ्चभद्रैश्च मल्लिकाक्षैश्च कृत्तिकापिञ्जरैश्चायत-निर्मांसमुखैरनुत्कटकर्णकोषैः सुवृत्तश्लक्ष्णसुघटितघण्टिकाबन्धैः यूपानुपूर्व्वीविकायतोदग्रग्रीवैः उपचयच्छयत्स्कन्धसन्धिभिर्निर्भुग्नोरः-स्थलैः अस्थूलप्रगुणप्रहृतैर्लोहपीठकठिनखुरमण्डलैरतिजवलुटन-भयादनिर्म्मितान्त्राणीवोदराणि वृत्तानि धारयद्भिः उद्यच्छ्रोणी-विभज्यमानपृथुजघनैर्जगतीदोलायमानबालपल्लवैः कथमप्युभयतो निखातदृढभूरिपाशसंयमननियन्त्रितैरायतैरपि पश्चात् पाशबन्ध-प्रसारितैकाङ्घ्रिभिरायततरैरिवोपलक्ष्यमाणैः वक्रगुणस्थूलग्रथित-ग्रीवागण्डकैरामीललोचनैः दूर्व्वारसश्यामलफेनलवशबलान् दशन-ग्टहीतमुक्तान् फरफरितत्वचः कण्डूजुषः प्रतीकान् प्रचालयद्भिः सालसवलितबालधिभिः एकशफविश्रान्तिस्रस्तशिथिलितजघनार्द्धैः निद्रया प्रध्यायद्भिश्च स्खलितहुङ्कारमन्दमन्दशब्दायमानैश्च ताड़ित खुरधारणीरणितमुखरशिखरखुरलिखितक्ष्मातलैर्घासमभिलषद्भिश्च प्रकीर्य्यमाणयवसग्रासरसमत्सरोद्भूतक्षोभैश्च प्रकुपितचण्डचण्डाल-हुङ्कारकातरतरतरलतारकैश्च कुङ्कुमप्रवृष्टिपिञ्जराङ्गतया सतत-सन्निहितनीराजनानलरज्यमाणैरिव उपरिविततवितानैः पुरः-पूजिताभिमतदेवतैः भूपालवल्लभैस्तुरङ्गैराचितां मन्दुरां विलोकयन् कुतूहलाक्षिप्तहृदयः किञ्चिदन्तरमतिक्रान्तो दलवामेन अत्युच्चतया निरवकाशमिवाकाशं कुर्व्वाणं महता कदलीवनेन परिवृतपर्य्यन्तं सर्व्वतो मधुकरमयीभिर्मदस्रुतिभिर्नदीभिरिवापतन्तीभिरापूर्य्य-माणम् आशासुखविसर्पिणा वकुलवनानामिव विकसतामामोदेन लिम्पन्तं घ्राणेन्द्रियं दूराद्व्यक्तम् इभधिष्ण्यागारमपश्यत् अपृच्छच्च यत्र देवः किं करोतीति। असावकथयत् एष खलु देवस्यौपवाह्यो बाह्यं हृदयं आत्मन्तरित आत्मा वहिश्चराः प्राणाः

विक्रमक्रीडासुहृत् दर्पशात इति यथार्थनामा वारणपतिः तस्याव-स्थानमण्डपोऽयं महान् दृश्यत इति । स तमवादीत् भद्र ! श्रूयते दर्पशातः यद्येवमदोषो वा पश्यामि तावद्वारणेन्द्रमेव अतोऽर्हसि मामत्र प्रापयितुम् अतिपरवानस्मि कुतूहलेनेति । सोऽभाषत भवत्वेवम् आगच्छतु भवान् को दोषः पश्यतु तावद्वारणेन्द्रमिति ।

गत्वा च तं प्रदेशं दूरादेव गम्भीरगलगर्जितोर्जितैर्वियति चातककदम्बकैर्भुवि च भवननीलकण्ठकुलैः कलकेकाकलकलमुखर-मुखैः क्रियमाणकलकोलाहलं विकचकदम्बसंवादिमदसुरासौरभ-भरितभुवनं कायवन्तमिवाकालमेघकालम् अविरलमधुबिन्दुपिङ्गल-पद्मजालकितां सरसीमिवाभ्यवगाढां(२८) दशां चतुर्थीमुद्वहन्तम् अनवरतमवतंसशङ्खैरामन्द्रक्वणितालवृन्दध्वनिभिः पञ्चमोपदेश-मङ्गलारम्भमिव गायन्तम् (२९) अविरतचलनचित्रलिपदोलित-लाङ्गूलयैर्दोलायमानदीर्घदेहाभोगतया मेदिनीविदलनभयेन भारमिव लघयन्तं दिग्भित्तितटेषु कायमिव कण्डूयमानम् आह्वाय उदस्तहस्ततया दिग्वारणानिवाह्वयमानं ब्रह्मस्तम्भमिव स्थूल निशितदन्तेन करपत्रेण पाटयन्तम् अमान्तं भुवनाभ्यन्तरे बहिः इव निर्गन्तुमीहमानं सर्व्वतः सरसकिसलयलताशाखिभिर्लम्बिकैः चिरपरिचयोपचितैर्वनैरिव विशिष्टसम्बलविस्तविसरशवलसलिलैः सरोभिरिव च आधोरणैराधीयमाननिदाघसमयसमुचितोपचारा-नन्दम् अपिच प्रतिगजदानपवनादामदूरात्च्छिन्नेन अनेकसमर-विजयगणनालेखाभिरिव वलिवलयराजिभिरुपनीयसीभिरुपरचितो-दरेणातिस्थवीयसा हस्तार्गलदण्डेन अर्गलयन्तमिव सकलं सकुल-शैलसमुद्रद्वीपकाननं ककुभां चक्रवालम् एकं करान्तरार्पितेन

(२८) अभ्यवगाढाम् । २ । ३ । (२९) गायनतम् । २ ।

उत्पलाशेन कदलीदण्डेन अन्तर्गतशीकरसिच्यमानमूलं मुक्तपल्लवम् इव अपरं लीलावलम्बिना मृणालजालकेन (३०) समररसोद्भूतरोमाञ्चकण्टकितमिव दन्तकाण्डं वहन्तम् विसर्पन्त्या च दन्तकाण्डयुगलकस्य(३१) कान्त्या सरःक्रीडास्वादितानीव कुमुदवनानि बहुधा वमन्तं निजयशोराशिमिव दिशामपर्यन्तं कुकरिकीटपाटनदुर्ललिताम् (३२) सिंहानिवोपहसन्तं कल्पद्रुमदुकूलमुखपटमिव चात्मनः कलयन्तं(३३)हस्तकाण्डदण्डोद्धरणलीलासु च लक्ष्यमाणेन रक्तांशुकसुकुमारतलेन (३४) तालुना कवलितानि रक्तपद्मवनानि इव वर्षन्तम् अभिनवकिसलयराशीनिवोद्गिरन्तं कमलकवलपीतं मधुरसमिव स्वभावपिङ्गलेन वमन्तं चक्षुषा चूतचम्पकलवलीलवङ्गकङ्कोलवल्येलालतामिश्रितानि सहकाराणि कर्पूरपूरपूरितानि पारिजातकवनानीव उपभुक्तानि पुरः करटाभ्यां बहलमदामोदव्याजेन विसृजन्तम् अहर्निशं विभ्रमकृतहस्तस्थितिभिरवखण्डितपुण्ड्रेक्षुकाण्डकण्डूयनलिखितैः अलिकुलवाचालितैर्दानपट्टकैर्विलभमानमिव सर्वकाननानि करिपतीनाम् (३५) अविरलोदबिन्दुस्यन्दिना हिमशिलाशकलमयेन विभ्रमनक्षत्रमालागुणेन शिशिरीक्रियमाणं सकलवारणेन्द्राधिपत्यपट्टबन्धबन्धुरम् इवोच्चैस्तरां शिरो दधानं मुहुर्मुहुः स्थगितापाङ्गतदिङ्मुखाभ्यां कर्णतालतालवृन्ताभ्यां वीजयन्तमिव भर्तृभक्त्या दन्तपर्यङ्किकास्थितां राजलक्ष्मीम् आयतवंशक्रमागतेन गजाधिपत्यचिह्नेन चामरेणेव चलता बालधिना विराजमानं (३६) स्वच्छशिशिरशीकरच्छलेन

(३०) मृणालजालेन । २ ।
(३१) दन्तकाण्डयुगलस्य । २ ।
(३२) दुर्विदग्धान् । १ । २ ।
(३३) कल्पयन्तम् । १ ।
(३४) सुकुमारतरेण । २ । ३ ।
(३५) सर्वकरिपतीनाम् । १ ।
(३६) राजमानम् । २ । ३ ।

दिग्विजयपीताः सरित इव पुनः पुनर्मुखेन मुञ्चन्तं प्रयाणप्र-
धानदाननिस्यन्दीकृतसकलावयवानामन्यद्विरदडिण्डिमाकर्णनाकु-
लानामन्ते दीर्घसूत्कारैः (३७) परिभवदुःखमिवावेदयन्तम्
अलब्धयुद्धमिवात्मानमनुशोचन्तम् आरोहाधिरूढिपरिभवेण लज्ज-
मानमिवाङ्गुलीविक्षिप्तमशीतलं मदं मुञ्चन्तम् अवज्ञाटवीतमुक्त-
कवलकुपितारोहारटनानुरोधेन मदतन्द्रीनिमीलितनेत्रत्रिभागं
कथं कथमपि मन्दमन्दमनादरादाददानं कवलान् अवजग्धतमाल-
पल्लवस्नुतश्यामलरसेन प्रभूततया मदप्रवाहमिव मुखेनाप्युत्सृजन्तं
दलन्तमिव दर्पेण ग्रसन्तमिव शौर्येण मूर्च्छन्तमिव मदेन लुभ्यन्त-
मिव तारुण्येन द्रवन्तमिव दानेन वलान्तमिव बलेन माद्यन्तमिव
मानेन उद्यन्तमिवोत्साहेन ताम्यन्तमिव तेजसा लिम्पन्तमिव
लावण्येन सिञ्चन्तमिव सौभाग्येन स्निग्धं नखेषु परुषं रोमविषये
गुरुं मुखे सच्छिष्यं विनये लघुं शिरसि दृढं परिचयेषु ह्रस्वं
स्कन्धबन्धे दीर्घमायुषि दरिद्रमुदरे सततप्रवृत्तं दाने बलभद्रं मद-
लीलासु कुलकलत्रमायत्ततासु जिनं क्षमासु वह्निरूपं क्रोधमोक्षेषु
गरुडं नागोद्धृतिषु नारदं कलहकुतूहलेषु शुष्काशनिपातमव-
स्कन्देषु मकरं वाहिनीक्षोभेषु आशीविषं दशनकर्मसु वरुणं हस्त-
पाशाकृष्टिषु यमवागुरामरातिसंवेष्टनेषु कालं परिणतिषु राहुं
तीक्ष्णकरग्रहणेषु लोहिताङ्गं वक्रचारेषु अलातचक्रं मण्डलभ्रान्ति-
विधानेषु मनोरथसम्पादकं चिन्तामणिपर्वतं(३८) विक्रमस्य दन्त-
मुक्ताशैलस्तम्भं निवासप्रासादमभिमानस्य घण्टाचामरमण्डनमनो-
हरमिच्छासंचरणविमानं मनस्वितायाः मदधारादुर्दिनान्धकारं
गन्धोदकधारागृहं क्रोधस्य सकाञ्चनप्रतिमं महानिकेतनमहङ्कारस्य

(३७) दीर्घसीत्कारैः । १ । (३८ चिन्तामणिपर्वतकम् । १ ।

सगणडशैलप्रसवणं क्रीडापर्व्वतमवलेपस्य सदन्ततोरणं वज्रमन्दिरं दर्पस्य उन्नतकुम्भकूटाट्टालकविकटं सञ्चारिगिरिदुर्गं राज्यस्य कृता-नेकशाखाविवरसङ्कटं लोहप्राकारं पृथिव्याः (३८) शिलीमुखशत-भाङ्कारितं पारिजातपादपं भूनन्दनस्य तथाच सङ्गीतमृदङ्गं कर्णतालताण्डवानाम् आपानमण्डपं मधुपमण्डलानाम् अन्तःपुरं शृङ्गाराभरणानां मदनोत्सवं मदलीलालास्यानाम् अम्बुप्रदोषं नक्षत्रमालामण्डलानाम् अकालप्रावृट्कालं मदमहानदीपूर-प्रवाणाम् अलीकशरत्समयं सप्तच्छदवनपरिमलानाम् अपूर्व्व-हिमागमं शीकरनीहाराणाम् मिथ्याजलधरं गर्ज्जिताडम्बराणां दर्पशातम् अपश्यत् ।

आसीच्चास्य चेतसि (४०) नूनमस्य निर्म्माणे गिरयो (४१) प्रापिताः परमाणुतां कुतोऽन्यथा गौरवमिदम् आश्चर्य्यमेतत् विन्ध्यस्य दन्तौ आदिवराहस्य कर इति विस्मयमानमेतं(४२)दौवा-रिकोऽब्रवीत् पश्य

मिथ्यैवालिखितां मनोरथशतैर्निःशेषनष्टां श्रियं
चिन्ताशाधनकल्पनाकुलधियां भूयो वने विद्विषाम् ।
आयातः कथमप्ययं स्मृतिपथं शून्यीभवच्चेतसां
नागेन्द्रः सहते न मानसगतानाशागजेन्द्रानपि ॥

तदेहि पुनरप्येनं द्रक्ष्यसि पश्य तावद्देवमित्यभिधीयमानश्च तेन मदजलपङ्किल (४३) कपोलपट्टपतितां मत्तामिव मदपरिमलेन मुकुलितां कथमपि तस्माद्दृष्टिमाकृष्य तेनैव दौवारिकेणोपदिश्य-

(३८) पृथ्व्या । २ । ३ ।
(४०) मनसि । १ ।
(४१) पर्व्वता । १ ।
(४२) विस्मयमानमेवैतम् । १ ।
४३ मदजलकज्जलकाम । १ ।

मानवतीं समतिक्रम्य भूपालसहस्र(४४)सङ्कुलानि त्रीणि कक्षान्तराणि चतुर्थे भुक्तास्थानमण्डपस्य पुरस्तादजिरे स्थितं दूरादूर्द्ध्वस्थितेन प्रांशुना कर्णिकारगौरेण व्यायामव्यायतवपुषा शस्त्रिणा मौलेन शरीर(४५)परिचारकलोकेन पङ्क्तिस्थितेन कार्त्तस्वरस्तम्भमण्डलेनेव परिवृतम् आसन्नोपविष्टविशिष्टेष्टलोकं हरिचन्दनरसप्रक्षालिते तुषारशीकरशीतलतले दन्तपाण्डुरपादे शशिमये इव मुक्ताशैलशिलापट्टशयने समुपविष्टं शयनीयपर्य्यन्तविन्यस्ते समर्पितसकलविग्रहभारं भुजे दिङ्मुखविसर्पिणा देहप्रभावितानेन विततमणिमयूखे ग्रीष्मसमयसुभगे सरसीव बहुमृणालजालजटिलजले सराजकं रममाणं तेजसः परमाणुभिरिव केवलैर्निर्म्मितम् अनिच्छन्तं बलादारोपयितुमिव सिंहासनं सर्व्वावयवेषु सर्व्वलक्षणैः गृहीतं गृहीतब्रह्मचर्य्यमालिङ्गितं राजलक्ष्म्या प्रतिपन्नासिधाराधारणव्रतमविसंवादिनं राजर्षिं विषमराजमार्गविनिहितपदस्खलनभियेव सुलग्नं धर्म्मे सकलभूपालपरित्यक्तेन भीतेनेव सत्यवाचा सर्व्वात्मना सत्येन सेव्यमानम् आसन्नवारविलासिनीप्रतियातनाभिश्चरणनखपातिनीभिर्दिग्भिरिव दशभिः प्रणम्यमानं दीर्घैः दिगन्तपातिभिर्दृष्टिपातैर्लोकपालानां कृताकृतमिव प्रत्यवेक्षमाणं मणिपादपीठपृष्ठप्रतिष्ठितकरेणोपरिगमनाभ्यनुज्ञां याचमानमिव दिवसकरेण भूषणप्रभासमुत्सारणबहुपर्य्यन्तमण्डलेन प्रदक्षिणीक्रियमाणमिव दिवसेन अप्रणमद्भिर्गिरिभिरपि दूयमानं शौर्य्योष्मणा फेनायमानमिव चन्दनधवलं लावण्यजलधिमुद्वहन्तम् एकराज्यौर्जित्येन निजप्रतिबिम्बान्यपि नृप(४६)चक्रचूडामणि-

(४४) भूपालकुलसहस्र । १ । २ ।   (४५) स्वशरीर । २ । १ ।

(४६) नरपति । १ ।

हृतान्यसहमानमिव दर्पदुःखासिकया चामरानिलनिभेन बहुधेव श्वसन्तीं राजलक्ष्मीं दधानं सकलमिव चतुःसमुद्रलावण्यमादाय उत्थितया श्रिया समुपश्लिष्टम् आभरणप्रभाजालजायमानानीन्द्र-धनुःसहस्राणीन्द्रप्राभृतप्रहितानि विलभमानमिव राज्ञां सम्-भाषणेषु परित्यक्तमपि मधु वर्षन्तं काव्यकथासु अपीतमपि (४७) अमृतमुद्वमन्तं विस्रम्भभाषितेष्वनाकृष्टमपि हृदयं दर्शयन्तं प्रसादेषु निश्चलामपि श्रियं स्थाने स्थाने स्थापयन्तं वीरगोष्ठीषु पुलकितेन कपोलस्थलेनानुरागसन्देशमिवोपांशु रणश्रियः शृण्वन्तम् अति-क्रान्तसुभटकलहालापेषु स्नेहदृष्टिमिव दृष्टिम् दृष्टे कृपाणे पातयन्तं परिहासस्मितेषु गुरुप्रतापभीतस्य राजकस्य स्वच्छमाशयमिव दशनांशुभिः कथयन्तं सकललोकहृदयस्थितमपि न्याये तिष्ठन्तम् अगोचरे गुणानाम् अभूमौ सौभाग्यानाम् अविषये वरप्रदाना-नाम् अशक्ये आशिषाम् अमार्गे मनोरथानाम् अतिदूरे दैवस्य अदिशि उपमानानाम् असाध्ये धर्मस्य अदृष्टपूर्व्वे लक्ष्म्या महत्त्वे स्थितम् अरुणपादपल्लवेन सुगतमम्बरोरुणा वज्रायुधनिष्ठुरप्रकोष्ठ-पृष्ठेन वृषस्कन्धेन भास्वद्बिम्बाधरेण प्रसन्नावलोकितेन चन्द्रमुखेन कृष्णकेशेन वपुषा सर्व्वदेवतावतारमिवैकत्र दर्शयन्तम् अपिच मांसलमयूखमालामलिनितमहीतले महति महार्हे माणिक्य-मालामण्डितमेखले महानीलमये पादपीठे कलिकालशिरसीव सलीलं विन्यस्तवामचरणम् आक्रान्तकालियफणाचक्रवालं बालम् इव पुण्डरीकाक्षं क्षौमपाण्डुरेण चरणनखदीधितिप्रतानेन प्रसरता मह्यां महादेवीपट्टबन्धेनेव मण्डिमानमारोपयन्तम् अप्रणतलोक-पालकोपेनेव अतिलोहितौ सकलनृपतिमौलिमालासु अतिपीतं

(४७) काव्यकथासु पीतमपि । १ । २ ।

पद्मरागरत्नातपमिव वमन्तौ सर्व्वतेजस्विमण्डलास्तमयसन्ध्यामिव
धारयन्तौ अशेषराजकशेखरकुसुम(४८)मधुरसस्रोतांसीव स्रवन्तौ
समस्तसामन्तसीमन्तोत्तंसस्रक्सौरभ्यान्तैर्भ्रमरमण्डलैः अभितो-
ऽमलाङ्कैरिव मुहूर्त्तमप्यविरहितौ संवाहनतत्परायाः श्रियो विकच-
रक्तपङ्कजवनवासभवनानीव कल्पयन्तौ जलजशङ्खमीनमकर-
सनाथतलतया कथितचतुरम्भोधिभोगचिह्नाविव चरणौ दधानम्
दिङ्नागदन्तमुसलाभ्यामिव विकटमकरमुखप्रतिबन्धबन्धुराभ्याम्
उद्वेललावण्यपयोनिधिप्रवाहाभ्यामिव फेनायितशोभाभ्यां चन्दन-
द्रुमाभ्यामिव भोगिमण्डलशिरोरत्नरश्मिरज्यमानमूलाभ्यां हृदया-
रोपितभूभारधारणमाणिक्यस्तम्भाभ्याम् ऊरुदण्डाभ्यां विराज-
मानम् (४९) अमृतफेनपिण्डपाण्डुना मेखलामणिमयूखखचितेन
नितम्बबिम्बव्यासङ्गिना विमलपयोधौतेन नेत्रसूत्रनिवेशशोभिना
अधरवाससा वासुकिनिर्म्मोकेणेव मन्दरं द्योतमानम् अघनेन
सतारागणेनोपरिस्रस्तेन द्वितीयाम्बरेण भुवनाभोगमिव भास-
मानम् इभपतिदशनमुसलसञ्चल्लेखकठिनमसृणमापर्य्याप्ताम्बर-
प्रथिम्ना विविधवाहिनीसङ्क्षोभकलकलसम्मर्द्दसहिष्णुना कैलासम्
इव महता स्फटिकतटेन उरणोरःकवाटेन राजमानं श्रीसर-
स्वत्योर्वरोवदनोपभोगविभागसूत्रेणेव पातितेन शेषेणेव च तङ्कु-
स्तम्भविन्यस्तसमस्तभूभारलब्धविश्रान्तिसुखप्रसुप्तेन हारदण्डेन
परिवेष्टितकन्धरं जीविताविधिक्रीतसर्व्वस्वमहादानदीक्षाचीरेणेव
हारमुक्ताफलानां किरणनिकरेण प्रावृतवक्षःस्थलम् अजजिगीषया
बालैर्भुजैरिवापरैः प्ररोहद्भिर्बाहूपधानशायिन्याः श्रियः कर्णो-
त्पलमधुरसधारासन्तानैरिव गलद्भिः भुजज्वलनः प्रतापस्य निर्गमन-

(४८) कुसुमशेखर। १। (४९) राजमानम्। १।

मार्गैरिवाविर्भवद्भिरखर्वैः केयूररत्नकिरणदण्डैरुभयतः प्रसारित-
मणिमयपक्षवितानमिव माणिक्यमहीधरं सकललोकालोकमार्ग-
र्गलेन चतुरुदधिपरिक्षेपखातशिलाप्राकारेण सर्व्वराजहंसबन्ध-
वज्रपञ्जरेण भुवनलक्ष्मीप्रवेशमङ्गलमहामणितोरणेन अतिदीर्घ-
दोर्दण्डयुगलेन दिशां दिक्पालानाञ्च युगपदायतिमपहरन्तम्
सौदर्य्यलक्ष्मीचुम्बनलोभेन कौस्तुभमणेरिव मुखावयवतां गतस्य
अधरस्य गलता रागेण पारिजातपल्लवरसेनेव सिञ्चन्तं दिङ्मुखानि
अन्तरान्तरा सुहृत्परिहाससस्मितैः प्रकीर्य्यमाणविमलदशनशिखा-
प्रतानैः प्रकृतिमृदाया राजश्रियाः(५०)प्रज्ञालोकमिव दर्शयन्तं मुख-
जनितेन्दुसन्देहागतानि कुमुदिनीवनानीव प्रेषयन्तं स्फुटधवल-
दशनपङ्क्तिक्षतकुमुदवनशङ्काप्रविष्टां शरज्ज्योत्स्नामिव विसर्जयन्तं
मदिराक्षतपारिजातगन्धगर्भेण भरितसकलककुभा मुखामोदेन
अमृतमथनदिवसमिव सृजन्तं विकचमुखकमलकर्णिकाकोशेन
अनवरतमापीयमानश्वाससौरभमिवाधोमुखेन नासावंशेन चक्षुषः
क्षीरस्निग्धस्य धवलिम्ना दिङ्मुखान्यपूर्व्ववदनचन्द्रोदयोद्वेलक्षीरोद-
प्लावितानीव कुर्व्वाणं विमलकपोलफलकप्रतिबिम्बिता चामर-
ग्राहिणीं विग्रहिणीमिव मुखनिवासिनीं सरस्वतीं दधानम्
अरुणेन चूडामणिशोचिषा सरस्वतीर्ष्याकुपितलक्ष्मीप्रसादन-
लग्नेन चरणालक्तकेनेव लोहितायतललाटतटम् आपाटलांशुतन्त्री-
सन्तानवलयिनीं कुण्डलमणिकुटिलकोटिपालवीणाम् अनवरत
चलितचरणानां वादयतामुपवीणयतामिव स्वरव्याकरणविवेक-
विशारदं श्रवणावतंसमधुकरकुलानां कलक्वणितमाकर्णयन्तम् उत्-
फुल्लमालतीमयेन राजलक्ष्म्याः कचग्रहलीलालग्नेन नखज्योत्स्ना-

(५०) राजलक्ष्म्याः । २ ।

वलयेनेव मुखशशिपरिवेशमण्डलेन मुक्तमालागुणेन परिकलित-
केशान्तं शिखण्डाभरणभुवा मुक्ताफलालोकेन मरकतमणिकिरण-
कलापेन चान्योन्यसंवलनश्च्छुरितेन प्रयागप्रवाहवेणिकावारिणेव
आगत्य स्वयमभिषिच्यमानं श्रमजलविलीनबहलचन्दनागुरुपङ्क-
तिलककलङ्ककल्पितेन कालिम्ना प्रायनाचाटुचतुरचरणपतनप्रस-
क्तामिकाकिणेनेव नीलायमानललाटलेखाभिः क्षुभितमानसोद्गतैः
उत्कलिकाकलापैरिव हारैरलसम्रुरवष्टभ्यमानाभिः विलासवलन-
चटुलैः भ्रूलताकल्पैरीर्ष्यया श्रियमिव तर्जयन्तीभिः आयामिभिः
श्वसितैरविरलपरिमलैर्मलयमारुतमयैः पाशैरिवाकर्षन्तीभिः
विकटबकुलावलीवराटकवेष्टितमुखैरिव शृङ्गैः स्तनकलशैः स्वदार-
सन्तोषरसमिवाशेषमुद्धरन्तीभिः कुचोत्कम्पिकाविकारप्रेङ्खिताना
हारतरलमणीनां रश्मिभिरालग्य हृदयमिव हठात्प्रवेशयन्तीभिः
प्रभामुखामाभरणमणीनां मयूखैः प्रसारितैर्बहुभिरिव बाहुभिः
आलिङ्गन्तीभिः अम्भागुबन्धबन्धुरबदनारविन्दावरणीकृतैरम्लानैः
करकिसलयैः सरभसप्रधावितानि मानसानीव निरुन्धतीभिः
मदान्धमधुकरकुलकीर्यमाणकर्णकुसुमरजःकणकूणितकोणानि
कुसुमशरशरनिकरप्रहारमूर्च्छामुकुलितानीव लोचनानि चतुरं
सञ्चारयन्तीभिः अन्योन्यमत्सरादाविर्भवद्भ्रूभङ्गुरकुटिविभ्रमक्षिप्तैः
कटाक्षैः कर्णेन्दीवराणीव ताडयन्तीभिः अनिमेषदर्शनसुखरस-
राशिं सम्बर्तितपक्ष्मणा चक्षुषा पीतमिव कोमलकपोलपालीप्रति-
बिम्बितं वहन्तीभिः अभिलाषलीलानिर्मितस्मितैः चन्द्रोदयाम्
इव मदनमांशयकाय सम्पादयन्तीभिः अङ्गभङ्गवलनान्योन्यघटितो-
त्तानकरवेणिकाभिः स्फुटनमुखराङ्गुलीकाण्डकुण्डलीक्रियमाण-
नखदीधितिनिवहनिभेन अकिञ्चित्करकामकार्मुकाणीव दया

मच्छतीभिः वारविलासिनीभिर्विलुप्यमानसौभाग्यमिव सर्व्वतः स्पर्शस्विन्नवेपमानकरकिसलयगलितचरणारविन्दां चरणग्राहिणीं विहस्य कोणेन लीलालसं शिरसि ताडयन्तम् अनवरतकरकलितकोणतया चालनः प्रिया वीणामिव श्रियमपि शिक्षयन्तं निःस्नेह इति धनैः अनाश्रयणीय इति दोषैः निग्रहरुचिरितीन्द्रियैः दुरुपसर्प इति कलिना नीरस इति व्यसनैः भीरुरित्ययशसा दुर्ग्रहचित्तवृत्तिरिति चित्तभुवा स्त्रीपर इति सरस्वत्या षण्ढ इति परकलत्रैः काष्ठामुनिरिति यतिभिः धूर्त्त इति वेश्याभिः नेय इति सुहृद्भिः कर्म्मकर इति विप्रैः असहाय इति शत्रुयोधैः एकमपि अनेकधा गृह्यमाणं शान्तनोर्महावाहिनीपतिं भीष्माज्जितकाशिनं द्रोणाल्लब्धापलालसं गुरुपुत्रादमोघमार्गणं कर्णान्मित्रप्रियं युधिष्ठिरात् बहुक्षमं भीमादनेकनागायुतबलं धनञ्जयान्महाभारतरणयोग्यं कारणमिव कृतयुगस्य बीजमिव विबुधसर्गस्य उत्पत्तिद्वीपमिव दर्पस्य एकागारमिव करुणायाः प्रातिवेशिकमिव पुरुषोत्तमस्य खनिपर्व्वतमिव पराक्रमस्य सर्व्वविद्यासङ्गीतगृहमिव सरस्वत्याः द्वितीयामृतमथनदिवसमिव लक्ष्मीसमुत्थानस्य बलदर्शनमिव वैदग्ध्यस्य एकस्थानमिव स्थितीनां सर्व्वस्वकथनमिव कान्तेः अपवर्गमिव रूपपरमाणुसर्गस्य सकलदुश्चरितप्रायश्चित्तमिव राज्यस्य सर्व्वबलसन्दोहावस्कन्दमिव कन्दर्पस्य उपायमिव पुरन्दरदर्शनस्य आवर्त्तनमिव धर्म्मस्य कन्यान्तःपुरमिव कलानां परमप्रमाणमिव सौभाग्यस्य राजसर्गसमाप्त्यवभृथस्नानदिवसमिव सर्व्वप्रजापतीनां गम्भीरञ्च प्रसन्नञ्च त्रासजननञ्च रमणीयञ्च कौतुकजननञ्च पुण्यञ्च चक्रवर्त्तिनं हर्षमद्राक्षीत् ।

दृष्ट्वा चानुगृहीत इव निगृहीत इव साभिलाष इव तृप्त इव

रोमाञ्चमुचा मुखेन मुञ्चन्नानन्दबाष्पवारिबिन्दून् दूरादेव विस्मयस्मेरः समचिन्तयत् सोऽयं सुजन्मा सुगृहीतनामा तेजसां राशिः चतुरुदधिकेदारकुटुम्बी भोक्ता ब्रह्मस्तम्बफलस्य सकलादिराजचरितजयज्येष्ठमल्लो देवः परमेश्वरो हर्षः । एतेन च खलु राजन्वती पृथ्वी । नास्य हरेरिव वृषविरोधीनि बालचरितानि न पशुपतेरिव दक्षोद्वेगकारीण्यैश्वर्यविलसितानि (५१) न शतक्रतोरिव गोत्रविनाशपिशुनाः प्रवादाः न यमस्येवातिवल्लभानि दण्डग्रहणानि न वरुणस्येव निस्त्रिंशग्राहसहस्ररक्षिता रत्नालयाः न धनदस्येव निष्फलाः सन्निधिलाभाः न जिनस्येवार्थवादशून्यानि दर्शनानि न चन्द्रमस इव बहुलदोषोपहताः श्रियः । चित्रमिदम् अत्यमरं राजत्वम् । अपि चास्य त्यागस्य अर्थिनः प्रज्ञायाः शास्त्राणि कवित्वस्य वाचः सत्त्वस्य साहसस्थानानि उत्साहस्य व्यापाराः कीर्त्तेर्दिङ्मुखानि अनुरागस्य लोकहृदयानि गुणगणस्य सङ्ख्या कौशलस्य कला न पर्य्याप्तो विषयः । अस्मिंश्च राजनि यतीनां योगपट्टकाः पुस्तकर्म्मणां पार्थिवविग्रहाः षट्पदानां दानग्रहणकलहाः इत्तानां पादच्छेदाः अष्टापदानां चतुरङ्गकल्पना पन्नगानां द्विजगुरुद्वेषाः वाक्यविदाम् अधिकरणविचारः । इति समुपहृत्य चोपवीती स्वस्तिशब्दमकरोत् ।

अथोत्तरेण नातिदूरे राजधिष्ण्यस्य गजपरिचारको मधुरम् अपरवक्त्रमुच्चैरगायत्

करिकलभ विमुञ्च लोलतां चर विनयव्रतमानताननः ।
मृगपतिनखकोटिभङ्गुरो गुरुरुपरि क्षमते न तेऽङ्कुशः ॥

(५१) नैश्वर्य्यचरितानि । १ ।

राजा तु तत् श्रुत्वा दृष्ट्वा च तं गिरिगुहागतसिंहबृंहितगम्भीरेण स्वरेण पूरयन्निव नभोभागमपृच्छत् एष स बाण इति। यथा आज्ञापयति देव: सोऽयमिति विज्ञापितो दौवारिकेण न तावदेनम् अकृतप्रसाद: पश्यामीति तिर्य्यङ्नीलधवलांशुकशारां तिरस्करिणीम् इव भ्रमयन्नपाङ्गनीयमानतरलतारकश्यामायामिनीं चक्षुष: प्रभाम् परिवृत्य प्रेष्ठस्य पृष्ठतो निषण्णस्य मालवराजसूनोरकथयत् महानयं भुजङ्ग इति। तूष्णीम्भावेन त्वगमितनरेन्द्रवचसि तस्मिन् मूके च राजलोके मुहूर्त्तमिव तूष्णीं स्थित्वा बाणो व्यज्ञापयत् देव अविज्ञाततत्त्व इव अश्रद्दधान इव नेय इव अविदितलोकवृत्तान्त इव च कस्मादेवमाज्ञापयसि। स्वैरिणो विचित्राश्च लोकस्य स्वभावा: प्रवादाश्च। महद्भिस्तु यथार्थदर्शिभिर्भवितव्यम्। नार्हसि मामन्यथा सम्भावयितुमविशिष्टमिव। ब्राह्मणोऽस्मि जात: सोमपायिनां वंशे वात्स्यायनानाम्। यथाकालमुपनयनादय: कृता: संस्कारा:। सम्यक् पठित: साङ्गो वेद:। श्रुतानि यथाशक्ति शास्त्राणि। दारपरिग्रहादभ्यागारिकोऽस्मि। का मे भुजङ्गता। लोकद्वयाविरोधिभिस्तु चापलै: शैशवमशून्यमासीत्। अत्रानपलापोऽस्मि। अनेनैव च गृहीतविप्रतीसारमिव मे हृदयम्। इदानीन्तु सुगत इव शान्तमनसि मनाविव कर्त्तरि वर्णाश्रमव्यवस्थानां समवर्त्तिनीव च साक्षाद्दण्डभृति देवे शासति सप्ताम्बुराशिरशनामशेषद्वीपमालिनीं महीं क इवाविशङ्क: सर्व्वव्यसनबन्धोरविनयस्य मनसाप्यभिनयं कल्पयिष्यति। आसतां तावन्मानुष्यकोपेता: त्वत्प्रभावादलयोऽपि भीता इव मधु पिबन्ति रथाङ्गनामानोऽपि लज्जन्त इवात्यनुरक्तिव्यसनै: प्रियाणां कपयोऽपि चकिता इव चपलायन्ते शरारवोऽपि सानुक्रोशा इव श्वापदगणा: पिशितानि भुञ्जते। सर्व्वथा कालेन

मां ज्ञास्यति स्वामी स्वयमेव। अनपायिनचित्तवृत्तिग्राहिणो हि भवन्ति प्रज्ञावतां प्रकृतयः। इत्यभिधाय तूष्णीमभूत् (५२)।

भूपतिरपि एवमस्माभिः श्रुतम् इत्यभिधाय (५३) तूष्णीमेवाभवत् सम्भाषणासनदानादिना तु प्रसादेन नैनमन्वग्रहीत् (५४) केवलममृतदृष्टिभिः स्नपयन्निव स्नेहगर्भेण दृष्टिपातमात्रेणान्तर्गतां प्रीतिमकथयत् अस्ताभिलाषिणि च लम्बमाने सवितरि विसर्जितराजलोको(५५)ऽभ्यन्तरं प्राविशत्। बाणोऽपि निर्गत्य धौतारकूटकोमलातपत्विषि निर्वाति वासरे अस्ताचलकूटकिरीटे विपुलमञ्जरीभांसि तेजांसि मुञ्चति वियन्मुचि मरीचिमति रोमन्थमन्थरकुरङ्गकुटुम्बकाध्यास्यमानम्रदिष्ठगोष्ठीनपृष्ठास्तरणस्थलीषु शोकाकुलकोककामिनीकूजितकरुणासु तरङ्गिणीतटीषु वासविटपोपविष्टवाचाटचटकचक्रवालेष्वालवालावर्जितसेकजलकुटेषु निष्कुटेषु दिवसविसृतिप्रत्यागतं प्रस्नुतस्तनं स्तनन्धये धयति धेनुवर्गमुत्सृतक्षीरं चुषित (५६) तर्णकव्राते क्रमेण चासधराधरधातुधुनीपूरप्लावित इव लोहितायमानमहसि मज्जति सन्ध्यासिन्धुपानपात्रे पातङ्गे मण्डले कमण्डलुजलशुचिशयचरणेषु चैत्यप्रणतिपरेषु पाराशरिषु यज्ञपात्रपवित्रपाणौ प्रकीर्णबर्हिष्युज्ज्वलति जातवेदसि हवींषि वषट्कुर्वति याजूकजने निद्राविद्राणद्रोणकुलकलिलकुलायेषु कापेयविकलकपिकुलेष्वारामतरुषु निर्जिगमिषति जरत्तरुकोटरकुटीकुटुम्बिनि कौशिककुले मुनिकरसहस्रप्रकीर्ण-

(५२) तूष्णीमेवाभवत्। १।

(५३) इत्येवमभिधाय। २। २।

(५४) प्रसादेनैनमन्वग्रहीत्। १। २। २।

(५५) उत्थाय विसर्जितराजलोक। १।

(५६) चमित। १।

सन्ध्यावन्दनोदबिन्दुनिकर इव इन्तुरयति तारापथस्थलीं स्थवीयसि तारकानिकुरम्बे अम्बराश्रयिणि शर्वरीशबरीशिखण्डे खण्डपरशुकण्ठकाले कवलयति बाले ज्योतिःशेषं सान्ध्यमन्धकारावतारे तिमिरतर्जननिर्गतासु दहनप्रविष्टदिनकरकरशाखास्विव स्फुरन्तीषु दीपलेखासु अररसम्पुटसंक्रीडनकथितावृत्तिष्विव गोपुरेषु शयनोपजोषजुषि जरतीकथितकथे शिशयिषमाणे शिशुजने अरन्धिदृषमषीमलीमसतमसि जनितपुण्यजनप्रजागरे विजृम्भमाणे भीषणतमे तमीमुखे मुखरितविततज्यधनुषि वर्षति शरनिकरमनवरतमशेषसंसारशेमुषीमुषि मकरध्वजे रताकल्पारम्भशोभिनि शम्भलीभाषितभाजि भजति भूषां भुजिष्याजने सैरिन्ध्रीबध्यमानरशनाजालजल्पाकजघनासु जनीषु वशिकविशिखाविहारिणीष्वनन्यजातुरासु प्रचलितास्वभिसारिकासु विरलीभवति वरटानां वेशन्तशायिनीनां मञ्जुनि मञ्जीरशिञ्जितजडे जल्पिते निद्राविद्राणद्राघीयसि द्रावयतीव च विरहिहृदयानि सारसरसिते भाविभासरबीजाङ्कुरनिकर इव च विकीर्य्यमाणे जगति प्रदीपप्रकरे निवासस्थानमगात्। अकरोच्च चेतसि अतिदक्षिणः खलु देवो हर्षः यदेवमनेकबालचरितचापलोचितकौलीनकोपितोऽपि मनसा स्निह्यत्येव मयि। यद्यहमस्तिगतः स्यां न मे दर्शनेन प्रसादं कुर्य्यात्। इच्छति तु मां गुणवन्तम्। उपदिशन्ति हि विनयमनुरूपप्रतिपत्त्युपपादनेन वाचा (५७) विनापि भर्त्तृणां स्वामिनः। अपिच धिक् मां स्वदोषान्धमानसमनादरपीडितमेवमतिगुणवति राजन्यन्यथा चान्यथा च चिन्तयन्तम्। सर्व्वथा करोमि तथा (५८) यथा यथावस्थितं जानाति मामयं कालेन।

(५७) वाचम्।१।

(५८) तथा करोमि।१।

इत्येवमवधार्य्य च अपरेद्युर्निष्क्रम्य कटकात् सुहृदां बान्धवानाञ्च भवनेषु तावदतिष्ठत् यावदस्य स्वयमेव गृहीतस्वभावः पृथिवीपतिः प्रसादवानभूत्। प्रविवेश च पुनरपि नरपतिभवनम्। स्वल्पैरेव चाहोभिः परमप्रीतेन प्रसादजन्मनो मानस्य प्रेम्णो विस्रम्भस्य द्रविणस्य नर्म्मणः प्रभावस्य च परां कोटिमानीयत नरेन्द्रेणेति।

इति श्रीबाणभट्टकृते हर्षचरिते राजदर्शनं नाम
द्वितीय उच्छ्वासः।

तृतीय उच्छ्वासः ।

निजवर्षोचितक्लेशा बहुभक्तजनान्विताः ।
सुकाला इव जायन्ते प्रजापुण्येन भूभुजः ॥
साधूनामुपकर्त्तुं लक्ष्मीं द्रष्टुं (१) विहायसा गन्तुम् ।
न कुतूहलि कस्य मनश्चरितञ्च महात्मनां श्रोतुम् ॥

अथ कदाचित् विरलितबलाहके चातकातङ्ककारिणि क्वणत्कादम्बे दर्दुरद्विषि मयूरमदमुषि हंसपथिकसार्थसर्व्वातिथौ धौतासिनिभनभसि भास्वरभास्वति शुचिशशिनि तरुणतारागणे गलत्सुनासीरशरासने सीदत्सौदामिनीदाम्नि दामोदरनिद्राद्रुहि द्रुतवैदूर्य्यवर्णार्णसि घूर्णमानमिहिकालघुमेघमोघमघवति निमीलन्नीपे निष्कुसुमकुटजे निर्मुकुलकन्दले कोमलकमले मधुस्यन्दीन्दीवरे कह्लाराह्लादिनि शेफालिकाशीतलीकृतनिशे यूथिकामोदिनि मोदमानकुमुदावदातदशदिशि सप्तच्छदधूलिधूसरित-(२) समीरे सावकितबन्धुरबन्धूकावध्यमानाकाण्डसन्ध्ये नीराजितवाजिनि उद्दामदन्तिनि दर्पक्षीवोक्षके क्षीयमाणपङ्कचक्रवाले बालपुलिनपल्लवितसिन्धुरोधसि परिणामश्यानश्यामाके जनितप्रियङ्गुमञ्जरीरजसि कठोरितत्रपुषत्वचि कुसुमस्मेरशरे शरत्समयारम्भे राज्ञः समीपात् बाणो बन्धून् द्रष्टुं पुनरपि तं ब्राह्मणाधिवासमगात् ।

समुपलब्धभूपालसम्मानातिशयपरितुष्टास्तस्य ज्ञातयः श्लाघमाना निर्ययुः । क्रमेण च कांश्चिदभिवादयमानः कैश्चिदभिवाद्य-

(१) चर्म्म । १ ।   (२) धूसर । १ ।

मानः कैश्चिच्छिरसि चुम्ब्यमानः कांश्चिन्मूर्द्धि समाजिघ्रन् कैश्चिदालिङ्ग्यमानः कांश्चिदालिङ्गन् अन्यैराशिषानुगृह्यमाणः पराननुगृह्णन् बहुबन्धुमध्यवर्त्ती परं मुमुदे। सम्भ्रान्तपरिजनोपनीतञ्च आसनमासीनेषु गुरुषु भेजे। भजमानश्चार्घादिसत्कारं नितरां ननन्द। प्रीयमाणेन च मनसा सर्व्वांस्तान् पर्य्यपृच्छत् कच्चिदेतावतो दिवसान् सुखिनो यूयम्। अप्रत्यूहा वा सम्यक्करणपरितोषितद्विजजना क्रातवी क्रियते क्रिया(३)। यथावदविकलमन्त्रभाञ्जि भजन्ते हवींषि हुतभुजः। यथाकालमधीयते वा बटवः। प्रतिदिनमविच्छिन्नो वा वेदाभ्यासः। कच्चित् स एव चिरन्तनो यज्ञविद्याकर्म्मण्यभियोगः। तान्येव व्याकरणे परस्परस्पर्द्धानुबन्धाबन्ध्यदिवसदर्शितादराणि व्याख्यानमण्डलानि। सैव वा पुरातनी परित्यक्तान्यकर्त्तव्या प्रमाणगोष्ठी। स एव वा मन्दीकृतेतरशास्त्ररसो मीमांसायामतिरसः। कच्चित्त एव वाभिनवसुभाषितसुधावर्षिणः काव्यालापा इति।

अथ ते तमूचुः तात सन्तोषजुषां सततसन्निहितविद्याविनोदानां वैतानवह्निमात्रसहायानां कियन्मात्रं नः स्वास्थ्यं सुखितया सकलभुवनभुजि भुजङ्गराजदेहदीर्घे रक्षति क्षितिं क्षितिभुजो भुजे (४)। सर्व्वथा (५) सुखिन एव वयं विशेषेण तु त्वयि विमुक्तकौसीद्ये परमेश्वरपार्श्ववर्त्तिनि वेत्रासनमधितिष्ठति। सर्व्वे च यथाशक्ति यथाविभवं यथाकालञ्च सम्पाद्यन्ते विप्रजनोचिताः क्रियाकलापाः। इत्येवमादिभिरालापैः स्कन्धावारवार्त्ताभिश्च गोष्ठ्यातिक्रान्तक्रीडानुस्मरणैः पूर्व्वजकथाभिश्च विनोदितमनास्तैः सह

(३) क्रिया क्रियते। १।　　(४) क्षितिपभुजे। १।

(५) सर्वदा। १। २। ३।

सुचिरमतिष्ठत् उत्थाय च मध्यन्दिने यथाक्रियमाणाः स्थिती-रकरोत्। भुक्तवन्तश्च तं सर्व्वे भ्रातरः पर्य्यवारयन्।

अत्रान्तरे दुकूलपट्टप्रभवे शिखण्डाग्रपाङ्गपाण्डुनी पौण्ड्रे वाससी वसानः स्नानावसानसमये वन्दितया तीर्थमृदा गोरोचनया च रचिततिलकः तैलामलकमसृणितमौलिः अनुच्चचूडाचुम्बिना निबिडेन कुसुमापीडकेन समुल्लसमानः असकृदुपयुक्तताम्बूल-विमलाधरकान्तिः एकशलाकाञ्जनजनितलोचनरुचिः अचिरभक्तो विनीतमार्य्यस्य वेषं दधानः पुस्तकवाचकः सुदृष्टिराजगाम नाति-दूरवर्त्तिन्यासन्द्यां निषसाद। स्थित्वा च मुहूर्त्तमिव तत्कालाप-नीतसूत्रवेष्टनमपि नखकिरणैर्दुकूलपालसूत्रैरिव वेष्टितं पुस्तकं पुरोनिहितशरशलाकायन्त्रके निधाय पृष्ठतः सनीडसन्निविष्टाभ्यां मधुकरपारावताभ्यां दत्ते स्थानके प्राभातिकप्रपाठकच्छेदचिह्नी-कृतम् अन्तरपत्रमुत्क्षिप्य गृहीत्वा च कतिपयपत्रलघ्वीं कपाटिकां क्षालयन्निव मषीमलिनान्यक्षराणि दन्तकान्तिभिः अर्च्चयन्निव सितकुसुममुक्तिभिर्ग्रन्थं मुखसन्निहितसरस्वतीनूपुररवैरिव गमकैः मधुरैराक्षिपन् मनांसि श्रोतृणां गीत्या पवमानप्रोक्तं पुराणं पपाठ।

तस्मिंश्च तथा श्रुतिसुभगगीतिगर्भं पठति सुदृष्टौ नातिदूरवर्त्ती वन्दी सूचीबाणसारमधुरेण गीतिध्वनिमनुवर्त्तमानः स्वरेणेदम् आर्य्यायुगलमपठत् (१)

तदपि मुनिगीतमतिपृथु तदपि जगद्व्यापि पावनं तदपि।
हर्षचरितादभिन्नं प्रतिभाति हि मे पुराणमिदम्॥
वंशानुगमविवादि स्फुटकरणं भरतमार्गभजनगुरु।
श्रीकण्ठविनिर्यातं गीतमिदं हर्षराज्यमिव॥

(१) अगायत्। २। १।

तत् श्रुत्वा बाणस्य चत्वारः पितामहमुखपद्मा इव वेदाभ्यास-पवित्रितमूर्त्तयः उपाया इव सामप्रयोगललितमुखाः गणपतिः अधिपतिः तारापतिः श्यामलः इति पितृव्यपुत्रा भ्रातरः प्रसन्न-वृत्तयो गृहीतवाक्याः कृतगुरुपदन्यासा न्यायवादिनः (७) सुकृत-संग्रहाभ्यासगुरवो लब्धसाधुशब्दाः लोक इव व्याकरणेऽपि सकल-पुराणराजर्षिचरिताभिज्ञाः महाभारतभावितात्मानो विदित-सकलेतिहासा महाविद्वांसो महाकवयो महापुरुषवृत्तान्तकुतू-हलिनः सुभाषितश्रवणरसायनवितृष्णा वयसि वचसि यशसि तपसि महसि वपुषि यजुषि च प्रथमाः पूर्व्वमेव कृतसङ्कथा विस्मितमुखधवलितकपोलोदराः परस्परस्य मुखानि अवलो-कयन्।

अथ तेषां कनीयान् कमलदलदीर्घलोचनः श्यामलो नाम बाणस्य प्रेयान् प्राणानामपि वर्षयिता दन्तसंघर्षैः सप्रणयं दशन-ज्योत्स्नास्नपितककुभा मुखेन्दुना बभाषे तात बाण द्विजानां राजा गुरुदारग्रहणमकार्षीत्। पुरूरवा ब्राह्मणधनतृष्णया दयितेन आयुषा व्ययुज्यत। नहुषः परकलत्राभिलाषी महाभुजङ्ग आसीत्। ययातिः आहितब्राह्मणीपाणिग्रहणः पपात। सुद्युम्नः स्त्रीमय एवाभवत्। सोमकस्य प्रख्याता जन्तुवधनिर्घृणता। मान्धाता मार्गणव्यसनेन सपुत्रपौत्रो रसातलमगात्। पुरुकुत्सः कुत्सितं कर्म्म तपस्व्यपि मेकलकन्यकायामकरोत्। कुवलयाश्वो भुजङ्गलोकपरिग्रहात् अश्वतरकन्यकाम् (८) अपि न परिजहार। पृथुः प्रथमपुरुषकः परिभूतवान् पृथिवीम्। नृगस्य कृकलासभावे वर्णसङ्करः समदृश्यत। सौदासेन न रक्षिता पर्य्याकुलीकृता

७ न्याय वादिन

८ अश्वतरकन्याम्। १।

क्षितिः (९)। नलमवशमक्षहृदयं कलिरभिभूतवान्। संवरणो मित्रदुहितरि विक्लवतामगात्। दशरथ इष्टरामोन्मादेन मृत्युम् अवाप। कार्त्तवीर्य्यो गोब्राह्मणातिपीड़नेन निधनमयासीत्। मरुत्त इष्टबहुसुवर्णकोऽपि देवद्विजबहुमतो न बभूव। शन्तनुरपि व्यसनादेकाकी वियुक्तो वाहिन्या विपिने विललाप (१०)। पाण्डुः वनमध्यगतो मत्स्य इव मदनरसाविष्टः प्राणान् मुमोच। युधिष्ठिरो गुरुभयविषसहृदयः समरशिरसि सत्यमुत्सृष्टवान्। इत्थं नास्ति राजत्वमपकलङ्कम् ऋते देवदेवादमुतः सर्व्वद्वीपभुजो हर्षात्। अस्य हि बहून्याश्चर्य्याणि श्रूयन्ते तथाहि अत्र बलजिता निश्चलीकृताः चलन्तः कृतपक्षाः क्षितिभृतः। अत्र प्रजापतिना शेषभोगमण्डलस्य उपरि क्षमा कृता। अत्र पुरुषोत्तमेन सिन्धुराजं प्रमथ्य लक्ष्मीः आत्मीकृता। अत्र बलिना मोचितभूभृद्वेष्टनो मुक्तो महानागः। अत्र देवेनाभिषिक्तः कुमारः। अत्र स्वामिना एकप्रहारपातिता-रातिना प्रख्यापिता (११) शक्तिः। अत्र नरसिंहेन स्वहस्तविश-सितारातिना प्रकटीकृतो विक्रमः। अत्र परमेश्वरेण तुषारशैल-भुवो दुर्गाया गृहीतः करः। अत्र लोकनाथेन दिशां मुखेषु परिकल्पिता लोकपालाः सकलभुवनकोशश्चाग्रजन्मनां विभक्तः। इत्येवमादयः प्रथमकृतयुगस्येव (१२) दृश्यन्ते महासमारम्भाः (१३)। अतोऽस्य सुगृहीतनाम्नः पुण्यराशेः पूर्व्वपुरुषवंशानुक्रमेणादितः प्रभृति चरितमिच्छामः श्रोतुम्। सुमहान् कालो नः शुश्रूष-माणानाम्। अयस्कान्तमणय इव लोहानि नीरसनिष्ठुराणि

(९) भूमि। १।
(१०) विललाप विजने। १।
(११) एकप्रहारप्रपातितारातिना ख्यापिता। १।
(१२) कृतयुगस्येव। २। २।
(१३) महान्तः संरम्भाः। २। २

क्षुल्लकानामप्याकर्षन्ति मनांसि भवतां(१४) गुणाः किमुत स्वभाव-सरसहृदूनीतरेषाम् । कस्य न द्वितीयमहाभारते भवेदस्य चरिते कुतूहलम् । चाचटो भवान् । भवतु भार्गवोऽयं वंशः शुचिनानेन राजर्षिचरित(१५) श्रवणेन सुतरां शुचितरः । इत्येवमभिधाय तूष्णीमभूत् ।

बाणस्तु विहस्याब्रवीत् आर्य्य न युक्तमनुरूपमभिहितम् । अघटमानमनोरथमिव भवतां कुतूहलमवकल्पयामि । शक्याशक्य-परिसङ्ख्यानशून्याः प्रायेण स्वार्थलघवः । परगुणानुरागिणी प्रिय-जनकथाश्रवणरसरभसमोहिता च मन्ये भवतामपि मतिरपहरति प्रविवेकम् । पश्यत्वार्य्यः क्व परमाणुपरिमाणं बटुहृदयं क्व समस्त-ब्रह्मस्तम्बव्यापि देवस्य चरितम् । क्व परिमितवर्णवृत्तयः कतिपये शब्दाः क्व सङ्ख्यातिगास्तद्गुणाः । सर्व्वज्ञस्याप्ययमविषयः वाच-स्पतेरप्यगोचरः सरस्वत्या अप्यतिभारः किमुतास्मद्विधस्य । कः खलु पुरुषायुषशतेनापि(१६) शक्नुयादविकलमस्य चरितं वर्णयितुम् एकदेशे तु यदि कुतूहलं वः सज्जा वयम् । इयमधिगतकतिपया-क्षरलवलघीयसी जिह्वा क्वोपयोगं गमिष्यति । भवन्तः श्रोतारः वर्ण्यते हर्षचरितं किमन्यत् । अद्य तु परिणतप्रायो दिवसः । पश्चाल्लम्बमानकपिलकिरणजटाभारभास्वरो भगवान् भार्गवो राम इव समन्तपञ्चकरुधिरमहाह्रदे निमज्जति (१७) सन्ध्यारागपटले पूषा । श्वो निवेदयितास्मीति । सर्व्वे च (१८) ते तथेति प्रत्य-पद्यन्त । नातिचिरादुत्थाय सन्ध्यामुपासितुं शोणमयासीत् ।

अथ मधुमदपल्लवितमालवीकपोलकोमलातपे मुकुलितेऽह्नि

(१४) महतां मनांसि । १ । (१५) राजर्षिवंश । २ । ३ ।
(१६) पुरुषायुषशतेन । १ । (१७) मज्जति । १ । (१८) सर्व्वे । २ । ३ ।

कमलिनीमलनादिव लोहिततमे तमोलिहि रवौ लम्बमाने रविरथतुरगमार्गानुसारेण यममहिष इव धावति नभसि तमसि क्रमेण च मुक्ततापसकुटीरकपटलावलम्बिषु रक्तातपच्छेदैः सह संहृतेषु वल्कलेषु, कलिकल्मषमुषि पुष्णाति गगनमग्निहोत्रधामधूमे सनियमे यजमानजने, मौनव्रतिनि विहारवेलाविलोले पर्य्यटति पत्नीजने विकीर्य्यमाणहरितश्यामाकयालिपूलिकासु दुग्धासु होमकपिलासु हूयमाने वैतानतनूनपाति पूतविष्टरोपविष्टे कृष्णाजिन जटिले जटिनि जपति वटुजने, ब्रह्मासनाध्यासिनि ध्यायति योगिगणे तालध्वनिधावमानानन्तान्तेवासिनि अलसहृद्स्रोत्रियानुमतेन गलद्ग्रन्थदण्डकोङ्कारिणि सन्ध्या समवधारयति, वठरविटवटुसमाजे समुन्मज्जति च ज्योतिषि तारकाख्ये खे प्राप्ते प्रदोषारम्भे भवनमागत्योपविष्टः स्निग्धैर्बन्धुभिश्च सार्द्धं तथैव गोष्ठ्या तस्थौ । नीतप्रथमयामश्च गणपतेर्भवने (१९) परिकल्पितं शयनीयमसेवत । दूरतरेषान्तु सर्व्वेषां निमीलितदृशामप्यनुपजातनिद्राणां कमलवनानामिव सूर्य्योदयं प्रतिपालयता कुतूहलेन कथमपि सा क्षपा क्षयमगच्छत् (२०) ।

अथ यामिन्यास्तुर्य्ये यामे प्रतिबुद्धः स एव बन्दी श्लोकद्वयम् अगायत्

पश्चादङ्घ्रिं प्रसार्य्य त्रिकनतिविततं द्राघयित्वाङ्गमुच्चैः
आसज्याभुग्नकण्ठो मुखमुरसि सटा धूलिधूम्रा विधूय ।
घासग्रासाभिलाषादनवरतचलत्प्रोथतुण्डस्तुरङ्गो
मन्दं शब्दायमानो विलिखति शयनादुत्थितः क्ष्मां खुरेण ॥

(१९) गणपतिभवने । १ । (२०) क्षयमगात् । १ ।

कुर्व्वन्नाभुग्नपृष्ठो मुखनिकटकटिः कन्धरामातिरश्चीं
लोलेनाहन्यमानं तुहिनकणमुचा चञ्चता केसरेण।
निद्राकण्डूकषायं कषति निबिडितश्रोत्रशुक्तिस्तुरङ्गः
त्वङ्गत्पक्ष्माग्रलग्नप्रतनुबुसकणां कोणमक्ष्णः खुरेण॥

बाणस्तु तत् श्रुत्वा समुत्सृज्य निद्राम् उत्थाय प्रक्षाल्य वदनम् उपास्य भगवतीं सन्ध्याम् उदिते भगवति सवितरि गृहीतताम्बूलः तत्रैवातिष्ठत्। अत्रान्तरे सर्व्वोऽस्य ज्ञातयः समाजग्मुः परिवार्य्य चासाञ्चक्रुः। असावपि पूर्व्वोद्वातेन विदिताभिप्रायस्तेषां पुरो हर्ष-चरितं कथयितुमारेभे।

श्रूयताम्

अस्ति पुण्यकृतामधिवासो वासवावास इव वसुधामवतीर्णः सततमसङ्कीर्णवर्णव्यवहारस्थितिः कृतयुगव्यवस्थः स्थलकमल(२१) बहुलतया पीत्वोन्मुक्तमानबृणालैरुन्नीतमेदिनीसारगुणैरिव कृत-मधुकरकोलाहलैर्हलैरुल्लिख्यमानक्षेत्रः क्षीरोदपयःपायिपयोद-सिक्ताभिरिव पुण्ड्रेक्षुवाटसन्ततिभिर्निरन्तरः प्रतिदिशमपूर्व्वपर्व्वतकैः इव खलधानधामभिर्विभज्यमानैः सम्यकूटैः सङ्कटसीमान्तः समन्तादुद्धातघटीसिच्यमानैर्जीरकजूटैर्जटिलितभूमिः उर्व्वरावरी-योभिः शालीयैरलङ्कृतः पाकविशराबराजमाषनिकरकिर्म्मीरितैश्च स्फुटितमुद्गफलकोषीकपिशितैर्गोधूमधामभिः स्थलीपृष्ठैरधिष्ठितः महिषपृष्ठप्रतिष्ठितगायद्गोपालपालितैश्च कीटपटललम्पटचटकानु-सृतैरचटुचटितघण्टाचटीरटितरमणीयैरटद्भिरटवीं उरटचमपीतम् आचयाषाढ्यां(२२)बहुविभक्तं क्षीरोदमिव क्षीरं क्षरद्भिर्व्योमव्यक्षेत्तु-तृणतृपैर्गोधनैर्धवलितविपिनः विविधमखक्षोमभ्रमान्ध्यमसमन्युमुक्तैः

लोचनैरिव सकलसङ्ख्यैः कणागारैः शारीकृतोद्देशः(२१) धवलधूली-
मुचा केतकीवनानां रजोभिः पाण्डुरीकृतैः प्रमथोद्धूलनधूसरैः शिव-
पुरस्येव प्रवेशैः प्रदेशैरुपशोभितः शाककन्दलश्यामलितग्रामोपकण्ठ
काश्यपीपृष्ठः पदे पदे करभपालीभिः पीलुपल्लवप्रस्फोटितैः करपुट-
पीडितमातुलुङ्गीदलरसोपलिप्तैः स्वेच्छाविचितकुङ्कुमकेसरक्षतपुष्प-
प्रकरैः प्रत्यग्रफलरसपानसुखसुप्तपथिकैः वनदेवतादीयमानाक्षत
रसप्रपागृहैरिव द्राक्षामण्डपैः स्फुरत्फलानाञ्च वीजलग्नशुकचञ्चु-
रागाणामिव समारूढकपिकुलकपोलसन्दिह्यमानकुसुमानां दाडि-
मीनां वनैर्विलोभनीयोपनिर्गमः वनपालपीयमाननारिकेलरसा-
सवैश्च पथिकलोकलुप्यमानपिण्डखर्ज्जूरैर्गोलाङ्गूललिह्यमानमधुरा-
मोदपिण्डीरसैश्चकोरचञ्चुजर्ज्जरिताक्कैरुपवनैरभिरामः तुङ्गा-
र्ज्जुनपालीपरिवृतैश्च गोकुलावतारकलुषितकूलकीलालैरध्वगशत-
शरण्यैररण्यधरावन्धैरवन्ध्यवनरन्ध्रः करभीयकुमारकपाल्यमानैः
पौष्ट्रकैरौरभ्रकैश्च कृतसम्बाधः दिशि दिशि रविरथतुरगविलो-
भनायेव विलोठनच्छुरितकुङ्कुमस्थलीरससमालब्धानामुत्प्रोथपुटैः
उन्मुखैरुदरशायिकिशोरकजवजननाय प्रभञ्जनमिव चापिवन्तीना
वातहरिणीनामिव स्वच्छन्दचारिणीनां वडवानां वृन्दैर्विचरद्भिः
चाचितः अनवरतकृतधूमान्धकारप्रवृत्तैर्हंसयूथैरिव यागैर्धवलित-
भुवनः सङ्गीतगतमुरजरवमत्तैर्मयूरैरिव विभवैर्मुखरितजीवलोकः
शशिकरावदातवृत्तैर्मुक्ताफलैरिव गुणिभिः प्रसाधितः पथिकशत-
विलुप्यमानस्फीतफलैर्महातरुभिरिव सर्व्वातिथिभिरभिगमनीयः
मृगमदपरिमलवाहिमृगरोमाच्छादितैर्हिमवत्पादैरिव महत्तरैः
स्थिरीकृतः प्रोहण्डसच्चपत्रोपविष्टद्विजोत्तमैर्नारायणनाभिमण्डलैः

(२१) शारितोद्देशः । १ ।

इव तोयाशयैर्मण्डितः मथितपयःप्रवाहप्रक्षालितक्षितिभिः क्षीरोदमथनारम्भैरिव महाघोषैः पूरिताशः श्रीकण्ठो नाम जनपदः ।

यत्र त्रेताग्निधूमाश्रुपातजलक्षालिता इवाक्षीयन्त कुदृष्टयः । पच्यमानचयनेष्टकादहनदग्धानीव नादृश्यन्त दुरितानि । छिद्यमानयूपदारुपरशुपाटित इव व्यशीर्यताधर्मः । मखाग्निविषमजलधरधाराधौत इव ननाश वर्णसङ्करः । दीयमानानेकगोसहस्रहुङ्कारखण्ड्यमान इवापलायत कलिः । सुरालयशिलापट्टमटङ्कनिकरनिकृत्ता इव व्यशीर्यन्त विपदः । महादानविधानकलकलाभिद्रुता इव प्राद्रवन्नुपद्रवाः । दीप्यमानमन्त्रमहानसमहस्र(२४)सन्तापिता इव अलीयन्त व्याधयः । वृषविवाहप्रहतपुण्यपटहपटुरवत्रासिता इव नोपासर्पन्नपमृत्यवः । सन्ततब्रह्मघोषघर्घरीकृता इवापजग्मुः ईतयः । धर्माधिकार(२५) परिभूतमिव न प्राभवद्दैवम् (२६) ।

तत्र चैवंविधे नानारामाभिरामकुसुमगन्धपरिमलसुभगो यौवनारम्भ इव भुवनस्य कुङ्कुमजलपिञ्जरितवङ्कमणिपीसहस्रशोभितोऽन्तःपुरनिवेश इव धर्मस्य मरुद्धूयमानचमरीबालव्यजनधवलितप्रान्तः एकदेश इव सुरराज्यस्य ज्वलन्मखशिखिसहस्रदीप्यमानदशदिगन्तः शिविरसन्निवेश इव कृतयुगस्य पद्मासनस्थितब्रह्मर्षिध्यानाधीयमानसकलाकुशलप्रशमः प्रथमावतार इव ब्रह्मलोकस्य कलकलमुखरमहावाहिनीशतसङ्कुलो विक्षेप इवोत्तरकुरूणाम् ईश्वरमार्गणसन्तापानभिज्ञसकलजनो विजिगीषुरिव त्रिपुरस्य सुधारससिक्तधवलगृहपङ्क्तिपाण्डुरः प्रतिनिधिरिव चन्द्रलोकस्य मधुमदमत्तकाशिनीभूषणरवभरितभवनो नामाभिहार इव कुबेरनगरस्य स्थाण्वीश्वराख्यो जनपदविशेषः ।

(२४) महानस।२।१।   (२५) धर्माधिकार।२।   (२६) दैवम्।१।

यत्तपोवनमिति मुनिभिः कामायतनमिति वेश्याभिः सङ्गीतशालेति लासकैः यमनगरमिति शत्रुभिः चिन्तामणिभूमिरिति अर्थिभिः वीरक्षेत्रमिति शस्त्रोपजीविभिः गुरुकुलमिति विद्यार्थिभिः गन्धर्व्वनगरमिति गायनैः विश्वकर्म्ममन्दिरमिति विज्ञानिभिः लाभभूमिरिति वैदेहकैः द्यूतस्थानमिति वन्दिभिः साधुसमागम इति सद्भिः वज्रपञ्जरमिति शरणागतैः विटगोष्ठीति विदग्धैः सुकृतपरिणाम इति पथिकैः असुरविवरमिति वार्तिकैः शाक्याश्रम इति शमिभिः अप्सरःपुरमिति कामिभिः महोत्सवसमाज इति चारणैः वसुधारेति विप्रैरग्टह्यत ।

यत्र च मातङ्गगामिन्यः शीलवत्यश्च गौर्य्यो विभवरताश्च श्यामाः पद्मरागिण्यश्च धवलद्विजशुचिवदनाः मदिरामोदिश्वसनाश्च चन्द्रकान्तवपुषः शिरीषकोमलाङ्गश्च अभुजङ्गगम्याः कञ्चुकिन्यश्च पृथुकलत्रश्रियः दरिद्रमध्यकलिताश्च लावण्यवत्यो मधुरभाषिण्यश्च अप्रमत्ताः प्रसन्नोज्ज्वलरागाश्च अकौतुकाः प्रौढ़ाश्च प्रमदाः ।

यत्र च प्रमदाना चक्षुरेव सहजं मुण्डमालामण्डनं भारःकुवलयदलदामानि । अलकप्रतिबिम्बान्येव कपोलतलगतानि अक्लिष्टाः श्रवणावतंसाः पुनरुक्तानि तमालकिशलयानि । प्रियकथा एव सुभगाः कर्णालङ्काराः आड़म्बरः कुण्डलादिः । कपोला एव सततमालोककारकाः विभवो निशासु मणिप्रदीपाः । निश्वासाकृष्टमधुकरकुलान्येव रमणीयं मुखावरणं कुलस्त्रीजनाचारो आलिका । वाणी एव मधुरा वीणा वाद्यविज्ञानं तन्त्रीताडनम् । श्वासा एवातिशयसुरभयः पटवासाः निरर्थकाः कर्पूरपांशवः । अधरकान्तिविसरएवोज्ज्वलतरोऽङ्गरागः निर्गुणो लावण्यकलङ्कः कुङ्कमपङ्कः । बाहव एव कोमलतमाः परिहास-

प्रहारवेत्रलताः निष्प्रयोजनान्यर्गलानि। यौवनोष्मस्वेदबिन्दव एव विदग्धाः कुचालङ्कृतयः हारास्तु भाराः (२७)। श्रोण्य एव विशालस्फाटिकशिलातलचतुरस्रा रागिणां विभ्रमकारणम् अनिमित्तं भवनमणिवेदिकाः। कमललोभनिलीनान्यलिकुलान्येव मुखराणि पदाभरणकानि (२८) निष्फलानीन्द्रनीलनूपुराणि। नूपुररवाहूता भवनकलहंसा एव समुचिताः सञ्चरणसहायाः ऐश्वर्य्यप्रपञ्चाः परिजनाः।

तत्र च साक्षात् सहस्राक्ष इव सर्व्ववर्णधरं धनुर्दधानो मेरुमय इव कल्याणप्रकृतित्वे मन्दरमय इव लक्ष्मीसमाकर्षणे जलनिधिमय इव मर्य्यादायाम् आकाशमय इव शब्दप्रादुर्भावे शशिमय इव कलासंग्रहे वेदमय इव सूक्तिमालापत्वे धरणिमय इव लोकधृतिकरणे पवनमय इव सर्व्वपार्थिवरजोविकारहरणे गुरुर्वचसि पृथुरुरसि विशालो मनसि जनकस्तपसि सुयात्रस्तेजसि सुमन्त्रो रहसि बुधः सदसि अर्ज्जुनो यशसि भीष्मो धनुषि निषधो वपुषि शत्रुघ्नः समरे शूरः शूरसेनाक्रमणे दक्षः प्रजाकर्म्मणि सर्व्वादिराजतेजःपुञ्जनिर्म्मित इव राजा पुष्पभूतिरिति नाम्ना बभूव।

पृथुना गौरियं कृतेति यः स्पर्द्धमान इव सर्व्वां महिषीं चकार। निसर्गस्वैरिणी स्वच्छन्दानुरोधिनी (२९) भवति हि महतां मतिः। यतस्तस्य केनचिदनुपदिष्टा सहजैव शैशवादारभ्य अन्यदेवताविमुखी (३०) भगवति भक्तिसुलभे भुवनभर्त्तरि भूतभावने भवच्छिदि भवे भूयसी भक्तिरभूत्। अतनुतपभयजपज्ञाविधिनि

(२७) हारकृत भार। १।
(२८) पादाभरणकानि। १।
(२९) स्वच्छन्दानुरोधिनी। १।२।
(३०) अनन्यदेवताभक्ते। १।
अनन्यदेवताविमुखी। २।
अनन्यदेवता। ३।

स्वप्नेऽप्याकारमकरोत् । अजम् अजरम् (३१) अमरगुरुम् असुरपुर-रिपुम् अपरिमितगणपतिम् अचलदुहितृपतिम् अखिलभुवनकृत-चरणनतिं पशुपतिं प्रपन्नोऽन्यदेवताशून्यममन्यत त्रैलोक्यम् । भर्त्तृचित्तानुवर्त्तिन्यश्चानुजीविनां प्रकृतयः । तथाहि गृहे गृहे भग-वानपूज्यत खण्डपरशुः । बकुरस्य शोमालवालविलीयमानवहल-गुग्गुलुगन्धगर्भाः स्नपनक्षीरशीकरक्षोदक्षारिणः बिल्वपल्लवदाम-दलोद्वाहिनः पुण्यविषयेषु बान्धवः । शिवसपर्य्यासमुचितैरुपायनैः प्राभृतैश्च पौराः पादोपजीविनः सचिवा भुजबलनिर्ज्जिताश्च करदी-कृता महासामन्तास्तं सिषेविरे । तथाहि कैलासकूटधवलैः कनक-पत्रलतालङ्कृत (३२) विषाणकोटिभिर्महाप्रमाणैः सन्ध्याबलिवृषैः सौवर्णैश्च स्नपनकलसैः अर्घभाजनैश्च धूपपात्रैश्च पुष्पपटैश्च मणि-यष्टीप्रदीपैश्च ब्रह्मसूत्रैश्च महार्हमाणिक्यखण्डखचितैश्च मुखकोषैः परितोषमस्य मनसि चक्रुः । अन्तःपुराण्यपि स्वयमारब्धबालेय-तण्डुलकण्डनानि (३३) देवगृहोपलेपनलोहिततरकरकिसलयानि कुसुमग्रथनव्यग्रसमस्तपरिजनानि तस्याभिलषितमन्वयर्त्तन्त । तथाच परममाहेश्वरः स भूपालो लोकतः शुश्राव भुवि भगवन्तम् अपरमिव साक्षात् दक्षमखमथनं दाक्षिणात्यं बहुविधविद्याप्रभाव-प्रख्यातैर्गुणैः शिष्यैरिवानेकसहस्रसङ्ख्यैर्व्याप्तसमस्तलोकं भैरवाचार्य्य-नामानं महाशैवम् । उपनयन्ति हि हृदयमदृष्टमपि जनं शील-संवादाः । यतः स राजा श्रवणसमकालमेव तस्मिन् भैरवाचार्य्ये भगवति द्वितीय इव कपर्द्दिनि दूरगतेऽपि (३४) गरीयसीं बबन्ध भक्तिम् आचकाङ्क्ष च मनोरथैरप्यस्य सर्व्वथा (३५) दर्शनम् ।

(३१) अजम् अजरम् अमरम् । २ । (३२) कनकपत्रालङ्कृत । २ ।
(३३) खण्डनानि । १ । २ । (३४) दूरगतोऽपि । २ । (३५) सर्व्वदा । २ ।

अथ कदाचित् पर्य्यस्तेऽस्ताचलचुम्बिनि वासरे अन्तःपुरवर्त्तिनं राजानमुपगत्य प्रतीहारी विज्ञापितवती देव द्वारि परिव्राडास्ते कथयति च भैरवाचार्य्यवचनादेवमनुप्राप्तोऽस्मीति। राजा तु तत् श्रुत्वा सादरं क्वासौ आनयाशैव प्रवेशयैनमिति चाब्रवीत्। तथा चाकरोत्प्रतीहारी। नचिराच्च प्रविशन्तं प्रांशुमाजानुभुजं भैक्षान्नाममपि स्थूलास्थिभिरवयवैः पीवानमिवोपलक्ष्यमाणं पृथूत्तमाङ्गम् उत्तुङ्गवलिभङ्गभ्रूपुटललाटं निम्नांसगण्डकूपकं मधुबिन्दुपिङ्गलपरिमण्डललोचनम् ईषदावक्रघोणम् अतिप्रलम्बैककर्णपाशम् अलाबुबीजविकटोन्नतदन्तपङ्क्तिं तुरगायताधरलेखं लम्बचिबुकायततरवदनम् अंसावलम्बिना काषायेण योगपट्टकेन विरचितवैकक्षकं हृदयमध्यनिबद्धग्रन्थिना च रागेणेव स्वच्छया; कृतेन धातुरसारुणेन कर्पटेन कृतोत्तरासङ्गं पुनरुक्तबालप्रवालप्रवेष्टनमिव स्थलमूलेन बहुवल्कपरिशोधनबन्धलक्षिततनुना कौपीनसमार्थिपर्णेण खर्ज्जूरपुटसमुद्गकगर्भीकृतभिक्षाकपालकेन दारकफलकतवर्तिकोषत्रियष्टिनिविष्टकमण्डलुना वल्कलपादितपादुकावस्थानेन स्थूलदशास्त्रनिर्यन्त्रितपुस्तिकापूलिकेन वामकरस्थेन योगभारकेण अध्यासितस्कन्धम् इतरकरगृहीतवेत्रासनं मस्करिणमद्राक्षीत्। क्षितिपतिरपि उपगतमुचितेन चैनमादरेणाभ्यग्रहीत् आसीनश्च पप्रच्छ क्व भैरवाचार्य्य इति। सादरनरपतिवचनमुदितमनास्तु परिव्राट् तमुपनगरं सरस्वतीतटवनावलम्बिनि शून्यायतने स्थितम् आचचक्षे। भूयश्चाबभाषे अर्च्चयति हि महाभागं भगवान् आशीर्व्वचसा। इत्युक्त्वा चोपनिन्ये योगभारकादाकृष्य भैरवाचार्य्यप्रहितानि स्रवन्ति बहलालोकमिवान्तःपुराणि पञ्च राजतानि पुण्डरीकाणि।

नरपतिस्तु प्रियजनप्रणयभङ्गकातरो दाक्षिण्यमनुरुध्यमानो ग्रहणलाघवञ्च लङ्घयितुमसमर्थो दोलायमानेन मनसा स्थित्वा कथं कथमप्यतिसौजन्यनिघ्नस्तानि जग्राह जगाद च सर्व्वफलप्रसवहेतुः शिवभक्तिरियं नो मनोरथदुर्लभानि फलति फलानि येनैवमस्मासु प्रीयते भगवान् भक्तगुरुर्भैरवाचार्य्यः। श्वो द्रष्टास्मि भगवन्तम्। इत्युक्त्वा च मस्करिणं व्यसर्जयत् अनया च वार्त्तया परां मुदमवाप।

अपरेद्युश्च प्रातरेवोत्थाय वाजिनमधिरुह्य समुच्छ्रितश्वेतातपत्रः समुद्धूयमानधवलचामरयुगलः कतिपयैरेव राजपुत्त्रैः परिवृतो भैरवाचार्य्यं सवितारमिव शशी द्रष्टुं प्रतस्थे। गत्वा च किञ्चिदन्तरं तदीयमेवाभिमुखमापतन्तमन्यतमं शिष्यमद्राक्षीत् अप्राक्षीच्च क्व भगवानास्ते इति। सोऽकथयत् अस्य जीर्णमातृगृहस्योत्तरेण विल्ववाटिकामध्यास्ते इति। गत्वा च तं प्रदेशमवततार प्रविवेश च विल्ववाटिकाम्।

अथ महतः कार्पटिकवृन्दस्य मध्ये प्रातरेव स्नातं दत्ताष्टपुष्पिकम् अनुष्ठिताग्निकार्य्यं कृतभस्मरेखापरिहारपरिकरे हरितगोमयोपलिप्तक्षितितलवितते व्याघ्रचर्म्मण्युपविष्टं कृष्णकम्बलप्रावरणनिभेन असुरविवरप्रवेशाशङ्कया पातालान्धकारावासमिवाभ्यस्यन्तम् उन्मिषता विद्युत्कपिलेनात्मतेजसा महामांसविक्रयक्रीतेन मनःशिलापङ्केनेव शिष्यलोकं लिम्पन्तं जटीकृतैकदेशलम्बमानरुद्राक्षशङ्खगुटिकेनोर्द्ध्वबद्धेन शिखापाशेन बध्नन्तमिव विद्यावलेपदुर्व्विदग्धान् उपरि सञ्चरतः सिद्धान् धवलकतिपयशिरोरुहेण वयसा पञ्चपञ्चाशतं वर्षाण्यतिक्रामन्तं खालित्यक्षीयमाणशङ्खलोमलेखम् लोमशकर्णशष्कुलीप्रदेशं पृथुललाटतटं तिरश्चा भस्म-

ललाटिकया बद्धया शिरोऽर्द्धदग्धगुग्गुलसन्तापस्फुटितकपाला-
स्थिपाण्डुरराजिशङ्कामिव जनयन्तं सकललाटवलिभङ्गसङ्को-
चितकूर्च्चभागं बभ्रुभासं भ्रूसङ्गत्या निरन्तरामायामिनीम् एका-
मिव भ्रूलेखां बिभ्राणम् ईषत्काचकाचरकनीनिकेन रक्तापाङ्ग-
निर्गतांशुप्रतानेन मध्यधवलभासा इन्द्रायुधेनेवातिदीर्घेण लोचन-
युगलेन परितो मण्डामण्डलमिव (३६) अनेकवर्णरागमालिखन्तं
सितपीतलोहितपताकावलीशबलं शिवबलिमिव दिक्षु विक्षिपन्तं
ताम्रतुण्डकोटिकुञ्जाग्रघोणं दूरविदीर्णश्वक्कसंश्लिष्टकपोलं किञ्चिद्-
दन्तुरतया सदाहृदयसन्निहितहरमौलिचन्द्रातपेनेव निर्गच्छता
दन्तालोकेन धवलयन्तं दिशो जालकं जिह्वाग्रस्थितसर्व्वविद्या-
संहितातिभारेणेव मनाक्प्रलम्बितोष्ठं प्रलम्बश्रवणपालीप्रेङ्खिताभ्यां
स्फाटिककुण्डलाभ्यां शुक्रबृहस्पतिभ्यामिव सुरासुरविजयविद्या-
सिद्धिश्रद्धयानुबध्यमानं बहुविविधौषधिमन्त्रसूत्रपङ्क्तिना सलोह-
वलयेनैकप्रकोष्ठेन शङ्खखण्डं पृष्णो दन्तमिव भगवता भवेन भग्नं
भक्त्या भूषणीकृतं कलयन्तम् अखिलरसकूपोदञ्चनघटीयन्त्रमालाम्
इव रुद्राक्षमाला दक्षिणेन पाणिना भ्रमयन्तम् उरसि दोलाय-
मानेनापिङ्गलाग्रेण कूर्च्चकलापेन सम्मार्जयन्तमिवान्तर्गतं निज-
रजोनिकरम् अतिनिविडनीललोमसमण्डलनिचितञ्च ध्यानलब्धेन
ज्योतिषा दग्धमिव हृदयदेशं दधानम् ईषत्प्रशिथिलवलिवलय-
बध्यमानतुन्दम् उपचीयमानस्निग्धत्वपिण्डकं पाण्डुरपवित्र-
क्षौमाहृतकौपीनं सावष्टम्भपर्य्यङ्कबन्धमण्डलितेनाहृतफेनधवलवचा
योगपट्टकेन· वासुकिनेवाप्रतिहतानेकमन्त्रप्रभावाविर्भूतेन प्रद-
क्षिणीक्रियमाणम् अवनतामरमस्तकुमारतलस्य पादयुगलस्य

(३६) मण्डलमि० । १ ।

निर्म्मलैर्नखमयूखजालकैर्जर्जरयन्तमिव महानिधानोद्धरणरसेन रसातलं तोयक्षालितशुचिना धौतपादुकायुगलेन हंसमिथुनेनेव भागीरथीतीर्थयात्रापरिचयागतेनामुच्यमानचरणान्तिकं, शिखर-निखातकुब्जकालायसकण्टकेन वैणवेन विशाखिकादण्डेन सर्व्व-विद्यासिद्धिविघ्नविनायकापनयनाङ्कुशेनेव सततपार्श्ववर्त्तिना विराज-मानम् अबहुभाषिणं मन्दहासिनं सर्व्वोपकारिणं कुमारब्रह्म-चारिणम् अतितपस्विनं महामनस्विनं कृशक्रोधम् अकृशानुरोधं महानगरमिवादीनप्रकृतिशोभितं मेरुमिव कल्पतरुपल्लवराशि-सुकुमारच्छायं कैलासमिव पशुपतिचरणरजःपवित्रितशिरसं शिव-लोकमिव माहेश्वरगणानुयातं (३७) जलनिधिमिवानेकनदनदी-सहस्रप्रक्षालितशरीरं जाह्नवीप्रवाहमिव बहुपुण्यतीर्थस्थानशुचिं धाम धर्म्मस्य तीर्थं तथ्यस्य कोशं कुशलस्य पत्तनं पूततायाः शालां शीलस्य क्षेत्रं क्षमायाः शालेयं शालीनतायाः स्थानं स्थितेः आधारं धृतेः आकरं करुणायाः निकेतनं कौतुकस्य आरामं रामणीयकस्य प्रासादं प्रसादस्य आगारं गौरवस्य समाजं सौजन्यस्य सम्भवं सद्भावस्य कालं कलेः भगवन्तं साक्षादिव विरू-पाक्षं भैरवाचार्य्यं ददर्श।

भैरवाचार्य्यस्तु दूरादेव राजानं दृष्ट्वा शशिनमिव जलनिधिश् चचाल प्रथमतरोत्थितशिष्यलोकश्चोत्थाय प्रत्युज्जगाम समर्पित-श्रीफलोपायनश्च अङ्कुरणसमुन्नीर्य्यमाणगङ्गाप्रवाहह्रादगम्भीरया गिरा स्वस्तिशब्दमकरोत्।

नरपतिरपि प्रीतिविस्तार्य्यमाणधवलिम्ना चक्षुषा प्रत्यर्पयन्निव बहुतराणि पुण्डरीकवनानि (३८) ललाटपट्टपर्य्यस्तेन चोदंशुना

(३७) माहेश्वरगणशतानुयातम्। २। (३८) कमलवनानि। २।

शिखामणिना महेश्वरप्रसादमिव तृतीयनयनोद्गमेन प्रकाशयन् आवर्जितकर्णपल्लवपलायमानमधुकरः शिवसेवासमुन्मूलिताशेषपापलवमुच्यमान इव दूरावनतः प्रणाममभिनवं चकार। आचार्योऽपि आगच्छ अत्रोपविशेति शार्दूलचर्मात्मीयमदर्शयत्। उपदर्शितप्रश्रयस्तु राजा मत्तहंसकलगद्गदस्वरसुभगां मधुररसमयीं महानदीमिव प्रवर्त्तयन् वाचं व्याजहार भगवन् नार्हसि माम् अन्यनृपस्खलितैः खलीकर्त्तुम् अशेषराजकापेक्षिताया हतलक्ष्म्याः खल्वयं शीलापराधः कुविषाददौरात्म्यं वा यदेवमाचरति मयि गुरुः। अभूमिरयमुपचाराणाम्। अलमतियन्त्रणया। दूरस्थितोऽपि मनोरथशिष्यः अयं जनो भवताम्। माननीयश्च गुरुवर्गोल्लङ्घनम् अर्हति गुरोरासनम्। आसताञ्च भवन्त एवात्र। इति व्याहृत्य परिजनोपनीते वाससि निषसाद। भैरवाचार्योऽपि प्रीत्यानतिकमणीयं नृपवचनमनुवर्त्तमानः पूर्ब्बवत्तदेव व्याघ्राजिनमभजत।

आसीने च सराजके परिजने शिष्यजने च समुचितमर्घ्यादिकं चक्रे। क्रमेण च नृपमाधुर्य्यहृतान्तःकरणः शशिकरनिकरविमला दशनदीधितीः स्फुरन्तीः शिवभक्तीरिव साक्षाद्दर्शयन्नुवाच तात अतिनम्रतैव ते कथयति गुणानां गौरवम्। सकलसम्पत्पात्रमसि। विभवानुरूपास्तु प्रतिपत्तयः। अस्मासु प्रभूतवदन्यदृष्टिः अस्ति स्वापतेयेषु। यतः सकलदोषकलापानलेन्धनैर्धनैरविक्रीतं क्वचिच्छरीरकमस्ति। भैक्षरक्षिताः सन्ति प्राणाः। दुष्टश्चीतासि कतिचिद्विद्यन्ते विद्याक्षराणि। भगवच्छिवभट्टारकपादसेवया समुपार्जिता कियत्यपि सञ्चिता पुण्यकणिका। स्वीक्रियतां यदत्रोपयोगार्हम्। प्रतनुगुणग्राह्याणि कुसुमानीव हि भवन्ति सतां मनांसि। अपिच विहत्यन्नता श्रूयमाणा अपि साधवः शब्दा

इव सुधीरेऽपि हि मनसि यशांसि कुर्व्वन्ति। विवरं विशतः कुतूहलस्य फेनधवलैः स्रोतोभिरिवापह्रियमाणो गुणगणैरानीतोऽस्मि कल्याणिना इति।

राजा तु तं प्रत्यवादीत् भगवन् अनुरक्तेष्वपि शरीरादिषु साधूना स्वामिन एव प्रणयिनः।। युष्मद्दर्शनादुपार्जितमेव चापरिमितं कुशलजातम्। अनेनैवागमनेन स्पृहणीयं पदमारोपितोऽस्मि गुरुणा। इति विविधाभिश्च कथाभिश्चिरं स्थित्वा गृहमगात्।

अन्यस्मिन् दिवसे भैरवाचार्य्योऽपि राजानं द्रष्टुं ययौ। तस्मै च राजा सान्तःपुरं सपरिजनं सकोषमात्मानं निवेदितवान्। स च विहस्योवाच तात क्व विभवाः क्व च वयं वनवह्निताः। धनोष्मणा म्लायत्यलं लतेव मनस्विता। खद्योतानामिवास्माकमियमपरोपतापिनी राजते तेजस्विता। भवादृशा एव भाजनं भूतेः। इति स्थित्वा च कञ्चित् कालं जगाम।

परिव्राट् तेनैव क्रमेण पञ्च पञ्च राजतानि पुण्डरीकाण्युपायनीचकार। एकदा तु श्वेतकर्पटावृतं किमप्यादाय प्राविशत्। उपविश्य च पूर्व्ववत् स्थित्वा मुहूर्त्तमब्रवीत् महाभाग भवन्तमाह भगवान् यथा अस्मच्छिष्यः पातालस्वामिनामा ब्राह्मणः। तेन ब्रह्मराक्षसहस्तादपहृतो महासिरट्टहासनामा। सोऽयं भवद्भुजयोग्यो गृह्यताम्। इत्यभिधाय अपहृतकर्पटावच्छादनात् परिवारात् आचकर्ष शरद्गगनमिव पिण्डता नीतं कालिन्दीप्रवाहमिव स्तम्भितजलं नन्दकजिगीषया कृष्णकोपितं कालियमिव कृपाणतां गतं लोकविनाशाय प्रकाशितधारासारं प्रलयकालमेघखण्डमिव नभस्तलात् पतितं दृश्यमानविकटदन्तमण्डलं हासमिव हिंसायाः

हरिणाङ्कदलमिव कृतदृढमुष्टिग्रहं सकलभुवनजीवितापहरण-क्षमेण कालकूटेनेव निर्म्मितं कृतान्तकोपानलतप्तेनेवायसा घटितम् अतितीक्ष्णतया पवनस्पर्शेनापि रुषेव क्वणन्तं मणिसभा-कुट्टिमपतत्प्रतिबिम्बच्छद्मना आत्मानमपि द्विधेव पाटयन्तम् अरि-शिरश्छेदलग्नैः कचैरिव किरणैः करालितधारं मुहुर्मुहुस्तडि-दुन्मेषतरलैः प्रभाचक्रच्छुरितैर्जर्जरितातपं खण्डशश्छिन्नमिव दिवसं कटाक्षमिव कालरात्रेः कर्णोत्पलमिव कालस्य ओङ्कारमिव क्रौर्य्यस्य अलङ्कारमहङ्कारस्य कुलमित्रं कोपस्य द्वैतं दर्पस्य सु-सहायं साहसस्य अपत्यं मृत्योः आगमनमार्गं लक्ष्म्याः निर्गमन-मार्गं कीर्त्तेः कृपाणम्।

अवनिपतिस्तु तं गृहीत्वा करेणायुधप्रीत्या प्रतिमानिभेन आलिङ्गन्निव सुचिरं ददर्श सन्दिदेश च वक्तव्यो भगवान् परकृत्य-ग्रहणावधारदुर्व्विदग्धमपि किं मे मनो गुणहृदये न शक्नोति वचन-व्यतिक्रमव्यभिचारमाचरितुमिति। परिव्राट् तु गृहीते तस्मिन् परितुष्टः स्वस्ति भवते साधयामः इत्युक्त्वा निरयासीत्। नृपश्च प्रकृत्या वीररसानुरागी तेन कृपाणेनामन्यत करतलवर्त्तिनीं मेदिनीम्।

अथ व्रजत्सु दिवसेषु एकदा भैरवाचार्य्यो राजानमुपह्वरे सोपग्रहमवादीत् तात स्वार्थालसाः परोपकारदक्षाश्च प्रकृतयो भवन्ति भव्यानाम्। भवादृशास्त्वार्थिदर्शनं महोत्सवः प्रणयनमा-राधनम् अर्थग्रहणमुपकारः। भूमिरसि सर्व्वलोकमनोरथानाम्। येनाभिधीयसे श्रूयताम् भगवतो महाकालहृदयनाम्नो महा-मन्त्रस्य कृष्णस्रगम्बरानुलेपनाकल्पेन कल्पकथितेन महाश्मशाने जपकोट्या कृतपूर्व्वसेवोऽस्मि। तस्य वेतालसाधनावसाना सिद्धिः।

असहायैश्च सा दुरवापा। त्वच्चालमस्मै कर्म्मणे। त्वयि च गृहीतभरे भविष्यन्त्यपरे सहायास्त्रयः। एकः स एवास्माकं टीटिभनामा बालमित्रं मस्करी यो भवन्तमुपतिष्ठते। द्वितीयः स पातालस्वामी। अपरो मच्छिष्य एव कर्णतालनामा द्राविडः। यदि साधु मन्यसे ततो नीयतामयं दिङ्नागहस्तदीर्घो गृहीताट्टहासो निशामेकामेकदिङ्मुखार्गलतां बाहुः।

इति कृतवचसि(३८)च तस्मिन् अन्धकारं प्रविष्ट इव दृष्टप्रकाशः प्राप्तोपकारावकाशः प्रमुदितेनान्तरात्मना नरेन्द्रः समभाषत भगवन् परमनुगृहीतोऽस्मि अनेन शिष्यजनसामान्येन निदेशेन कृतपरिग्रहमिवात्मानमवैमीति। ननन्द च तेन नरेन्द्रस्याकूतेन भैरवाचार्य्यः चकार च सङ्केतम् अस्यामेवागामिन्यामसितपक्षचतुर्द्दशीक्षपायाम् इयत्यां वेलायाम् अमुष्मिन् महाश्मशानसमीपभाजि शून्यायतने शस्त्रद्वितीयेनायुष्मता द्रष्टव्या वयमिति।

अथातिक्रान्तेष्वहःसु प्राप्तायाञ्च तस्यामेव कृष्णचतुर्द्दश्यां शैवेन विधिना दीक्षितः क्षितिपो नियमवानभूत्। कृताधिवासञ्च सम्पादितगन्धधूपमाल्यादिपूजं खड्गमट्टहासमकरोत्। ततः परिणते दिवसे केनापि कर्म्मसाधनाय कृतरुधिरबलिविधानास्विव लोहितायमानासु दिक्षु रुधिरबलिलम्पटासु च वेतालजिह्वास्विव लम्बमानासु च रविदीधितिषु नरेन्द्रानुरागेण गृहीतापरदिशि स्वयमिव दिक्पालतां चिकीर्षति सवितरि यातुधानीष्विव वर्द्धमानासु तरुच्छायासु पातालवासिषु विज्ञाय दानवेष्विव उत्तिष्ठत्सु तमोमण्डलेषु नभसि पुञ्जीभवति रौद्रं कर्म्म दिदृक्षमाण इव

मध्यमगते विगाढ़ायां शर्व्वर्यां सुप्तजननिःशब्दस्तिमिते निशीथे राजा सान्तःपुरं परिजनं वञ्चयित्वा वामकरस्फुरत्सरः दक्षिणकरेणोत्खातं खड्गमट्टहासमादाय विसर्पता च खड्गप्रभापटलेन नीलांशुकपटेनेव दर्शनभयादवगुण्ठितनिखिलगात्रयष्टिः अनादिष्टयाप्यनुगम्यमानो राजलक्ष्म्या पृष्ठतः परिमललग्नमधुकरवेणिकाजालेन केशेष्विव कर्म्मसिद्धिमाकर्षन् एकाकी नगरान्निरगात् अगाच्च तमुद्देशम्।

अथ प्रत्युज्जग्मुस्ते त्रयो द्रौणिकृपकृतवर्म्माण इव सौप्तिके सन्नद्धाः स्नाताः स्रग्विणो गृहीतविकटवेशाः कुसुमशेखर सञ्चारिभिः क्रियमाणमन्त्रशिखाबन्धा इव गुम्फैः षट्चरणैः उष्णीषपट्टकान् ललाटमध्यघटितविकटस्वस्तिकाग्रन्थीन् महामुद्राबन्धानिव धारयन्तो मूर्द्धभिः एकश्रवणविवरविततविमलदन्तपत्रप्रभालोकलेपधवलितकपोलैर्मुखैरापिबन्त इव निशाम्बरापचयचिकीर्षया शार्व्वरमन्धकारम् इतरकर्णावलम्बिना रत्नकुण्डलानाम् अच्छाच्छया रुचा गोरोचनयेव मन्त्रपरिजप्तया समालब्धाः स्वप्रतिबिम्बगर्भान् कर्म्मसिद्धये दत्तपूर्व्वोपहारानिव उल्लासयन्तो(४०) निशितान् निस्त्रिंशान् निस्त्रिंशांशुसन्तानसीमन्तिततिमिराम् आत्मीयात्मीयदिग्भागसंरक्षणाय त्रिधेव त्रियामां पाटयन्तः सार्द्धचन्द्रैः कलधौतबुद्बुदावलितरलतारागणैर्निशाया इव पक्षाभिधारानिलप्तैः चलद्भिरुद्धीतैश्चर्म्मफलकैरकाण्डशर्व्वरीमपरां घटयन्तः काञ्चनशृङ्खलाकलापनियमितनिबिड़निषङ्गपाणयः महासिधेनवः टीटिभकर्षतावपातावस्वामिनो निवेदितवन्तश्चात्मानम्।

४० उल्लासयन्त । २ । ३ ।

अवनिपतिस्तु कोऽयं क इति तौनपृच्छत्। आचचक्षिरे च स्वं स्वं नाम तयोऽपि ते। तैरेव चानुगम्यमानो जगाम तां बलि-दीपालोकजर्ज्जरितगुग्गुलुधूपधूमदृश्यमाणदिग्भागतया विक्षिप्य-माणरक्तसर्षपार्दग्धान्धकारपलायमाननिशामिव समुपकल्पित-सर्व्वोपकरणां निःशब्दाञ्च गम्भीराञ्च भीषणाञ्च साधनभूमिम्।

तस्याञ्च कुमुदधूलिधवलेन भस्मना लिखितस्य महतो मण्ड-लस्य मध्ये स्थितं दीप्ततरतेजःप्रसरं पृथुपरिवेशपरिक्षिप्तमिव शरत्-सवितारं मथ्यमानक्षीरोदावर्त्तवर्त्तिनमिव मन्दरं रक्तचन्दनानु-लेपिनो रक्तस्रगम्बराभरणस्योत्तानशयस्य शवस्योरस्युपविश्य ज्वलत-जातवेदसि मुखकुहरे प्रारब्धाग्निकार्य्यं कृष्णोष्णीषं कृष्णाङ्गरागं कृष्णप्रतिसरं कृष्णवाससं कृष्णतिलाहुतिनिभेन विद्याधरत्वतृष्णया मानुषनिर्म्माणकारणकालुष्यपरमाणूनिव चयमुपनयन्तम् आहुति-दानपर्य्यस्ताभिः प्रेतमुखस्पर्शदूषितं प्रक्षालयन्तमिवाशुशुक्षणिं करनखदीधितिभिः धूमालोहितेन चक्षुषा क्षतजाहुतिमिव हुत-भुजि पातयन्तम् ईषद्विवृताधरपुटप्रकटितसितदशनशिखरेण दृश्य-मानमूर्त्तमन्त्राक्षरपङ्क्तिनेव मुखेन किमपि जपन्तं होमश्रमस्वेद-सलिलप्रतिबिम्बिताभिरासन्नदीपिकाभिर्दहन्तमिव सिद्धये सर्व्वा-वयवान् अंसावलम्बिना बहुगुणेन विद्याराजेनेव ब्रह्मसूत्रेण परिगृहीतं भैरवाचार्य्यमपश्यत्‌ उपसृत्य चाकरोन्नमस्कारम् अभिनन्दितश्च तेन स्वव्यापारमन्वतिष्ठत्।

अत्रान्तरे पातालस्वामी शातक्रतवीमाशामङ्गीचकार कर्ण-तालः कौवेरीम् परिव्राट् प्राचेतसीम्। राजा तु त्रैशङ्कवेन ज्योतिषाङ्कितां ककुभमलङ्कृतवान्।

एवञ्चावस्थितेषु दिक्पालेषु दिक्पालभुजपञ्जरप्रविष्टे विस्रब्धं

कर्म्म साधयति भैरवं भैरवाचार्य्ये अतिचिरं हुतकोलाहलेषु निष्फलप्रयत्नेषु प्रत्यूहकारिषु शान्तेषु कौणपेषु गलत्यर्द्धरात्रसमये मण्डलस्य नातिदवीयस्यन्तरेण अकस्मात् प्रलयमहावराहदंष्ट्रा-विवरमिव दर्शयन्ती क्षितिरदीर्य्यत। सहसैव च तस्माद्विवरात् आयाधारणोत्क्षिप्त दूर्वालामलोकस्तम्भः महावराहपीवरस्कन्धपीठो नरकासुर इव भुवो गर्भादुद्भूतः बलिदानव इव भित्त्वोत्थितः पातालम् इन्द्रनीलप्रासाद इवोपरिज्वलितरत्नप्रदीपः स्निग्ध-नीलघननिविडकुटिलकुण्डलकान्तमौलिबन्धोलम्बमालतीमुण्डमालः गद्गदतया स्वरस्य स्वभावपाटलतया च चक्षुषः क्षीब इव यौवन-मदेन वलानलदामकः करसम्पुटच्छादितया छटा दिङ्नागकुम्भाभौ अंसकूटौ पुनः पुनः पङ्कयन् सान्द्रचन्दनकर्द्दमदत्तैरध्यवस्यास्यासकैः अतिसितजलधरशकलशारित इव शारदाकाशैकदेशः(४१)केतकी-गर्भपत्रपाण्डुरस्य चण्डातकस्योपरि क्षामतरीकृतकुक्षिः कक्ष्यावन्धं विधाय विलासविक्षिप्तेन धवलव्यायामफालीपटान्तेन धरणितल-गतेन धार्य्यमाण इव पृष्ठतः शेषेण स्थिरस्थूलोरुदण्डः भूमिभङ्ग-भयेनेव मन्थराणि स्थापयन् पदानि निर्भरगर्व्वगुरु कथमपि शैलम् इव गात्रमुद्वहन् दर्पेण मुहुर्मुहुरुरसि द्विगुणिते दोष्णि वामे तिर्य्यगुत्क्षिप्ते च दक्षिणे अङ्गकाण्डे कुण्डलिते चण्डास्फोटन-टाङ्कारैः कर्म्मविघ्ननिर्घातानिव पातयन् एकेन्द्रियविकलमिव जीव-लोकं कुर्व्वन् कुवलयश्यामः पुरुष उज्जगाम जगाद च विहस्य नरसिंहनादनिर्घोषघोरया भारत्या भो विद्याधरीश्रद्धाकामुक किमयं विद्यावलेपः सहायमदो वा यदस्मै जनाय अविधाय बलिं

(४१) शरदाकाशैकदेश ।

बालिश इव सिद्धिमभिलषसि। का ते दुर्बुद्धिरियम्। एतावता कालेन क्षेत्राधिपतिरस्य मन्नाम्नैव लब्धव्यपदेशस्य देशस्य नागतस्ते आलोपकण्ठं श्रीकण्ठनामा नागोऽहम्। अनिच्छति मयि का शक्तिर्विहगगणस्यापि गन्तुं गगने। भूनाथोऽप्ययमनाथस्तपस्वी यस्त्वादृशैः शैवापसदैरुपकरणीक्रियते। सहस्वेदानीं सहामुना दुर्नरेन्द्रेण दुर्नयस्य फलम्। इत्यभिधाय च निष्ठुरैः प्रकोष्ठप्रहारैः तानपि टीटिभप्रभृतीनभिमुखं प्रधावितान् सशरीरावरणकृपाणानपातयत्।

अथापूर्व्वाधिक्षेपश्रवणादशस्त्रैरप्यमर्षस्वेदच्छलेनानेकसमरपीतमसिधाराजलमिव वमद्भिः अवयवैरपि रोमाञ्चनिभेन मुक्तशरशतशल्यनिकरभरलघुमिवात्मानं रणाय कुर्व्वद्भिः अट्टहासेनापि प्रतिबिम्बिततारागणेन स्पष्टदृष्टधवलदन्तमालमवज्ञया हसतेव कथ्यमानसत्त्वावष्टम्भः परिकरबन्धविभ्रमभ्रमितकरनखकिरणचक्रवालेन व्यपगमनाशङ्कया नागदमनमन्त्रमण्डलबन्धेनेव रुन्धन् दश दिशः नरनाथः सावज्ञमवादीत् अरे काकोदर काक मयि स्थिते राजहंसे न जिह्रेषि बलिं याचितुम्। अमीभिः किं वा परुषभाषितैः। भुजे वीर्य्यं निवसति न वाचि। प्रतिपद्यस्व शस्त्रम्। अयं न भवसि। अगृहीतहेतिर्व्वशिक्षितो मे भुजः प्रहर्त्तुमिति। नागस्तु अनादृततरम् एहि किं शस्त्रेण भुजाभ्यामेव भनज्मि भवतो दर्पम्। इत्यभिधायास्फोटयामास। नरपतिरपि निरायुधमायुधेन युधि लज्जमानो जेतुमुत्सृज्य सचर्म्मफलकमट्टहासम् असिम् अर्द्धोरुकस्योपरि बबन्ध बाहुयुद्धाय कक्ष्याम्। युयुधाते च निर्दयास्फोटनस्फुटितभुजरुधिरशीकरसिच्यमानौ शिलास्तम्भैरिव पतद्भिर्बाहुदण्डैः शब्दमयमिव कुर्व्वाणौ भुवनं तौ। नचिराच्च

पातयामास भूतले भुजङ्गं भूपतिः अग्राह च केशेषु उच्चखान च शिरश्छेत्तुमट्टहासम् अपश्यञ्च वैकक्षकमालान्तरेणास्य यज्ञोपवीतम्। उपसंहृतशस्त्रव्यापारश्चावादीत् दुर्विनीत अस्ति ते दुर्नयनिर्वाणबीजमिदं यतो विस्रब्धमेवाचरसि चापलानि। इत्युक्त्वा उत्ससर्ज तम्। अनन्तरञ्च सहसैवातिबहलां ज्योत्स्नां ददर्श शरदि विकसतां कमलवनानामिव च घ्राणायतलेपिनमामोदमजिघ्रत् झटिति च नूपुरशब्दमशृणोत् व्यापारयामास च शब्दानुसारेण दृष्टिम्।

अथ करतलस्थितस्याट्टहासस्य मध्ये तडितमिव नीलजलधरोदरे स्फुरन्तीं प्रभया पिबन्तीमिव त्रियामां तामरसच्छदां कोमलाङ्गुलिरागराजिजालकानि च चरणालग्नानि वेलावालविद्रुमलतावनानि इवाकर्षन्तीं करपङ्कजसङ्कोचाशङ्कया शशाङ्कमण्डलमिव चरणयोः कृतं निर्मलचरणनखमयूखनिभेन बिभ्रतीं गुल्फावलम्बिनूपुरपुटतया स्थितनिबिडकटकावलिबन्धनादिव परिभ्रमणागतां बहुविधकुसुमशकुनिशतशोभितात् पवनचलिततनुतरङ्गादतिस्वच्छात् अंशुकादुदधिसलिलादिवोत्तरन्तीम् उदधिजन्मप्रेम्णा त्रिवलिच्छलेन त्रिपथगयेव परिष्वक्तमध्याम् अत्युन्नतस्तनमण्डलां दृश्यमानदिङ्नागकुम्भामिव ककुभं मदलग्नैरावतकरशीकरनिकरम् इव शरत्तारागणतारं हारमुरसा दधाना धवलचामरैरिव च मन्दमन्दनिश्वासदोलायितैर्हारकिरणैरुपवीज्यमानां स्वभावलोहितेन मदान्धगन्धेभकुम्भास्फालनसंक्रान्तसिन्दूरेणेव करद्वयेन द्योतमानां शरीरशशखण्डेन्दुद्वितीयखण्डेनेव कुण्डलीकृतेन ज्योत्स्नामुचा दन्तपत्रेण विभ्राजमानां कौस्तुभगभस्तिस्तबकेनेव च श्रवणलग्नेन अशोककिसलयेनालङ्कृतां महता मातङ्गमदमयेन तिलकेन

अदृश्यच्छत्रच्छायामण्डलेनेवाविरचितललाटाम् , आपादतलात् आसीमन्ताच्च चन्द्रातपधवलेन चन्दनेनादिराजयशसेव धवलीकृतां धरणितलचुम्बिनीभिः कण्ठकुसुममालाभिः सरिद्भिरिव सागराभिमुखीभिः(४२)अधिष्ठितां, मृणालकोमलैरवयवैः कमलसम्भवलमनन्तरम् आचक्षाणां स्त्रियमपश्यत्। असम्भ्रान्तश्च पप्रच्छ भद्रे कासि किमर्थं वा दर्शनपथमागतासीति। सा तु स्त्रीजनविरुद्धेनावष्टम्भेन अभिभवन्तीवाभाषत तम् वीर विद्धि मां नारायणोरःस्थलीलीलाविहारहरिणीं पृथुभरतभगीरथादिराजवंशपताकां सुभटभुजजयस्तम्भविलाससालभञ्जिकां रणरुधिरतरङ्गिणीतरङ्गक्रीडादोहददुर्ललितराजहंसीं सितनृपच्छत्रषण्डशिखण्डिनीम् अतिनिशितशस्त्रधारावनभ्रमणविभ्रमसिंहीम् असिधाराजलकमलिनीं श्रियम्। अपहृतास्मि तवामुना शौर्य्यरसेन। याचस्व ददामि ते वरमभिलषितमिति।

वीराणां त्वपुनरुक्ताः परोपकाराः। यतो राजा तां प्रणम्य स्वार्थविमुखो भैरवाचार्य्यस्य सिद्धिं ययाचे। लक्ष्मीस्तु देवी प्रीततरहृदया विलोक्यमानेन (४३) चक्षुषा क्षीरोदेनेवोपरि पर्य्यस्तेनाभिषिञ्चन्ती भूपालम् एवमस्तु इत्यब्रवीत् अवादीच्च पुनरनेन सत्त्वोत्कर्षेण भगवच्छिवभट्टारकभक्त्या चासाधारणया भवान् भुवि सूर्य्याचन्द्रमसोस्तृतीय इवाविच्छिन्नस्य प्रतिदिनमुपचीयमानवृद्धेः शुचिसुभगसत्यत्यागधैर्य्यशौण्डपुरुषप्रकाण्डप्रायस्य महतो राजवंशस्य कर्त्ता भविष्यति। यस्मिन्नुत्पत्स्यते सर्व्वद्वीपानां भोक्ता हरिश्चन्द्र इव हर्षनामा चक्रवर्त्ती त्रिभुवनविजिगीषुः

(४२) सागराद्दृष्टाभिः।१। (४३) विलार्य्यमाणेन।२।

द्वितीयो मास्मातेव वस्त्रार्थं करः स्वयमेव कमलमपहाय ग्रहीष्यति चामरम् इति वचसोऽन्ते तिरोबभूव ।

भूमिपालस्तु तदाकर्ण्य हृदयेनातिमात्रमप्रीयत । भैरवाचार्योऽपि तस्या देव्यास्तेन वचसा कर्मणा च सम्यगुपपादितेन सद्य एव कुन्तली किरीटी कुण्डली हारी केयूरी मेखली मुद्गरी खड्गी च भूत्वावाप विद्याधरत्वम् प्रोवाच च राजन् अदूरव्यापिनः फल्गुचेतसामलसानां मनोरथाः सतां तु भवि विस्तारवत्यः स्वभावेनैवोपकृतयः । स्वप्नेऽप्यसम्भाविता दातुमिमां दक्षिणां क्षमः कोऽन्यो भवन्तमपहाय । सम्पत्कणिकामपि प्राप्य तुलेव लघुप्रकृतिरुन्नतिमायाति । त्वदीयैर्गुणैरुपकरणीकृतस्य त्वत्त एव च लब्धात्मलाभस्य निर्लज्जता इयमस्य मद्धृदयस्य । तदिच्छामि येन केनचित् कार्यलवोपपादनोपयोगेन स्मारयितुमात्मानमिति । प्रत्युपकारदुष्प्रवेशास्तु भवन्ति धीराणां हृदयावष्टम्भाः यतस्तं राजा भवत्सिद्ध्यैव परिसमाप्तकृत्योऽस्मि साधयतु मान्यो यथासमीहितं स्थानमिति प्रत्याचचक्षे ।

तयोक्तश्च भूभुजा निर्गमिषुः सुहृदं समालिङ्ग्य टीटिभादीन् कुवलयवनेनेवावश्यायशीकरस्राविणा साश्रुणा चक्षुषा वीक्षमाणः क्षितिपतिं पुनरुवाच तात ब्रवीमि यामीति न स्नेहसदृशम् । त्वदीयाः प्राणा इति पुनरुक्तम् । गृह्यतामिदं शरीरकमिति व्यतिरेकेणार्थकरणम् । तिलशः क्रीता वयमिति नोपकारानुरूपम् । बान्धवोऽसीति दूरीकरणमिव । त्वयि स्थितं हृदयमित्यप्रत्यक्षम् । त्वद्विरहकारिणी कारणेयं नः सिद्धिरित्यश्रद्धेयम् । निष्कारणबान्धव उपकार इत्यनुवादः । स्मर्तव्या वयमित्याज्ञा । सर्वथा कृतघ्नालापप्रसञ्जनकथासु च चेतसि कर्तव्योऽयं स्वार्थनिष्ठुरो जनः ।

इत्यभिधाय वेगच्छिन्नहारोच्छलितमुक्ताफलनिकरताडिततारागणं गगनतलम् उत्पपात ययौ च सीमन्तितग्रहग्रामः सिद्धचितं धाम । श्रीकण्ठोऽपि राजन् पराक्रमक्रीतः कर्त्तव्येषु नियोगेनानुग्राह्यो ग्राहितविनयोऽयं जनः (४४) इत्यभिधाय राज्ञानुमोदितः तदेव भूयो भूविवरं विवेश ।

नरपतिस्तु क्षीणभूयिष्ठायां क्षपायां प्रवातुमारब्धे प्रबुध्यमानकमलिनीनिश्वाससुरभौ वनदेवताकुचांशुकापहरणपरिहासखेदिनीव मावश्यायशीकरे परिमलाकृष्टमधुकृति कुमुदनिद्रावाहिनि निशापरिणतिजडे तुषारलेशिनि वनानिले विरहविधुरचक्रवाकचक्रनिश्वसितसन्तापितायामिव अपरजलनिधिमवतरन्त्यां त्रियामायां साक्षादागतलक्ष्मीविलोकनकुतूहलिनीष्विव समुन्मीलन्तीषु नलिनीषु उन्निद्रपक्षिणि क्षरति कुसुमविसरमिव तुहिनकणनिकरं मृदुपवनलासितलते कानने कमललक्ष्मीप्रबोधमङ्गलशङ्खेष्विव रसत्स्वन्तर्बद्धध्वनन्मधुकरेषु मुकुलायमानेषु कुमुदेषु उज्जिहानरविरथवाजिविसृष्टैः प्रोथपवनैः प्रोत्सार्य्यमाणास्विव वारुण्यां ककुभि पुञ्जीभवन्तीषु श्यामालताकलिकासु तारकासु मन्दरशिखराश्रयिणि मन्दानिललुलितकल्पलतावनकुसुमधूलिविच्छुरित इव धूसरीभवति सप्तर्षिमण्डले सुरवारणाङ्कुश इव च्युते गलति तारामये मृगे त्रीनपि टीटिभादीन् गृहीत्वा नागयुद्धव्यतिकरमलीमसानि शुचिनि वनवापीपयसि प्रक्षाल्याङ्गानि नगरे विवेश । अन्यस्मिन्नहनि तेषामात्मशरीरानन्तरं स्नानभोजनाच्छादनादिना प्रीतिमकरोत् ।

(४४) परिजन । १।

कतिपयदिवसापगमे च परिव्राट् भूभुजा वार्यमाणोऽपि वनं ययौ। पातालस्वामिकर्णतालौ तु शौर्यानुरक्तौ तमेव सिषेवाते। सम्पादितमनोरथातिरिक्तविभवौ च सुभटमण्डलमध्ये निष्कृष्ट-मण्डलाग्रौ समरमुखेषु प्रथममुपयुज्यमानौ कथान्तरेषु च अन्तरान्तरा समादिष्टौ विचित्राणि भैरवाचार्यचरितानि शैशवप्रवृत्तान्तांश्च कथयन्तौ तेनैव सार्धं जरामाजग्मतुरिति।

इति श्रीबाणभट्टकृते हर्षचरिते तृतीय उच्छ्वासः।

चतुर्थ उच्छ्वासः।

योगं स्वप्नेऽपि नेच्छन्ति कुर्व्वते न करग्रहम्।
महान्तो नाममात्रेण भवन्ति पतयो भुवः॥
सकलमहीभृत्कम्पकृदुत्पद्यत एक एव नृपवंशे।
विपुलेऽपि पृथुप्रतिमो दन्त इव गणाधिपस्य मुखे॥

अथ तस्मात् पुष्पभूतेर्द्दिजवरस्वेच्छागृहीतकोषो नाभिपद्म इव पुण्डरीकेक्षणात् लक्ष्मीपुरःसरो रत्नसञ्चय इव रत्नाकरात् गुरुबुधकविकलाभृत्तेजस्विभूनन्दनप्रायो ग्रहगण इवोदयस्थानात् महाभारवाहनयोग्यः सागर इव सगरप्रभावात् दुर्ज्जयबलसनाथो हरिवंश इव शूरात् निर्जगाम राजवंशः। यस्मात् अविनष्ट-धर्म्मधवलाः प्रजासर्गा इव शतमुखात् प्रतापाक्रान्तभुवनाः किरणा इव तेजोनिधेः विग्रहव्याप्तदिङ्मुखा गिरय इव भूभृत्प्रभवात् धरणिधारणक्षमा दिग्गजा इव ब्रह्मकरात् उदधीन् पातुमुद्यता जलधरा इव घनागमात् इच्छाफलदायिनः कल्पतरव इव नन्दनात् सर्व्वभूताश्रया विश्वरूपप्रकारा इव श्रीधरात् अजायन्त राजानः।

तेषु चैवमुत्पद्यमानेषु क्रमेणोदपादि हूणहरिणकेसरी सिन्धु-राजज्वरो गुर्जरप्रजागरः गान्धाराधिपगन्धद्विपकूटपाकलः लाट-पाटवपाटच्चरः मालवलक्ष्मीलतापरशुः प्रतापशील इति प्रथिता-परनामा प्रभाकरवर्द्धनो नाम राजाधिराजः। यो राज्याङ्गसङ्गीनि अभिषिच्यमान एव मलानीव मुमोच धनानि। यः परकीयेणापि

कातरवल्लभेन रणमुखे तृणेनेव धृतेनालज्जत जीवितेन। यः कर-धृतधौतासिप्रतिबिम्बितेनात्मनाप्यदूयत समितिषु सहायेन। रिपूणां पुरः प्रभ्रंशे धनुषापि नमता। यो मानी मानसेनापिद्युत। यश्चान्तर्गतापरिमितरिपुशल्यशङ्कुकीलितामिव निश्चलामुवाह राजलक्ष्मीम्। यस्य सर्व्वासु दिक्षु समीकृततटाकटविटपाटवी-तवतृणगुल्मवल्मीकगिरिगह्वरैः दण्डयात्रापथैः पृथुभिर्व्यतोपयोगाय व्यभजतेव वसुधा वसुधा। यश्चालब्धसुन्दरोहद्माजीयोऽपि सकल-रिपुसमुत्सारकः परकीय इव तताप प्रतापः। यस्य च वह्निमयो हृदयेषु जलमयो लोचनपुटेषु मारुतमयो निःश्वसितेषु क्ष्मामयो ऽङ्गेषु आकाशमयः शून्यतायां पञ्चमहाभूतमयो मूर्त्त इवाहश्यत निहतप्रतिसामन्तान्तःपुरेषु प्रतापः। यस्य चासन्नेषु अत्यन्तरत्नेषु प्रतिबिम्बितेव तुल्यरूपा समलक्ष्यत लक्ष्मीः। तथाच यस्य प्रतापा-ग्निना भूतिः शौर्य्योष्मणा सिद्धिः असिधाराजलेन संप्राप्तिः शस्त्र-व्रणमुखैः पुरुषकारोक्तिः धनुर्गुणकिणेन करग्रहकीर्त्तिः अभवत् (१)। यस्य वैरमुपायनं विग्रहमनुग्रहं समरागमं महोत्सवं शत्रुं निधि-दर्शनम् अरिबाहुल्यमभ्युदयम् आहवाह्वानं वरप्रदानम् अवस्कन्द-पातं दिष्टवृद्धिं शस्त्रप्रहारपतनं वसुधारारम्भम् (२) अमन्यत। यस्मिंश्च राजनि निरन्तरैर्यूपनिकरैरङ्कुरितमिव कृतयुगेन दिग्मुख-विसर्पिभिरध्वरधूमैः पलायितमिव कलिना ससुधैः सुरालयैरव-तीर्णमिव स्वर्गेण सुरालयशिखरोह्यमानैर्धवलध्वजैः पल्लवितमिव धर्म्मेण बहिरुपरचितविकटसभाप्रपाप्राग्वंशमण्डपैः प्रसूतमिव ग्रामैः काञ्चनमयसर्व्वोपकरणैर्विभवैर्विशीर्णमिव मेधया द्विजदीय-मानैरर्थकलशैः फलितमिव भाग्यसम्पदा।

तस्य च जन्मान्तरेऽपि सती पार्व्वतीव शङ्करस्य गृहीतहृदया लक्ष्मीरिव लोकगुरोः स्फुरत्तरलतारका रोहिणीव कलावतः सर्व्व-जनजननी बुद्धिरिव प्रजापतेः महाभूभृत्कुलोद्गता गङ्गेव वाहिनी-नायकस्य मानसानुवर्त्तनचतुरा हंसीव राजहंसस्य सकललोका-र्च्चितचरणा त्रयीव धर्म्मस्य दिवानिशममुक्तपार्श्वस्थितिररुन्धतीव महामुनेः हंसमयीव गतिषु परपुष्टमयीवालापेषु चक्रवाकमयीव पतिप्रेम्णि प्रावृण्मयीव पयोधरोन्नतौ मदिरामयीव विलासेषु निधि-मयीवार्थसञ्चयेषु वसुधारामयीव प्रसादेषु कमलमयीव कोषसंग्रहेषु कुसुममयीव फलदानेषु सन्ध्यामयीव वन्द्यत्वे चन्द्रमयीव निरुष्मत्वे दर्पणमयीव प्रतिप्राणिग्रहणेषु सामुद्रमयीव परचित्तज्ञानेषु पर-मात्ममयीव व्याप्तिषु स्मृतिमयीव पुण्यवृत्तिषु मधुमयीव सम्भाषणेषु अमृतमयीव तृप्यत्सु वृष्टिमयीव भृत्येषु निर्वृतिमयीव सखीषु वेतस-मयीव गुरुषु गोत्रवृद्धिरिव विलासानां प्रायश्चित्तशुद्धिरिव स्त्रीत्वस्य आज्ञासिद्धिरिव मकरध्वजस्य व्युत्थानबुद्धिरिव रूपस्य दिष्टवृद्धिरिव रतेः मनोरथसिद्धिरिव रामणीयकस्य दैवसम्पत्तिः इव लावण्यस्य वंशोत्पत्तिरिवानुरागस्य वरप्राप्तिरिव कान्तेः सर्गसमाप्तिरिव सौन्दर्य्यस्य आयतिरिव यौवनस्य अनभ्रवृष्टिरिव वैदग्ध्यस्य अयशःप्रवृष्टिरिव लक्ष्म्याः यशःपुष्टिरिव चारित्रस्य हृदयतुष्टिरिव धर्म्मस्य सौभाग्यपरमाणुसृष्टिरिव प्रजापतेः शम-स्यापि शान्तिरिव विनयस्यापि विनीतिरिव आभिजात्यस्यापि अभिजातिरिव संयमस्यापि संयतिरिव धैर्य्यस्यापि धृतिरिव विभ्रम-स्यापि विश्रान्तिरिव यशोवती (१) नाम महादेवी प्राणानां

(१) यशोमती । २ ।

प्रणयस्य विश्रम्भस्य धर्मस्य सुखस्य च भूमिरभूत्। या चास्य वक्षसि नरकजितो लक्ष्मीरिव ललास।

निसर्गत एव च स नृपतिरादित्यभक्तो बभूव। प्रतिदिनमुदये दिनकृतः स्नातः सितदुकूलधारी धवलकर्पटप्रावृतशिराः प्राङ्मुखः क्षितौ जानुभ्यां स्थित्वा कुङ्कुमपङ्कानुलिप्ते मण्डलके पवित्रपद्मरागपात्रीनिहितेन स्वहृदयेनेव सूर्य्यानुरक्तेन रक्तकमलषण्डेनार्घं ददौ। अजपच्च जप्यं सुचरितः प्रत्युषसि मध्यन्दिने दिनान्ते च अपत्यहेतोः प्राध्वं प्रयतेन मनसा जप्यपूतो मन्त्रमादित्यहृदयम्।

भक्तजनानुरोधविधेयानि तु भवन्ति देवतानां मनांसि यतः स राजा कदाचित् ग्रीष्मसमये स्वेच्छया सितकरकरसितसुधाधवलस्य हर्म्यस्य पृष्ठे सुष्वाप। पार्श्वे चास्य द्वितीयशयने देवी यशोवती शिश्ये। परिणतप्रायायान्तु श्यामायाम् आसन्नप्रभातवेलाविलुप्यमानलावण्ये लिलङ्घिषमाणे सीदत्तेजसि तारकेश्वरे, करायमृष्टकुमुदिनीप्रमोदजन्मनि शशधरस्वेद इव गलत्यतिशीतले ऽवश्यायपयसि मधुमदमत्तप्रसुप्तसीमन्तिनीनिश्वासवाहितेषु संक्रान्तमदेष्विव घूर्णमानेष्वन्तःपुरप्रदीपेषु गगने च विमलमणिप्रतिबिम्बिताभिः संवाह्यमानचरणा इव तारकाभिः विश्रब्धप्रसारितैः दिगङ्गनानामिवार्पितैरङ्गैर्मधुसुगन्धिभिः स्वच्छन्दकमलतालवृन्तवातैरिव प्रशमितैर्मेघश्रिया वीज्यमाने विमलकपोलस्थलस्थितेन सितकुसुमशेखरेणेव रतिकेलिकचग्रहगलितेन प्रतिमाशशिबिम्बेन विराजिते स्वपिति देवी यशोवती सहसैव आर्य्यपुत्र परित्रायस्व परित्रायस्व इति भाषमाणा भूषणरवैर्व्याहरन्तीव परिजनम् उत्कम्पमानाङ्गयष्टिरुदतिष्ठत्।

अथ तेन सर्व्वस्यामपि पृथिव्यामश्रुतपूर्व्वेण किमुत देवीमुखे

परित्रायस्वेति ध्वनिना दग्ध इव श्रवणयोः एकपद एव निद्रां तत्याज राजा। शिरोभागाच्च कोपकम्पमानदक्षिणकराकृष्टेन कर्णोत्पलेनेव निर्गच्छताच्छधारेण धौतासिना सीमन्तयन्निव निशाम्, अन्तरालव्यवधायकमाकाशमिवोत्तरीयांशुकं विक्षिपन् वामकरपल्लवेन, करविक्षेपवेगगलितेन हृदयेनेव भयनिमित्तान्वेषिणा भ्रमता दिक्षु कनकवलयेन विराजमानः, सत्वरावतारितवामचरणाक्रान्तिकम्पितप्रासादः, पुरः पतितेनासिधारागोचरगतेन शशिमयूखखण्डेनेव खण्डितेन हारेण राजमानः लक्ष्मीचुम्बनलग्नताम्बूलरसरञ्जिताभ्यामिव निद्रया कोपेन चातिलोहिताभ्यां लोचनाभ्यां पाटलयन् पर्य्यन्तानाशानाम्, आबद्धान्धकारया त्रिपताकया भ्रुकुट्या पुनरिव त्रियामां परिवर्त्तयन् देवि न भेतव्यं न भेतव्यम् इत्यभिदधानो वेगेनोत्पपात। सर्व्वासु च दिक्षु विक्षिप्तचक्षुः यदा नाद्राक्षीत् किञ्चिदपि तदा पप्रच्छ तां भयकारणम्।

अथ गृहदेवतास्विव प्रधावितासु यामकिनीषु, प्रबुद्धे च समीपशायिनि परिजने, शान्ते च हृदयोत्कम्पकारिणि साध्वसे सा समभाषत आर्य्यपुत्त्र जानामि स्वप्ने भगवतः सवितुर्म्मण्डलान्निर्गत्य द्वौ कुमारकौ तेजोमयौ बालातपेनेव पूरयन्तौ (४) दिग्भागान् वैद्युतम् इव जीवलोकं कुर्व्वाणौ मुकुटिनौ कुण्डलिनौ अङ्गदिनौ कवचिनौ गृहीतशस्त्रौ इन्द्रगोपकत्वचा रुधिरेण (५) स्नातौ उन्मुखेनोत्तमाङ्गघटमानाञ्जलिना जगता निखिलेन प्रणम्यमानौ कन्यया एकया च चन्द्रमूर्त्त्येव सुषुम्णारश्मिनिर्गतयानुगम्यमानौ क्षितितल-

(४) आपूरयन्तौ । १ ।

(५) रुधिरेण धाम्ना । १ ।

भवतीर्णौ तौ च (६) मे विलपन्त्याः शशिमण्डलोदरं विदार्य प्रवेष्टुम् आरब्धौ। प्रतिबुद्धास्मि चाद्याप्युच्चं विक्रोशयन्ती वेपमानहृदयेति।

एतस्मिन्नेव च कालक्रमे राजलक्ष्म्याः प्रथमालापः प्रथयन्निव स्वप्नफलम् उपतोरणं रराण प्रभातशङ्खः। भाविनीं भूतिमिवाभि-दधाना दध्वनुरमन्दं दुन्दुभयः।• चक्राण कोणाहतानन्दादिव प्रत्युपनान्दी। जयजयेति प्रबोधमङ्गलपाठकानाम् (७) उच्चैर्वाचो ऽश्रूयन्त। पुनश्च वल्लभतुरङ्गमन्दुरामन्दिरे मन्दमन्दं सुप्तोत्थितः समीना कलमधुरह्रेषारवाणां पुरश्चोतत्पारसलिलशीकरं किरन् मरकतहरितं यवसं वल्लापरवल्ल पपाठ

निमित्तरूपविकारेण सन्मणिः स्फुरता धाम्ना।
शुभागमो निमित्तेन स्पष्टमाख्यायते लोके॥
अरुण इव पुरःसरो रविं पवन इवातिजवो जलागमम्।
शुभमशुभमथापि वा नृणां कथयति पूर्वनिदर्शनोदयः॥

नरपतिस्तु तत् श्रुत्वा प्रीयमाणान्तःकरणेन तामवादीत् देवि मुदोऽवसरे विषीदसि। सम्पन्नास्ते गुरुजनाशिषः। पूर्णा ना मनोरथाः। परिगृहीतासि कुलदेवताभिः। प्रसन्नस्ते भग-वान् अंशुमाली नचिरेणैवातिगुणवदपत्यत्रयलाभेनानन्दयिष्यति भवतीमिति। अवतीर्य च यथाक्रियमाणाः क्रियाश्चकार। यशोवत्यपि तुतोष तेन पत्युर्भाषितेन।

ततः समतिक्रान्ते कस्मिंश्चित् कालांशे देव्याश्च यशोवत्या दृशो राज्यवर्द्धनः प्रथममेव सम्बभूव गर्भे। गर्भस्थितस्यैव च यस्य यशसेव पाण्डुतामादधे जननी। गुणगौरवक्रान्तेव गात्रमुद्वोढुं न शशाक। कान्तिविसरावृतमस्तकेव आहारं प्रति पराङ्मुखी

(६) निर्वर्तितमवतीर्णौ च तौ (?)। (७) प्रबोधमङ्गलपरिपाठकानाम् (?)।

बभूव। शनैः शनैरुपचीयमानगर्भभरालसा च गुरुभिर्व्वारितापि वन्दनाय कथमपि सखीभिर्हस्तावलम्बेनानीयत। विश्राम्यन्ती सालभञ्जिकेव समीपगतस्तम्भभित्तिष्वलक्ष्यत। कमललोभनिलीनैः अलिभिरिव हृतावुद्धर्त्तुं नाशकच्चरणौ। क्रीडालोभेन च चरणनखमयूखलग्नैर्भवनहंसैरिव सञ्चार्य्यमाणा मन्दमन्दं बभ्राम। मणिभित्तिपातिनीषु प्रतिमास्वपि हस्तावलम्बनलोभेन प्रसारयामास करकमलं किमुत सखीषु। माणिक्यस्तम्भदीधितीरप्यालम्बितुमाचकाङ्क्ष किं पुनर्भवनलताः। समादेष्टुमप्यसमर्थासीत् गृहकार्य्याणि कैव कथा कर्त्तुम्। आसां नूपुरभारखेदितं चरणयुगलं मनसापि नोदसहत सौधमारोढुम्। अङ्गान्यपि नाशक्नोत् धारयितुं दूरे भूषणानि। चिन्तयित्वापि क्रीडापर्व्वताधिरोहणम् उत्कम्पितस्तनी तस्थौ। प्रत्युत्थानेषूभयजानुशिखरविनिहितकरकिसलयापि गर्व्वादिव गर्भेणाधार्य्यत। दिवसञ्चाधोमुखी स्तनपृष्ठसंक्रान्तेनापत्यदर्शनौत्सुक्यादन्तःप्रविष्टेनेव मुखकमलेनैवं प्रीयमाणा ददर्श गर्भम्। उदरे तनयेन हृदये च भर्त्ता तिष्ठता द्विगुणितामिव लक्ष्मीमुवाह। सख्युत्सङ्गमुक्तशरीरा च शरीरपरिचारिकाणामङ्केषु सपत्नीनान्तु शिरःसु पादौ चकार। अवतीर्णे च दशमे मासि सर्व्वोर्व्वीभृत्पक्षपाताय वज्रपरमाणुभिरिव निर्म्मितं त्रिभुवनभारधारणसमर्थं शेषफणामण्डलोपकरणैरिव कल्पितं सकलभूभृत्कम्पकारिणं दिग्गजावयवैरिव विहितमसूत देवं राज्यवर्द्धनम्। यस्मिन् जाते जातप्रमोदा नृत्यमय्य इव अजायन्त प्रजाः। पूरिताशङ्खशङ्खशब्दमुखरं प्रहतपटहशतपटुरवं गम्भीरभेरीनिनादनिर्भरभरितभुवनं प्रमोदोन्मत्तमर्त्यलोकमनोहरं मासमेकं दिवसमिव महोत्सवमकरोन्नरपतिः।

अथान्यस्मिन्नतिक्रान्ते कस्मिंश्चित् काले कन्दलिनि कुड्मलितकदम्बतरौ नीलकमलवने स्तम्भितताम्ररसे विकसितचातकचेतसि मुच्यमानमौकसि नभसि (८) देव्या देवक्या इव चक्रपाणिः यशोवत्या हृदये गर्भे च सममेव सम्बभूव हर्षः। शनैः शनैश्चास्याः सर्व्वप्रजापुण्यैरिव परिगृहीता भूयोऽप्यापाण्डुतामङ्गयष्टिर्जगाम। गर्भारम्भेण श्यामायमानचारुचूचुकचूलिकौ चक्रवर्त्तिनः पातुं मुद्रिताविव पयोधरकलशौ बभार। सन्धार्य्यमाणनिभृता दुग्धनदीव दीर्घस्निग्धधवला (९) माधुर्य्यमभजत दृष्टिः। सकलमङ्गलगणाधिष्ठितगात्रगरिम्णेव गतिरमन्दायत। मन्दमन्दं सञ्चरन्त्या निर्म्मलकुट्टिमनिमग्नप्रतिबिम्बनिभेन गृहीतपादपद्मा पूर्व्वसेवामिवारेभे पृथिव्यस्याः। दिवसम् (१०) अधिशयानायाः शयनीयमपाश्रयपत्रभङ्गपुत्त्रिकाप्रतिमा विमलकपोलोदरगता प्रसवसमयं प्रतिपालयन्ती लक्ष्मीरिवालक्ष्यत। क्षपासु सौधशिखराग्रगताया गर्भोन्मायमुक्तांशुके स्तनमण्डले संक्रान्तमुडुपतिमण्डलम् उपरि गर्भस्य श्वेतातपत्रमिव केनापि धार्य्यमाणमदृश्यत। सुप्ताया वासभवने चित्रभित्तिचामरग्राहिण्योऽपि चामराणि चालयाञ्चक्रुः। स्वप्नेषु करविधृतकमलिनीपलाशपुटसलिलैश्चतुर्भिः अपि दिक्करिभिरक्रियताभिषेकः। प्रतिबुध्यमानायाश्च चन्द्रशालिकासालभञ्जिकापरिजनो जयशब्दमसकृदजनयत्। परिजनाह्वानेषु आदिशेति अशरीरा वाचो निश्चेरुः। क्रीडायाम् अपि नासहताज्ञाभङ्गम्। अपिच चतुर्णामपि महार्णवानामेकीकृतेनाम्भसा स्नातुं वाञ्छा बभूव। वेलालतागह्वरोदरपुलिनपरि-

(८) नभसि मासि। १। २। (९) दीर्घस्निग्धमधुरा। १।

(१०) शयनीयम्। १। २।

सरेषु पर्य्यटितुं हृदयमभिललाष। आत्ययिकेष्वपि कार्य्येषु सविभ्रमं भ्रूलता चचाल। सन्निहितेष्वपि मणिदर्पणेषु मुखम् उत्खाते खड्गपट्टे वीक्षितुं व्यसनमासीत्। उत्सारितवीणाः स्त्रीजनविरुद्धा धनुर्ध्वनयः श्रुतावसुखायन्त। पञ्जरकेसरिषु चक्षुररमत। गुरुप्रणामेष्वपि स्तम्भितमिव शिरः कथमपि ननाम। सख्यश्चास्याः प्रमोदविस्फारितैर्लोचनपुटैरासन्नप्रसवमहोत्सवधियेव धवलयन्त्यो भवनं विकचकुमुदकमलकुवलयपलाशदृष्टिमयं रक्षाबलिविधिमिवानवरतं विदधाना दिक्षु क्षणमपि न मुमुचुः पार्श्वम्। आलोचितस्थाननिषण्णाश्च महान्तो विविधौषधिधरा भिषजो भूधरा इव भुवो धृतिं चक्रुः। पयोनिधीना हृदयानीव लक्ष्म्या सहागतानि ग्रीवासूत्रग्रन्थिषु प्रशस्तरत्नान्यबध्यन्त।

ततश्च प्राप्ते ज्येष्ठामूलीये मासि बहुलासु (११) बहुलपक्षद्वादश्यां व्यतीते प्रदोषसमये समारुरुक्षति क्षपायौवने सहसैवान्तःपुरे समुदपादि कोलाहलः स्त्रीजनस्य। निर्गत्य च ससम्भ्रमं यशोवत्याः स्वयमेव हृदयनिर्विशेषा धात्र्याः सुता सुयात्रेति नाम्ना राज्ञः पादयोर्निपत्य देव दिष्ट्या वर्द्धसे द्वितीयसुतजन्मनेति व्याहरन्ती पूर्णपात्रं जहार।

अस्मिन्नेव च काले राज्ञः परमसम्मतः शतशः संवादितातीन्द्रियादेशो दर्शितप्रभावः सङ्कलितौ ज्योतिषि सर्व्वासां ग्रहसंहितानां पारदृश्वा सकलगणकमध्ये महितो हितश्च त्रिकालज्ञानभाक् भोजकस्तारको नाम गणकः समुपसृत्य विज्ञापितवान् देव श्रूयतां (१२) मान्धाता किलैवंविधे व्यतीपातादिसर्व्वदोषाभिषङ्गरहितेऽहनि सर्व्वेषूच्चस्थानस्थितेष्वेवं ग्रहेषु ईदृशि लग्ने भेजे जन्म।

(११) कृत्तिकासु २। ३। (१२) श्रयतं। १।

अर्व्वाक् ततोऽस्मिन्नन्तराले पुनरेवंविधे योगे चक्रवर्त्तिजनने नाजनि जगति कश्चिदपरः। सप्तानां चक्रवर्त्तिनामग्रणीः चक्रवर्त्तिचिह्नानां महारत्नानाञ्च भाजनं सप्तानां सागराणां पालयिता सप्ततन्तूनां सर्व्वेषां प्रवर्त्तयिता सप्तसप्तिसमः सुतोऽयं देवस्य जात इति।

अत्रान्तरे स्वयमेव अनाध्माता अपि तारमधुरं शङ्खा विरेसुः। अताडितोऽपि क्षुभितजलनिधिजलध्वनिगभीरं जुगुञ्जाभिषेकदुन्दुभिः। अनाहतान्यपि मङ्गलतूर्य्याणि रेणुः। सर्व्वभुवनाभयघोषणापटह इव दिगन्तरेषु बभ्राम तूर्य्यप्रतिशब्दः। विधुतकेसरसटाश्च साटोपघटितचलितदूर्व्वापल्लवकवलप्रग्रासैर्मुखपुटैः समहेषन्त हृष्टा वाजिनः। सलीलमुत्क्षिप्तैर्हस्तपल्लवैर्नृत्यन्त इव श्रवणसुभगं जगर्ज्जुर्गजाः। ववौ चाचिराच्चक्रायुधमुक्तजन्मनो लक्ष्म्या निश्वास इव (१३) सुरामोदसुरभिर्दिव्यानिलः। यज्वनां मन्दिरेषु प्रदक्षिणशिखाकलापकथितकल्याणागमाः प्रजज्वलुः अनिन्धना वैतानवह्नयः। भुवतलात्तपनीयशृङ्खलाबन्धबन्धुरकलशीकोशाः समुदगुर्महानिधयः। प्रहतमङ्गलतूर्य्यप्रतिशब्दनिभेन दिक्षु दिक्पालैरपि प्रमोदादारब्धेव दिष्टवृद्धिकलकलः। तत्क्षण एव च शुक्लवाससो ब्रह्ममुखाः कृतयुगप्रजापतय इव प्रजावृद्धये समुपतस्थिरे द्विजातयः। साक्षाद्धर्म्म इव शान्त्युदकफलहस्तस्तस्थौ पुरः पुरोधाः। पुरातन्यः स्थितय इवाहम्यन्तागता बान्धववृद्धाः। प्रलम्बश्मश्रुजालजटिलाननानि बहलमलपङ्ककलङ्ककालकायानि नश्यतः कलिकालस्य बान्धवकुलानीवाकुलान्यधावन्त मुक्तानि बन्धनवृन्दानि। तत्कालापक्रान्तस्याधर्म्मस्य शिबिरश्रेण्य इव

१३। चिराच्चक्रायुधमुक्तजन्मना लक्ष्म्या निश्वास इव ववौ। २। १।

अलक्ष्यन्त लोकविलुण्ठिता विपणिवीथ्यः । विलसदुन्मुखवामनक-बधिरवृन्दवेष्टिताः साक्षाज्जातमातृदेवता इव बहुबालकव्याकुला ननृतुर्वृद्धधात्र्यः । प्रावर्त्तत च विगतराजकुलस्थितिरधःकृतप्रतीहाराकृतिः (१४) अपनीतवेत्रिविवेको निर्दोषान्तःपुरप्रवेशः समस्वामिपरिजनो निर्विशेषबालवृद्धः समानशिष्टाशिष्टजनो दुर्ज्ञेय-मत्तामत्तप्रविभागः तुल्यकुलयुवतिवेश्याविलासः प्रनृत्तसकलकटक-लोकः पुत्त्रजन्मोत्सवो महान् ।

अपरेद्युरारभ्य सर्व्वाभ्यो दिग्भ्यः स्त्रीराज्यानीवावर्जितानि असुरविवराणीवापाटतानि नारायणावरोधानीव प्रचलितानि अप्सरसामिव महीमवतीर्णानि कुलानि परिजनेन पृथुकरण्ड-परिगृहीताः स्नानीयचूर्णावकीर्णकुसुमाः सुमनःस्रजः स्फटिक-शिलाशकलशुक्लकर्पूरखण्डपूरिताः पात्रीः कुङ्कमाधिवासभाञ्जि भाजनानि च मणिमयानि सहकारतैलतिम्यत्तनुखदिरकेसरजाल-जटिलानि चन्दनधवलपूगफलफालीदन्तुरदन्तशफरुकाणि गुञ्जन्-मधुकरकुलपीयमानपारिजातपरिमलानि पाटलानि पाटलकानि च सिन्दूरपात्राणि च पिष्टातकपात्राणि च बाललतालम्बमान-विटकवीटकांश्च ताम्बूलवृक्षान् बिभ्राणेनानुगम्यमानानि चरणानि कुट्टनरणितमणिनूपुरमुखरितदिङ्मुखानि नृत्यन्ति राजकुलम् आगच्छन्ति समन्तात् सामन्तान्तःपुरसहस्राण्यदृश्यन्त ।

शनैः शनैर्व्यजृम्भत च क्वचित् वृत्तानुचितचिरन्तनशालीन-कुलपुत्त्रकलोकलास्यप्रथितपार्थिवानुरागः क्वचिदन्तःक्षितक्षिति-पालापेक्षितक्षीवकुद्दासीसमाकृष्यमाणराजवल्लभः क्वचित् मत्त-कटककुट्टनीकण्ठलग्नवृद्धाढ्यसामन्तनृत्तनिर्भरहसितनरपतिः क्वचित्

(१४) अथ कृतप्रतीहारार्यति । २ ।

क्षितिपालसंज्ञादिष्टदुष्टदासेरकगीतस्तूयमानस्थविरचौर्यरतप्रपञ्चः क्वचित् मदोत्कटकुट्टहारिकापरिष्वज्यमानजरत्प्रव्रजितजनितजनहासः क्वचिदन्योन्यनिर्भरस्पर्धोद्धुरचेटकपेटकारभ्यमाणवाच्यवचनयुद्धः क्वचिन्नृपावलाबलात्कारनर्त्यमानकृत्यानभिज्ञान्तःपुरपालभावितभुजिष्यः सपर्वत इव कुसुमराशिभिः सधारागृह इव सीधुप्रपाभिः सनन्दनवन इव पारिजातकामोदैः सनीहार इव कर्पूररेणुभिः साट्टहास इव पटहरवैः सामृतमथन इव कलकलैः सावर्त्त इव रासकमण्डलैः सरोमाञ्च इव भूषणमणिकिरणैः सपट्टबन्ध इव चन्दनललाटिकाभिः सप्रसव इव प्रतिशब्दकैः सप्ररोह इव प्रसाददानैः उत्सवामोदः।

स्कन्धावलम्बमानकेसरमालाः काम्बोजवाजिन इवास्कन्दन्तः तरलतारका हरिणा इवोड्डीयमानाः सगरसुता इव खनित्रैः निर्दयैश्चरणाभिघातैर्दारयन्तो भुवम् अनेकसहस्रसंख्याश्चिक्रीडुः युवानः। कथमपि तालावचरचारणचरणक्षोभं चक्षमे क्षमा। क्षितिपालकुमारकाणां खेलतामन्योन्यास्फालनैराभरणेभ्यः मुक्ताफलानि पेतुः। सिन्दूररेणुना पुनरुत्पन्नहिरण्यगर्भगर्भशोणितशोणमिव ब्रह्माण्डकपालमभवत्। पटवासपांशुपटलेन प्रकटितमन्दाकिनीसैकतसहस्रमिव शुशुभे नभस्तलम्। विप्रकीर्य्यमाणपिष्टातकपरागपिञ्जरितातपा भुवनक्षोभविशीर्णपितामहकमलकिञ्जल्करजोराजिरञ्जिता इव रेजुर्दिवसाः। सङ्घट्टत्रुटितहारपतितमुक्ताफलपटलेषु चस्खाल लोकः।

स्थानस्थानेषु च मन्दमन्दमास्फाल्यमानालिङ्ग्यकेन शिञ्जानमञ्जुवेणुना झणझणायमानझल्लरीकेण ताड्यमानतन्त्रीपटहिकेन वाद्यमानानुत्तालालाबुवीणेन कलकांस्यकोशीक्वणितकाहलेन सम-

कालदीयमानानुत्तालतालकेन आतोद्यवाद्येनानुगम्यमानाः पदे पदे भणभणितभूषणारवैरपि सहृदयैरिवानुवर्त्तमानताललयाः कोकिला इव मदकलकाकलीकोमलालापिन्यो विटानां कर्णामृतानि अश्लीलरासकपदानि गायन्त्यः समुण्डमालिकाः सकर्णपल्लवाः सचन्दनतिलकाः समुच्छ्रिताभिर्व्वलयावलीवाचालाभिः बाहुलतिकाभिः सवितारमिवालिङ्गयन्त्यः कुङ्कुमप्रसृष्टिरुचिरकायाः काश्मीरकिशोर्य्य इव वल्गन्त्यः नितम्बविम्बलम्बिविकटकुरुण्टकशेखराः प्रदीप्ता इव रागाग्निना सिन्दूरच्छटाच्छुरितमुखमुद्राः शासनपट्टपङ्क्तय इवाप्रतिहतशासनस्य कन्दर्पस्य मुष्टिप्रकीर्य्यमाणकर्पूरपटवासपांशुलाः मनोरथसञ्चरणरथ्या इव यौवनस्य उद्दामकुसुमदामताडिततरुणजनाः प्रतीहार्य्य इव तरुणमहोत्सवस्य प्रचलत्पत्रकुण्डला ललन्त्यो लता इव मदनचन्दनद्रुमस्य ललितपदहंसकरवमुखराः समुल्लसन्त्यो वीचय इव शृङ्गाररसस्य वाच्यावाच्यविवेकशून्या बालक्रीडा इव सौभाग्यस्य घनपटहरवोत्कण्टकितगात्रयष्टयः केतक्य इव कुसुमधूलिमुद्गिरन्त्यः कमलिन्य इव दिवसमुत्फुल्लाननाः कुमुदिन्य इव रात्रावनुपजातनिद्राः आविष्टा इव नरेन्द्रछन्दपरिहृताः प्रीतय इव हृदयमपहरन्त्यः गीतय इव रागमुद्दीपयन्त्यः पुष्टय इवानन्दमुत्पादयन्त्यः मदमपि मदयन्त्य इव रागमपि रञ्जयन्त्य इव आनन्दमपि आनन्दयन्त्य इव नृत्यमपि नर्त्तयमाना इव उत्सवमपि उत्सुकयन्त्य इव कटाक्षितेषु पिबन्त्य इवापाङ्गशुक्तिभिः तर्जनेषु संयमयन्त्य इव नखमयूखपाशैः कोपाभिनयेषु ताडयन्त्य इव भ्रूलताविभागैः प्रणयसम्भाषणेषु वर्षन्त्य इव सर्व्वरसान् चतुरचंक्रमणेषु विकिरन्त्य इव विकारान् पण्यविलासिन्यः प्रानृत्यन् ।

अन्यत्र वेत्रिवेत्रविन्यासितजनरुध्यमानदत्तान्तराला: भ्रियमाणधवला-तपत्रवना वनदेवता इव कल्पतरुतलविचारिण्य: (१५) काश्चित् स्कन्धोभयपार्श्वलम्बमानलम्बोत्तरीयलग्ना लीलादोलाधिरूढा इव प्रेङ्खन्त्य: काश्चित् कनककेयूरकोटिपाट्यमानपट्टांशुकोत्तरङ्गा: तरङ्गिण्य इव तरङ्गकशाकसीमन्त्यमानस्रोतस: काश्चिद्धूयमान-धवलचामरसटालग्नत्रिकण्टकवलितविकटकटाक्षा: सरस्य इव हंसाकृष्यमाणनीलोत्पलवना: काश्चिच्चलच्चरणच्युतालक्तकारुणस्वेद-शीकरसिच्यमानभवनहंसा: सन्ध्यारागरज्यमानेन्दुबिम्बा इव कौमुदीरजन्य: काश्चित् कण्ठनिहितकाञ्चनकाञ्चीगुणाञ्चितकञ्चुकि-विकारकुञ्चितभ्रुव: कामवागुरा इव प्रसारितबाहुपाशा राज महिष्य: प्रारब्धनृत्या विरेजु: (१६)।

सर्वतश्च नृत्यत: स्त्रैणस्य गलद्भि: पदालक्तकैररुणिता रागमयीव शुशोभ क्षोणी। समुल्लसद्भि: स्तनमण्डलैर्मङ्गलकलश-मय इव बभूव महोत्सव:। भुजलताविक्षेपैर्मृणालवलयमय इव रराज जीवलोक:। समुल्लसद्भिः स्मितासितैर्सितिमय इव अक्रियत काल:। चञ्चलानां चक्षुषामंशुभि: कृष्णसारमया इवासन् वासरा:। समुल्लसद्भि: शिरीषकुसुमस्तवककर्णपूरै: शुकपिच्छमय इव हरितच्छायोऽभूदातप:। विजृम्भमाणैर्धम्मिल्लतमालपल्लवै: कज्जलमयमिवालक्ष्यतान्तरिक्षम्। उत्क्षिप्तैर्चलकिसलयै: कम-लिनीमय्य इव बभासिरे दृष्टय: (१७)। माणिक्यखण्डाभरणानाम् अर्चिषा चापपत्रमया इव चकाशिरे रविमरीचय:। रणताम् आभरणगणानां प्रतिशब्दकै: किङ्किणीमय्य इव शिशिञ्जिरे

(१५) कल्पतरुतलविलासिन्य । ३ ।

(१६) विरेजु । १ । ३ (१७) दृष्टय । १ । २ ।

दिशः । जरत्योऽपि उन्मादिन्य इव रमण्यो रेमुः । वर्षीयांसोऽपि ग्रहगृहीता इव नापत्नेपिरे । विद्वांसोऽपि मत्ता इवात्मानं विसस्मरुः । निनङ्क्षिषया मुनीनामपि मनांसि विपुस्फुरुः । सर्व्वस्वञ्च ददौ नरपतिः । दिशि दिशि कुवेरकोषा इवालुण्यन्त लोकेन द्रविणराशयः ।

एवञ्च वृत्ते तस्मिन् महोत्सवे शनैः शनैः पुनरप्यतिक्रामति काले देवे चोत्तमाङ्गनिहितरक्षासर्षपे समुन्मिषत्प्रतापाग्निस्फुलिङ्ग इव गोरोचनापिञ्जरितवपुषि समभिव्यज्यमानसहजक्षात्त्रतेजसीव हाटकबद्धविकटव्याघ्रनखपङ्क्तिमण्डितग्रीवके हृदयोद्भिद्यमानदर्पाङ्कुर इव प्रथमाव्यक्तजल्पितेन सत्यस्य शनैरोङ्कारमिव कुर्व्वाणे मुग्धस्मितैः कुसुमैरिव मधुकरकुलानि बन्धुहृदयान्याकर्षति जननीपयोधरकलशपयःशीकरसेकादिव जायमानैर्विलासहसिताङ्कुरैः दशनकैरलङ्क्रियमाणमुखकमलके चारित्र इवान्तःपुरस्त्रीकदम्बकेन पाल्यमाने मन्त्र इव सचिवमण्डलेन रक्ष्यमाणे वृत्त इव कुलपुत्त्रकलोकेनामुच्यमाने यशसीवात्मवंशेन संवर्द्धमाने खगपतिपोत इव रक्षिपुरुषशस्त्रपञ्जरमध्यगते धात्रीकराङ्गुलिलग्ने पञ्चषाणि पदानि प्रयच्छति हर्षे षष्ठं वर्षमवतरति च राज्यवर्द्धने देवी यशोवती गर्भेणाधत्त नारायणमूर्त्तिरिव वसुधां देवीं राज्यश्रियम् ।

पूर्णेषु च प्रसवदिवसेषु दीर्घरक्तनालनेत्रामुत्पलिनीमिव सरसी हंसमधुरस्वरां शरदमिव प्रावृट् कुसुमसुकुमारावयवां वनराजिम् इव मधुश्रीः महाकनकावदातां वसुधारामिव द्यौः प्रभावर्षिणीं रत्नजातिमिव वेला सकलजननयनानन्दकारिणीं चन्द्रलेखामिव प्रतिपत् सहस्रनेत्रदर्शनयोग्यां जयन्तीमिव शची सर्व्वभूभृदभ्यर्थितां

गौरीमिव मेना प्रसूतवती दुहितरम्। यथा द्वयोः सुतयोरुपरि समयोरिवैकावलीलतया नितरामराजत।

अस्मिन्नेव तु काले देव्या यशोवत्या भ्राता सुतमष्टवर्षदेशीयम् उह्यमानकुटिलकाकपक्षकशिखण्डं अखण्डपरशुकहुङ्काराग्निधूम-लेखानुबद्धमूर्द्धानं मकरध्वजमिव पुनर्जातम् एकेनेन्द्रनीलकुण्डलांशुश्यामलितेन शरीरार्द्धेन इतरेण च त्रिकण्टकमुक्ताफलालोकधवलितेन सम्पृक्तावतारमिव हरिहरयोर्दर्शयन्तं पीनप्रकोष्ठप्रतिष्ठित-पुष्पलोहवलयं परशुराममिव अनन्तपणक्षीणपरशुपाशविश्लिष्टं बालतां गतं कण्ठसूत्रग्रथितभद्रप्रवालाङ्कुरं हिरण्यकशिपुमिव उरःकाठिन्यखण्डितनरसिंहनखरखण्डं शैशवेऽपि सावष्टम्भं बीजमिव वीर्यद्रुमस्य भण्डिनामानमनुचरं कुमारयोः अर्पितवान्।

अवनिपतेस्तु तस्योपरि पुत्रयोस्तृतीयस्य नेत्रयोरिवेश्वरस्य तुल्यं दर्शनमासीत्। राजपुत्रावपि सकलजीवलोकहृदयानन्ददायिनौ तेन प्रदर्शितदक्षिणेन मधुमाधवाविव मलयमारुतेनोपेतौ नितरां रेजतुः। क्रमेण च अपरेणेव भ्राता आनन्देन सह वर्द्धमानौ यौवनमवतेरतुः। स्थिरोरुस्तम्भौ च दृढप्रकोष्ठौ दीर्घ-भुजार्गलौ विकटोरःकपाटौ प्रांशुशालाभिरामौ महानगरसन्नि-वेशाविव सर्वलोकाश्रयक्षमौ बभूवतुः।

अथ चन्द्रसूर्य्याविव स्फुरज्ज्योत्स्नायशःप्रतापाक्रान्तभुवनौ अभिरामदुर्निरीक्ष्यौ अग्निमारुताविव समभिव्यक्ततेजोबलौ एकी-भूतौ शिलाकठिनकायबन्धौ हिमवद्विन्ध्याविवाचलौ महारथाविव कृतयुगयोग्यौ अरुणगरुडाविव हरिवाहनविभक्तशरीरौ इन्द्रोपेन्द्रौ इव नागेन्द्रगतौ कर्णार्जुनाविव कुण्डलकिरीटधरौ पूर्वापरदिग-

भागाविव सर्व्वतेजस्विनामुदयास्तमयसम्पादनसमर्थौ अमान्तौ इवातिमानेन आसन्नवेलार्गलनिरोधसङ्कटे कुकुटीरके तेजःपराङ्मुखीं छायामपि जुगुप्समानौ स्वात्मप्रतिबिम्बेनापि पादनखलग्नेन लज्जमानौ शिरोरुहाणामपि भङ्गेन दुःखमवतिष्ठमानौ चूडामणिसंक्रान्तेनापि द्वितीयेनातपत्रेणापत्रपमाणौ भगवति पशुपतावपि स्वामिशब्देनासुखायमानश्रवणौ दर्पणदृष्टेनापि प्रतिपुरुषेण दूयमाननयनौ सन्ध्याञ्जलिघटनेष्वपि शूलायमानोत्तमाङ्गौ जलधरधृतेनापि धनुषा दोदूयमानहृदयौ आलेख्यक्षितिपतिभिरपि अप्रणमद्भिः सन्ताप्यमानचरणौ परिमितमण्डलसन्तुष्टं तेजः सवितुरप्यबहुमन्यमानौ भूभृत्पक्षहृतलक्ष्मीकं सागरमप्युपहसन्तौ बलवन्तमकृतविग्रहं मारुतमपि निन्दन्तौ हिमवतोऽपि चमरीबालव्यजनवीजितेन दह्यमानौ जलधीनामपि शङ्खैः खिद्यमानौ चतुःसमुद्राधिपतिमपरं प्रचेतसमप्यसहमानौ अनपहृतच्छत्रानपि विच्छायानवनिपालान् कुर्व्वाणौ साधुष्वपि असेवितप्रसन्नौ मुखेन मधु क्षरन्तौ दुष्टराजवंशान् उष्मणा दूरस्थितानपि म्लानिमानयन्तौ अनुदिवसं शस्त्राभ्यासश्यामिकाकलङ्कितमशेषराजकप्रतापाग्निनिर्व्वापणमलिनमिव करतलमुद्वहन्तौ योग्याकालेषु (१८) धीरैः धनुर्ध्वनिभिरश्रुतपूर्व्वोपभोगात् दिग्वधूभिरिवालपन्तौ राज्यवर्द्धन इति हर्ष इति सर्व्वस्यामेव पृथिव्यामाविर्भूतशब्दप्रादुर्भावौ स्वल्पीयसैव कालेन द्वीपान्तरेष्वपि प्रकाशतां जग्मतुः ।

एकदा च तावाहूय भुक्तवानभ्यन्तरगतः पिता सस्नेहमवादीत् वत्सौ प्रथमं राज्याङ्गं दुर्लभाः सद्भृत्याः । प्रायेण परमाणव इव समवायेष्वनुगुणीभूय द्रव्यं कुर्व्वन्ति पार्थिवं क्षुद्राः । क्रीड़ारसेन

(१८) अभ्यासकालेषु । २ ।

नर्त्तयन्तो मयूरतां नयन्ति बालिशाः। दर्पणमिवानुप्रविश्यात्मीयां प्रकृतिं संक्रामयन्ति पल्लवकाः। स्वप्ना इव मिथ्यादर्शनैरसद्बुद्धिं जनयन्ति विप्रलम्भकाः। गीतनृत्यहसितैरुन्मत्ततामावहन्ति उपेक्षिता विकारा इव वातिकाः। आतङ्का इव तृणावन्तो न शक्यन्ते ग्रहीतुमकुलीनाः। मानसे मीनमिव स्फुरन्तमेवाभिप्रायं गृह्णन्ति जालिकाः। यमपट्टिका इवाम्बरे चित्रमालिखन्त्यघटितकाः। शल्यं हृदये निक्षिपन्ति अतिमार्गणाः। यतः सर्वदोषाभिषङ्गरहितौ बहुधोपधाभिः परीक्षितौ शुची विनीतौ विक्रान्तावभिरूपौ मालवराजपुत्रौ भ्रातरौ भुजाविव मे शरीरादव्यतिरिक्तौ कुमारगुप्तमाधवगुप्तौ अस्माभिर्भवतोरनुचरत्वार्थमिमौ निर्दिष्टौ। अनयोः उपरि भवद्भ्यामपि नान्यपरिजनसमवृत्तिभ्यां भवितव्यम्। इत्युक्त्वा तयोराह्वानाय प्रतीहारमादिदेश।

नचिरात् द्वारदेशनिक्षिप्तलोचनौ राज्यवर्द्धनहर्षौ प्रतीहारेण सह प्रविशन्तम् अग्रतो ज्येष्ठमष्टादशवर्षवयसं नात्युच्चं नातिवर्ष्मम् अतिगुरुभिः पदन्यासैरनेकनरपतिसञ्चरणचलां निश्चलीकुर्वाणम् इवोर्वीम् अनवरताभ्यस्तलङ्घनघनापचयकठिनमांसमेदुरात् ऊरुद्वयाद्विघट्यतेनेवातुलबलजानुग्रन्थिप्रसृतेन तनुतरजङ्घाकाण्डयुगलेन भासमानम् उल्लिखितपार्श्वप्रकाशितकशिम्ना मन्दरमिव सुरासुरभ्रमभ्रमितवासुकिकषणक्षीणेन मध्येन लक्ष्यमाणम् अतिविस्तीर्णेनोरसा स्वामिसम्भावनानाम् अपरिमितानाम् अवकाशम् इव प्रयच्छन्तम् प्रलम्बमानस्य भुजयुगलस्य निभृतवलितैर्विक्षेपैः अतिदुस्तरं तरन्तमिव यौवनोदधिं वामकरकटकमाणिक्यमरीचिमञ्जरीजालिन्या समुद्भिद्यमानप्रतापानलशिखापल्लवयेव चापकिणलेखयाङ्कितपीवरप्रकोष्ठम् आलोहिनीमुन्नतांसतटावलम्बिनीमक्ष-

ग्रहणाव्रतविधृता रौरवीमिव त्वचं कर्णाभरणमणेः प्रभां बिभ्राणम्, उत्कोटिकेयूरपत्रभङ्गपुत्त्रिकाप्रतिबिम्बगर्भकपोलं मुखं चन्द्रमसम् इव हृदयस्थितरोहिणीकमुद्वहन्तम् अचपलस्तिमिततारकेणाधोमुखेन चक्षुषा शिक्षयन्तमिव लक्ष्मीलाभोन्मानितमुखानि पङ्कजवनानि विनयं स्वाम्यनुरागमिवाम्लातकम् (१९) उत्तंसीकृतं शिरसा धारयन्तं निर्दयया कङ्कणभङ्गभीतसकलकार्मुकार्पितामिव नम्रतां प्रकाशयन्तं शैशव एव निर्जितैरिन्द्रियैररिभिरिव संयतैः शोभमानं प्रणयिनीमिव विश्वासभूमिं कुलपुत्रतामनुवर्त्तमानं तेजस्विनमपि शीलेनाह्लादकेन सवितारमिव शशिनान्तर्गतेन विराजमानम् अचलानामपि कायकार्कश्येन गुरुत्वम् (२०) इव आचरन्तं दर्शनक्रीतमानन्दहस्ते विक्रीणानमिव जनं सौभाग्येन, कुमारगुप्तम् पृष्ठतस्तस्य कनीयांसमतिप्रांशुतया गौरतया च मनःशिलाशैलमिव सञ्चरन्तम् अनुल्बणमालतीकुसुमशेखरनिभेन निर्जिगमिषता गुरुणा शिरसि चुम्बितमिव यशसा, परस्परविरुद्धयोः विनययौवनयोश्चिरात् प्रथमसङ्गमचिह्नमिव भ्रूसङ्गतकेन कथयन्तम् अतिधीरतया हृदयनिहितां स्वामिभक्तिम् इव निश्चलां दृष्टिं धारयन्तम् अच्छाच्छचन्दनरसानुलेपशीतलं सन्निहितहारोपधानं वक्षःस्थलम् अनन्तसामन्तसंक्रान्तिश्रान्तायाः श्रियो विशालं शयिमणिशिलापट्टशयनमिव बिभ्राणं चक्षुः कुरङ्गैः घोणावंशं वराहैः स्कन्धपीठं महिषैः प्रकोष्ठबन्धं व्याघ्रैः पराक्रमं केसरिभिः गमनं मतङ्गजैः मृगयाक्षपितशेषैर्भीतैः उत्कोचमिव दत्तं दर्शयन्तं माधवगुप्तं ददृशतुः ।

(१९) अम्लानम् । १ । २ । अम्लातम् । ३ ।

(२०) मर्द्दनम् । ३ ।

प्रविश्य च दूरादेव चतुर्भिरङ्गैरुत्तमाङ्गेन च गां स्पृशन्तौ नमश्चक्रतुः। स्निग्धनरेन्द्रदृष्टिनिर्द्दिष्टामुचितां भूमिं भेजाते। मुहूर्त्तं च स्थित्वा भूपतिरादिदेश तौ अद्य प्रभृति भवद्भ्यां कुमारौ अनुवर्त्तनीयाविति। यथाज्ञापयति देव इति मेदिनीदोलायमानमौलिभ्यामुत्थाय राज्यवर्द्धनहर्षौ प्रणेमतुः। तौ च पितरम्। ततश्चारभ्य क्षणमपि निमेषोन्मेषाविव चक्षुर्गोचरादनपयान्तौ उच्छ्वासनिश्वासाविव नक्तन्दिवमभिमुखस्थितौ भुजाविव सततपार्श्ववर्त्तिनौ (२१) कुमारयोस्तौ बभूवतुः।

अथ राज्यश्रीरपि नृत्यगीतादिषु विदग्धासु सखीषु सकलासु कलासु च प्रतिदिनमुपचीयमानपरिचया शनैः शनैरवर्द्धत। परिमितैरेव दिवसैर्यौवनमारुरोह। निपेतुरेकस्यां तस्यां शरा इव लक्ष्यभुवि भूभुजां सर्व्वेषां दृष्टयः। दूतप्रेषणादिभिश्च तां ययाचिरे राजानः।

कदाचित्तु राजा अन्तःपुरप्रासादस्थितो बाह्यकक्ष्यावस्थितेन पुरुषेण स्वप्रस्तावागतां गीयमानामार्य्यामशृणोत्

उद्वेगमहावर्त्ते पातयति पयोधरोन्नमनकाले।
सरिदिव तटमनुवर्षं विवर्द्धमाना सुता पितरम्॥

तां श्रुत्वा पार्श्वस्थितां महादेवीमुत्सारितपरिजनो जगाद देवि तरुणीभूता वत्सा राज्यश्रीः। एतदीया गुणा इव क्षणमपि हृदयान्नापयाति मे चिन्ता। यौवनारम्भ एव च कन्यकानाम् इन्धनीभवन्ति पितरः सन्तापानलस्य। हृदयमन्धकारयति मे दिवसमिव पयोधरोन्नतिरस्याः। केनापि कृता धर्म्या नाभिमता मे स्थितिरियं यदङ्गसम्भूतानि अङ्कलालितानि अपरि-

२१ सतत पार्श्ववर्त्तिनौ। ७।

त्याज्यान्यपत्यकानि अकाण्ड एवागत्य असंस्तुतैर्नीयन्ते। एतानि तानि खल्वङ्गनस्थानानि (२२) संसारस्य। सेयं सर्व्वाभिभाविनी शोकाग्नेर्दाहशक्तिः यदपत्यत्वे समाने जातायां दुहितरि दूयन्ते सन्तः। एतदर्थं जन्मकाल एव कन्यकाभ्यः प्रयच्छन्ति सलिलम् अश्रुभिः साधवः। एतद्भयादकृतदारपरिग्रहाः परिहृतगृहवसतयः शून्यान्यरण्यान्यधिशेरते मुनयः। को हि नाम सहते विरहम् अपत्यानाम्। यथा यथा समापतन्ति दूता वराणां वराकी लज्जमानेव चिन्ता तथा तथा नितरां प्रविशति मे हृदयम्। किं क्रियते तथापि गृहगतैरनुगन्तव्या एव लोकवृत्तयः। प्रायेण च सत्स्वप्यन्येषु वरगुणेषु अभिजनमेवानुरुध्यन्ते धीमन्तः। धरणीधराणाञ्च मूर्द्धि स्थितो माहेश्वरः पादन्यास इव सकलभुवननमस्कृतो मौखरो वंशः। तत्रापि तिलकभूतस्यावन्तिवर्म्मणः सूनुः अग्रजो ग्रहवर्म्मा नाम ग्रहपतिरिव गां गतः पितुरन्यूनो गुणैः एनां प्रार्थयते। यदि भवत्या अपि मतिरनुमन्यते ततस्तस्मै दातुम् इच्छामि।

इत्युक्तवति भर्त्तरि दुहितृस्नेहकातरतरहृदया साश्रुलोचना महादेवी प्रत्युवाच आर्य्यपुत्त्र संवर्द्धनमात्रोपयोगिन्यो धात्रीनिर्व्विशेषा भवन्ति खलु मातरः कन्यकानाम्। दाने तु प्रमाणमासां पितरः। केवलं कृपाकृतविशेषः सुदूरेण तनयस्नेहादतिरिच्यते दुहितृस्नेहः। यथा यावज्जीवमावयोर्नाधितां (२३) प्रतिपद्यते तथा आर्य्यपुत्त्र एव जानातीति।

राजा तु जातनिश्चयो दुहितृदानं प्रति समाहूय सुतावपि विदितार्थावकार्षीत्। शोभने च दिवसे ग्रहवर्म्मणा कन्या प्रार्थ

(२२) आनन्दास्थानानि। २। (२३) आर्त्तिताम। १।

यितुं प्रेषितस्य पूर्व्वागतस्यैव प्रधानदूतपुरुषस्य करे सर्व्वराजकुल-समक्षं दुहितृदानजलमपातयत्। आत्ममुदि कृतार्थे गते च तस्मिन् आसन्नेषु च विवाहदिवसेषु उद्दामदीयमानताम्बूलपटवासकुसुम-प्रसाधितसर्व्वलोकं सकलदेशादिश्यमानशिल्पिसार्थागमनम् अवनि-पालपुरुषसङ्गृहीतसमग्रग्रामीणानीयमानोपकरणसम्भारं राज-दौवारिकोपनीयमानानेकनृपोपायनम् उपनिमन्त्रितागतबन्धुवर्ग-संवर्गणव्यग्रराजवल्लभं मधुमदप्रचलच्चर्म्मकारकरपुटास्फालित-कोणपटुविघट्टनरणन्मङ्गलपटहं पिष्टपञ्चाङ्गुलमण्ड्यमानोलूखल-मुसलशिलाद्युपकरणम् अशेषागाराभ्यागारविभजनवारणापरम्परापूर्य्य-माणप्रकोष्ठप्रतिष्ठाप्यमानेन्द्राणीदैवत सितकुसुमविलेपनवसन-सत्कृतैः सूत्रधारैर्दीयमानविवाहवेदीसूत्रपातम् उत्कूर्च्चककरैश्च सुधाकर्परस्कन्धैरधिरोहणीसमारूढैर्धवलैर्धवलीक्रियमाणप्रासाद-प्रतोलीप्राकारशिखरं कुसुमक्षाल्यमानकुसुम्भसम्भाराम्भःस्रवपूर्य्य-मानजनपादपल्लवं निरूप्यमाणयौतुकयोग्यमातङ्गतुरङ्गतरङ्गिताङ्गणं गणनाभियुक्तगणकगणगृह्यमाणलग्नगुणं गन्धोदकवाहिमकर-मुखप्रणालीपूर्य्यमाणक्रीडावापीसमूहं हेमकारचक्रप्रक्रान्तहाटक-घटनटाङ्कारवाचालितालिन्दकम् उत्थापिताभिनवभित्तिपात्यमान-वहलवालुकाकर्दमालेपाकुलालेपकलोकं चतुरचित्रकरचक्रवाल-लिख्यमानमङ्गल्यालेख्यं लेप्यकारकदम्बकक्रियमाणमृण्मयमीन-कूर्म्ममकरनारिकेलकदलीपूगवृक्षकं क्षितिपालैश्च स्वयमाबद्धकक्ष्यैः स्वाम्यर्पितकर्म्मशोभासम्पादनाकुलैः सिन्दूरकुट्टिमभूमीश्च मसृणा-यद्भिः विनिश्चितसरसार्द्रपर्णच्छलान् विन्यस्तालक्तकपाटकांश्च घृता-शोकपल्लवलाञ्छितशिखरान् उद्गाढवितर्द्दिकास्तम्भानुत्तम्भयद्भिः प्रारब्धविविधव्यापारम् आ सूर्य्योदयाच्च प्रविष्टाभिः सतीभि-

सुभगाभिः सुरूपाभिः सुवेशाभिरविधवाभिः सिन्दूररजोराजिराजितललाटाभिः वधूवरगोत्रग्रहणगर्भाणि श्रुतिसुभगानि मङ्गलानि गायन्तीभिः बहुविधवर्णकादिग्धाङ्गुलीभिः ग्रीवासूत्राणि च चित्रयन्तीभिश्चित्रपत्रलतालेख्यकुशलाभिः कलशांश्च धवलितान् शीतलशालाजिरश्रेणीश्च (२४) मण्डयन्तीभिः (२५) अभिन्नपुटकार्पासतूलपल्लवांश्च वैवाहिककङ्कणोर्णासूत्रसन्नाहांश्च रञ्जयन्तीभिः बलाहृतघनीकृतकुङ्कुमकल्कमिश्रितांश्चाङ्गरागान् लावण्यविशेषकान्ति च मुखालेपनानि कल्पयन्तीभिः कक्कोलमिश्राः सजातीफलाः स्फुरत्स्फीतस्फटिककर्पूरशकलखचितान्तरालाः लवङ्गमाला रचयन्तीभिः समन्तात्सामन्तसीमन्तिनीभिर्व्याप्तम् बहुविधभक्तिनिर्माणनिपुणपुराणपौरपुरन्ध्रिबध्यमानैश्च आचारचतुरान्तःपुरजरतीजनितपूजाराजमानरजकरज्यमानैः रक्तैश्च उभयपटान्तलग्नपरिजनप्रेङ्खोलितैश्छायासु शोष्यमाणैः शुष्कैश्च कुटिलकमरूपक्रियमाणपल्लवपरभागैरपरैरारब्धकुङ्कुमपङ्कस्थासकच्छुरणैरपरैरङ्गजभुजिष्यभज्यमानभङ्गुरोत्तरीयैः क्षौमैश्च बादरैश्च दुकूलैश्च लालातन्तुजैश्चांशुकैश्च नेत्रैश्च निर्मोकनिभैरकठोररम्भागर्भकोमलैर्निश्वासहार्य्यैः स्पर्शानुमेयैर्वासोभिः सर्व्वतः स्फुरद्भिः इन्द्रायुधसहस्रैरिव संछादितम्, उज्ज्वलनिचोलकावगुण्ठ्यमानहंसकुलैश्च शयनीयैः तारामुक्ताफलोपचीयमानैश्च कञ्चुकैः अनेकोपयोगपाट्यमानैश्चापरिमितैः पट्टपटीसहस्रैः अभिनवरागकोमलदुकूलराजमानैश्च पटवितानैः स्तवरकनिबहनिरन्तरच्छाद्यमानसमस्तपटलैश्च मण्डपैः उच्छ्रितनेत्रपटवेष्ट्यमानैश्च स्तम्भैरुज्ज्वलं रमणीयश्चोत्सुकस्य मङ्गल्यश्चासीद्राजकुलम् ।

(२४) शीतलशालाजिरश्रेणीश्च । १ । २ ।   (२५) मण्डलयन्तीभि । २ ।

देवी तु यशोवती विवाहोत्सवपर्य्याकुलहृदया हृदयेन भर्त्तरि कुतूहलेन जामातरि स्नेहेन दुहितरि उपचारेण निमन्त्रितस्त्रीषु आदेशेन परिजने शरीरेण सञ्चरणे चक्षुषा कृताकृतप्रत्यवेक्षणेषु आनन्देन महोत्सवे एकापि बहुधा विभक्तेवाभवत् । भूपतिरपि उपर्य्युपरि विसर्जितोष्ट्रवामीजनितजामातृतोषः सत्यप्याज्ञासम्पादनदक्षे सुखेक्षणपरे परिजने समं पुत्राभ्यां दर्शितस्नेहविक्लवः सर्व्वं स्वयमकरोत् ।

एवञ्च तस्मिन् अधिवासमय इव भवति राजकुले मङ्गलमय इव जायमाने जीवलोके चारणमयेष्विव लक्ष्यमाणेषु दिङ्मुखेषु पटहमय इव कृतेऽन्तरिक्षे भूषणमय इव भ्रमति परिजने बान्धवमय इव दृश्यमाने सर्गे निर्वृतिमय इवोपलक्ष्यमाणे काले लक्ष्मीमय इव विजृम्भमाणे महोत्सवे निधान इव भुवनस्य फल इव जन्मनः परिणाम इव पुण्यस्य यौवन इव विभूतेः यौवराज्य इव प्रीतेः सिद्धिकाल इव मनोरथस्य वर्त्तमाने गण्यमान इव जनाङ्गुलीभिः आलोक्यमान इव मार्गध्वजैः प्रत्युद्गम्यमान इव मङ्गल्यवाद्यप्रतिशब्दकैः आहूयमान इव मौहूर्त्तिकैः आलप्यमान इव मनोरथैः परिष्वज्यमान इव वधूसखीहृदयैः आजगाम विवाहदिवसः । प्रातरेव प्रतीहारैः समुत्सारितनिःशेषानियुक्तलोकं विविक्तमक्रियत राजकुलम् ।

अथ प्रतीहारः प्रविश्य नृपसमीपं देव जामातुरन्तिकात् ताम्बूलदायकः पारिजातकनामा सम्प्राप्तः इत्यभिधाय साकारं युवानमदर्शयत् । राजा तु तं दूरादेव जामातृबहुमानाद्विहितादरो बालक कच्चित् कुशली ग्रहवर्म्मेति पप्रच्छ । असौ तु समाकर्णितनराधिपध्वनिर्धावमानः कतिचित् पदान्युपसृत्य प्रणम्य च

बाहू सेवाचतुरश्चिरं वसुन्धरायां निधाय मूर्द्धानम् उत्थाय देव कुशली यथाज्ञापयसि अभ्यर्थयति च देवं नमस्कारेणेति व्यज्ञापयत्। आगतजामातृनिवेदनागतञ्च तं ज्ञात्वा कृतसत्कारं राजा यामिन्याः प्रथमे यामे विवाहकालात्ययकृतो यथा न भवति दोष इति सन्दिश्य प्रतीपं प्राहिणोत्॥

अथ सकलकमलवनलक्ष्मीं वधूमुख इव सङ्क्राम्य समवसिते वासरे विवाहदिवसश्रियः पादपल्लव इव रज्यमाने सवितरि वधूवरानुरागलघूकृतप्रेमलज्जितेष्विव विघटमानेषु चक्रवाकमिथुनेषु सौभाग्यध्वज इव रक्तांशुकसुकुमारवपुषि नभसि स्फुरति सन्ध्यारागे कपोतकण्ठकर्व्वुरे वरयात्रागमनरजसीव कलुषयति दिङ्मुखानि तिमिरे लग्नसम्पादनसज्ज इव उज्जिहाने ज्योतिर्गणे विवाहमङ्गलकलश इव उदयशिखरिणा समुत्क्षिप्यमाणे वर्द्धमानधवलच्छाये ताराधिपमण्डले वधूवदनलावण्यज्योत्स्नापरिपीततमसि प्रदोषे हृष्योदितमुपहसत्स्विव रजनिकरम् उत्तानितमुखेषु कुमुदवनेषु आजगाम मुहुर्म्मुहुरुल्लासितस्फारस्फुरिताकणचामरैर्मनोरथैरिवोत्थितरागाग्रपल्लवैः पुरो धावमानैः पादातैः उत्कर्णकटकहयप्रतिहेषितदीयमानस्वागतैरिव वाजिनां वृन्दैरापूरितदिग्भागः चलकर्णचामराणां चामीकरमयसर्व्वोपकरणानां वर्णकर्म्मिणां बलिनां घण्टाटाङ्कारिणां करिणां घटाभिः घटयन्निव पुनरिन्दूदयविलीनमन्धकारं नक्षत्रमालामण्डितमुखीं करिणीं निशाकर इव पौरन्दरीं दिशमारूढः प्रकटितविविधविहगविरुतैस्तालावचरचारणैः पुरःसरैः बालो वसन्त इवोपवनैः क्रियमाणकोलाहलो गन्धतैलावसेकसुगन्धिना दीपिकाचक्रवालस्यालोकेन कुङ्कुमपटवासधूलिपटलेनेव पिञ्जरीकुर्व्वन् सकलं

लोकम् उत्फुल्लमल्लिकामुण्डमालामध्याध्यासितकुसुमशेखरेण शिरसा हसन्निव सपरिवेशशशाङ्कं कौमुदीप्रदोषम् आत्मरूपनिर्जितमकरकेतुकरापह्नुतेन कार्मुकेणेव कौसुमेन दाम्ना विरचितवैकक्ष्यकविलासः कुसुमसौरभगर्व्वभ्रान्तभ्रमरकुलकलप्रलापसुभगः पारिजात इव जातः श्रिया सह पुनरवतारितो मेदिनीम् नववधूवदनावलोकनकुतूहलेनेव कृष्यमाणहृदयः पतन्निव मुखेन प्रत्यासन्नलग्नो ग्रहवर्म्मा।

राजा तु तमुपद्वारमागतं चरणाभ्यामेव राजचक्रानुगम्यमानः समुत्प्रत्युज्जगाम। अवतीर्णस्य तं कृतनमस्कारं मन्मथमिव माधवः प्रसारितभुजो गाढमालिलिङ्ग। यथाक्रमं परिष्वक्तराज्यवर्द्धनहर्षञ्च हस्ते गृहीत्वाभ्यन्तरं निन्ये। स्वनिर्विशेषासनदानादिना चैनम् उपचारेणोपचचार।

नचिराच्च गम्भीरनामा नृपतेः प्रणयी विद्वान् द्विजन्मा ग्रहवर्म्माणमुवाच तात त्वां प्राप्य चिरात् खलु राज्यश्रिया घटितौ तेजोमयौ सकलजगद्गीयमानबुधकर्णानन्दकारिगुणगणौ सोमसूर्य्यवंशाविव पुष्यभूतिमुखरवंशौ। प्रथममेव कौस्तुभमणिरिव गुणैः स्थितोऽसि हृदये देवस्य। इदानीन्तु शशीव शिरसा परमेश्वरेण असि वोढव्यो जात इति।

एवं वदत्येव तस्मिन् नृपमुपसृत्य मौहूर्त्तिका देव समासीदति लग्नवेला व्रजतु जामाता कौतुकगृहमित्यूचुः। अथ नरेन्द्रेण उत्तिष्ठ गच्छेति गदितो ग्रहवर्म्मा प्रविश्यान्तःपुरं जामातृदर्शनकुतूहलिनीनां स्त्रीणां पतितानि लोचनसहस्राणि विकचनीलकुवलयवनानीव लङ्घयन्नाससाद कौतुकगृहद्वारम्। निवारितपरिजनश्च प्रविवेश।

अथ तत्र कतिपयाप्तप्रियसखीस्वजनप्रमदाप्रायपरिवाराम् अरुणांशुकावगुण्ठितमुखीं प्रभातसन्ध्यामिव स्वप्रभया निष्प्रभान् प्रदीपकान् कुर्व्वाणाम् अतिसौकुमार्य्यशङ्कितेनेव यौवनेन नातिनिर्भरमुपगूढां (२६) साध्वसनिरुध्यमानहृदयदेशदुःखमुक्तैर्निभृतायतैः श्वसितैः अपयान्तं कुमारभावमिवानुशोचन्तीम् अत्युत्कम्पिनीं पतनभियेव त्रपया निष्पन्दं धार्य्यमाणां हस्तं तामरसप्रतिपन्नम् आसन्नग्रहणं शशिनमिव रोहिणीं भयवेपमानमानसामवलोकयन्तीं चन्दनधवलतनुलतां ज्योत्स्नादानसञ्चितलावण्यात् कुमुदिनीगर्भादिव प्रसूतां कुसुमामोदनिर्हारिणीं वसन्तहृदयादिव निर्गतां निश्वासपरिमलाकृष्टमधुकरकुलां मलयमारुतादिव उत्पन्नां कृतकन्दर्पानुसरणां रतिमिव पुनर्जातां प्रभालावण्यमदसौरभमाधुर्य्यैः कौस्तुभशशिमदिरापारिजातामृतप्रभवैः सर्व्वरत्नगुणैः अपरामिव सुरासुररुषा रत्नाकरेण कल्पितां श्रियं स्निग्धेन बालिकालोकेन सितसिन्धुवारकुसुममञ्जरीभिरिव मुक्तादीधितिभिः कल्पितकर्णावतंसां कर्णाभरणमरकतप्रभाहरितशाद्वलेन कपोलस्थलीतलेन विनोदयन्तीमिव हारिणीं लोचनच्छायाम् अधोमुखं वरकौतुकालोकनाकुलं मुहुर्म्मुहुः कृतमुखोन्नमनप्रयत्नं सखीजनं हृदयञ्च निर्भर्त्सयन्तीं वधूमपश्यत्।

प्रविशन्तमेव तं हृदयचौरं बध्वा समर्पितं जग्राह कन्दर्पः। परिहासस्मेरमुखीभिश्च नारीभिः कौतुकगृहे यद् यत् कार्य्यते जामाता तत्तत्सर्व्वमतिपेशलं चकार। कृतपरिणयानुरूपवेशपरिग्रहां गृहीत्वा करे वधूं निर्जगाम। जगाम च नवसुधाधवलानिमन्त्रितागतैस्तुषारशैलोपत्यकामिव त्र्यम्बकाम्बिकाविवाहाहूतैः

(२६) उपगूढाम्। १।

मुखैरुद्भिः परिवृतां सेकसुकुमारयवाङ्कुरदन्तुरैः पञ्चास्यैः कलशैः कोमलवर्णिकाविचित्रैरमत्रमुखैश्च मङ्गल्यफलहस्ताभिरञ्जलिकारिकाभिरुद्भासितपर्यन्ताम् उपाध्यायोपधीयमानेन्धनधूमायमानाग्निसन्धुक्षणाक्षीणकोपकृष्टबर्हिषाम् उपकल्पितागुर्मितामुपहतहरितकुशां सन्निहितदृषदजिनाज्यस्रुक्स्रुवसमित्पूलीनिवहां नूतनशूर्पार्पितश्यामलशमीपलाशमिश्रलाजहासिनीं वेदीम्। आरुरोह च तां दिवमिव सज्योत्स्नः शशी। समुत्ससर्प च वेल्लितारुणशिखापल्लवस्य शिखिनः कुसुमायुध इव रतिद्वितीयो रक्ताशोकस्य समीपम्। हुते च हुतभुजि दक्षिणावर्तप्रवृत्ताभिः वधूदर्शनविलोकनकुतूहलिनीभिरिव ज्वालाभिरिव सह प्रदक्षिणं बभ्राम। पात्यमाने च लाजाञ्जलौ नखमयूखधवलिततनुः अदृष्टपूर्ववधूवररूपविस्मयस्मेर इवाहसत विभावसुः।

अत्रान्तरे स्वच्छकपोलोदरसंक्रान्तममलप्रतिबिम्बमिव निर्वापयन्ती स्थूलमुक्ताफलविमलबाष्पबिन्दुसन्दोहदर्शितदुर्दिना निर्वेदनविकारं चकार वधूः। उदश्रुविलोचनानाञ्च बान्धवबधूनाम् उदपादि महानाक्रन्दः। परिसमापितवैवाहिकक्रियाकलापस्तु जामाता वध्वा समं प्रणनाम श्वशुरौ। प्रविवेश च द्वारपक्षलिखितरतिप्रीतिदैवतं प्रणयिभिरिव प्रथमप्रविष्टैरलिकुलैः कृतकोलाहलम् अलिकुलपक्षपवनप्रक्षोलितैः कर्णोत्पलप्रहारभयप्रकम्पितैरिव मङ्गलप्रदीपैः प्रकाशितम् एकदेशलिखितस्तवकितरक्ताशोकतरुतलभाजा अधिज्यचापेन तिर्यक्कूणितनेत्रत्रिभागेण शरमृजूकुर्वता कामदेवेनाधिष्ठितम् एकपार्श्वन्यस्तेन काञ्चनाचामकेन इतरपार्श्ववर्तिन्या च दान्तशफरकधारिण्या कनककुम्भिकया माघाम्बुधेरिव उद्दण्डपुण्डरीकदलया सनाथेन सोपधानेन स्वास्तीर्णेन शयनेन

शोभमानं शयनशिरोभागस्थितेन च कृतकुमुदशोभेन कुसुमायुध साहायकायागतेन शशिनेव निद्राकलशेन राजतेन विराजमा वासगृहम्।

तत्र च क्रीताया नववधूकायाः पराङ्मुखप्रसुप्ताया मणिभित्ति दर्पणेषु मुखप्रतिबिम्बानि प्रथमालापाकर्णनकौतुकागतगृहदेवता ननानीव मणिगवाक्षकेषु वीक्षमाणः क्षणदां निन्ये। स्थित्वा च श्वशुरकुले शीलेनाहृतमिव श्वश्रूहृदये वर्षन् अभिनवाभिनवोप चारैरपुनरुक्तानि आनन्दमयानि दश दिनानि स्थित्वा दत्त्वा राज दौवारिकमिव राजकुले रणरणकं यौतुकनिवेदितानीव शम्बलानि आदाय हृदयानि सर्व्वलोकस्य कथं कथमपि विसर्जितो नृपेण बध्वा सह स्वदेशमगमदिति।

इति श्रीवाणभट्टकृते हर्षचरिते चतुर्थ उच्छ्वासः।

पञ्चम उच्छ्वासः।

नियतिर्विधाय पुंसां प्रथमं सुखमुपरि दारुणं दुःखम्।
कृत्वालोकं तरसा तडिदिव वज्रं निपातयति॥
पातयति महापुरुषान् सममेव बहुलमादरेणैव।
परिवर्तमान एकः कालः शैलानिवानन्तः॥

अथ कदाचित् राजा राज्यवर्द्धनं कवचहरमाहूय हूणान् हन्तुं हरिणानिव हरिर्हरिणाङ्किशोरम् अपरिमितबलानुयातं चिरन्तनैरमात्यैरनुरक्तैश्च महासामन्तैः कृत्वा साभिसारम् उत्तरापथं प्राहिणोत्।

प्रयान्तञ्च तं देवो हर्षः कतिचित्प्रयाणकानि तुरङ्गैरनुवव्राज। प्रविष्टे च कैलासप्रभाभासिनीं ककुभं भ्रातरि वर्त्तमाने नवे वयसि विक्रमरसानुरोधिनि केसरिशरभशार्दूलवराहबहुलेषु तुषारशैलोपकण्ठेषु उत्कण्ठमानवनदेवताकटाक्षधवलितशरीरकान्तिः क्रीडन् मृगया मृगलाञ्छन कतिपयान्यहानि पथिष्वेव व्यलम्बत। चकार च आकर्णान्ताकृष्टकार्मुकनिर्गतभासुरभल्लवर्षी स्वल्पीयोभिरेव दिवसैर्निःश्वापदान्यरण्यानि।

एकदा तु वासतेय्यास्तुरीये यामे प्रत्युषस्येव स्वप्ने चटुलज्वाला-पुञ्जपिञ्जरीकृतसकलककुभा दुर्निवारेण दवहुतभुजा दह्यमानं केसरिणमद्राक्षीत्। तस्मिन्नेव च दावदहने समुत्सृज्य शावकान् उत्पत्य आत्मानं पातयन्तीं सिंहीमपश्यत्। आसीच्चास्य चेतसि लोके हि लोहेभ्यः कठिनतराः खलु स्नेहमया बन्धनपाशाः यदाकृष्टास्तिर्यञ्चोऽपि एवमाचरन्तीति। प्रबुद्धस्य चास्य मुहुर्मुहुः

दक्षिणेतरमक्षि पस्पन्दे गात्रेषु चाकस्मादेव वेपथुर्विससर्पे नि निमित्तम् एवान्तर्बन्धनस्थानाच्चचालेव हृदयम् अकारणादेव च अजायंत (१) गरीयसी दुःखासिका। किमिदमिति च समुत्पन्न-विविधविकल्पविमथितमतिरपगतधृतिश्चिन्तावनमितवदनः स्तिमित तारकेण चक्षुषा समुद्दिश्यमानस्थलकमलिनीवनामिव चकार चकोरेक्षणः क्षणं क्षौणीम्। अह्नि च तस्मिन् शून्येनैव च चेतसा चिक्रीड(२)मृगयाम्। आरोहति च हरितहये मध्यमह्नो भवनम् आगत्य उभयतो मन्दमन्दं संवाह्यमानतनुतालवृन्तः क्षितितल-विततास् अतिशिशिरमलयजरसलवलुलितवपुषम् इन्दुधवलोप-धानधारिणीं वेत्रपट्टिकाम् (३) अधिशयानः साशङ्क एव तस्थौ।

अथ दूरादेव लेखगर्भया नीलीरागमेचकरुचा चीर-(४) चीरिकया रचितमुण्डमालकं श्रमातपाभ्यामारोप्यमाणकाय-कालिमानम् अन्तर्गतेन शोकशिखिना अङ्गारतामिव नीयमानम् अतित्वरागमनद्रुततरपदोद्धूयमानधूलिराजिव्याजेन राजवार्त्ता-श्रवणकुतूहलिन्या मेदिन्येवानुगम्यमानम् अभिमुखपवनप्रेङ्खत्प्रवि-ततोत्तरीयपटप्रान्तवीज्यमानोभयपार्श्वम् अतित्वरया कृतपक्षम् इवाशु परापतन्तं प्रेर्यमाणमिव पृष्ठतः स्वाम्यादेशेन कृष्यमाणम् इव पुरस्तादायतैः श्रमश्वासमोक्षैः स्विद्यल्ललाटतटघटमानप्रति-बिम्बकेन कार्य्यकौतुकादपक्रियमाणलेखमिव भास्वता, सम्भ्रम-भ्रष्टैरिवेन्द्रियैः शून्यीकृत(५)शरीरं लेखार्पितप्रयोजनगौरवादिव समेऽपि वर्त्मनि शून्यहृदयतया स्खलन्तं कालमेघशकलमिव पति-ष्यतो दुर्व्वार्त्तावज्रस्य धूमपल्लवमिव ज्वलिष्यतः शोकज्वलनस्य बीजम्

(१) अजायत च। २। (२) व्यक्रीडत्। २।
(३) वेत्रपेटिकाम्। १। (४) चैल। १। (५) तुच्छीकृत। १।

इव फलिष्यतो दुष्कृतशाखेः अनिमित्तभूतदीर्घाध्वगं कुरङ्गक-नामानमायान्तमद्राक्षीत् ।

दृष्ट्वा च पूर्वनिमित्तपरम्पराविर्भावित(१)भीतिरभिद्यत हृदयेन । कुरङ्गकस्तु कृतप्रणामः समुपसृत्य प्रथममाननलग्नं विषादम् उपनिन्ये पश्चाल्लेखम् । तं च देवो हर्षः स्वयमेवादायावाचयत् । लेखार्थेनैव च समं गृहीत्वा हृदयेन सन्तापम् अपगतकम्पोऽपृच्छत् कुरङ्गक किं मान्द्यं तातस्येति । स चक्षुषा बाष्पजलबिन्दुभिः मुखेन चान्धकारैः अक्षरैर्युगपदाचचक्षे देव दाहज्वरो महान् इति । तच्चाकर्ण्य सहसा सहस्रधेवास्य हृदयं पफाल । कृता-चमनश्च जनयितुरायुष्कामोऽपरिमितमणिकनकरजतजातमात्म-परिवर्हम् अशेषं ब्राह्मणसादकरोत् अभुक्त एवोच्चचाल दापय वाजिनः पर्याणम् इति च पुरःस्थितं शिरःकृपाणं बिभ्राणं बभाषे युवानम् । वेपमानहृदयश्च ससम्भ्रमप्रधावितपरिवर्हकोपनीतम् आरुह्य तुरङ्गमम् एकाक्येव प्रावर्त्तत ।

अकाण्डप्रयाणसंज्ञाशङ्काक्षुभितं तु ससम्भ्रमात् सज्जीभूतमुद्धत-मुखरखुररवभरितसकलभुवनविवरमागत्यागत्य सर्वाभ्यो दिग्भ्यो धावमानमश्वीयमढौकत । प्रस्थितस्य चास्य प्रदक्षिणेतरं प्रयान्तो विनाशमुपस्थितं राजसिंहस्य हरिणाः प्रकटयाम्बभूवुः । खरतर-रश्मिमण्डलाभिमुखश्च हृदयमवदारयन्निव दारुणं दारुणि दारुणं ररास वायसः । कज्जलमय इव बहुदिवसमुपचितवहल-मलपटलमलिनिततनुरभिमुखमाजगाम शिखिपिच्छलाञ्छनो नग्नाटकः । दुर्निमित्तैरनभिनन्द्यमानगमनश्च नितरामशङ्कत ।

(१) शिमारिवम् । २ । २ ।

हृदयेन पितृस्नेहाहितमहिम्ना च तत्तदुपेक्षमाणः तुरङ्गमस्कन्ध-बद्धलक्ष्यं चक्षुरविचलं दधानः समवसितहसितसङ्कथस्तूष्णीम्भूतेन भूपाललोकेनानुगम्यमानो बहुयोजनसम्मितमध्वानम् एकेन एवाह्ना समलङ्घयत् ।

उपलब्धनरेन्द्रमान्द्यवार्त्ताविषण्ण इव नष्टतेजस्यधोमुखीभवति भगवति भानुमति भण्डिप्रमुखेन प्रणयिना राजपुत्रलोकेन बहुशो विज्ञाप्यमानोऽपि नाहारमकरोत् । पुरःप्रवृत्तप्रतीहारगृह्यमाण-ग्रामीणपरम्पराप्रकटितप्रगुणवर्त्मा च वहन्नेव निन्ये निशाम् ।

अन्यस्मिन्नहनि मध्यन्दिने विगतजयशब्दमस्तमिततूर्य्यनादमुप-संहृतगीतमुत्सारितोत्सवमप्रगीतचारणमप्रसारितापणपण्यं स्थान-स्थानेषु पवनवलकुटिलाभिः कोटिहोमधूमलेखाभिरुल्लसन्तीभिः यममहिषविषाणकोटिभिरिवोल्लिख्यमानं कृतान्तपाशवागुराभिः इव वेष्टमानम् उपरि कालमहिषालङ्कारकालायसकिङ्किणीभिः इव कटु क्वणन्तीभिर्दिवसं वायसमण्डलीभिर्भ्रमन्तीभिरावेद्य-मानप्रत्यासन्नाशुभं क्वचित्प्रतिशायितस्निग्धबान्धवाराध्यमानाहि-ब्रध्नं क्वचित् दीपिकादह्यमानकुलपुत्रकप्रसाद्यमानमातृमण्डलं क्वचिन्मुण्डोपहाराहरणोद्यतद्रविड़प्रार्थ्यमानामर्द्दकं क्वचिदन्ध्रो-द्भ्रियमाणबाहुवप्रोपयाच्यमानचण्डिकम् अन्यत्र शिरोविधृतवि-लीयमानगुग्गुलुभिकलनवसेवकानुनीयमानमहाकालम् अपरत्र निशितशस्त्रीनिकृत्तात्ममांसहोमप्रसक्ताप्तवर्गम् अपरत्र प्रकाशनर-पतिकुमारकक्रियमाणमहामांसविक्रयप्रक्रमम् उपहतमिव श्मशान-पांशुभिः अमङ्गलैरिव परिगृहीतं यातुधानैरिव विध्वस्तं कलि-कालेनेव कवलितं पापपटलैरिव संछादितम् अधर्म्मविक्षेपैरिव लुण्ठितम् अनित्यताधिकारैरिवाक्रान्तं नियतिविलासैरिवाक्री-

हृतं शून्यमिव सुप्तमिव मुषितमिव विलक्षितमिव छलितमिव मूर्च्छितमिव स्कन्धावारमाससाद।

प्रविशन्नेव च विपणिवर्त्मनि कुतूहलाकुलबहलबालकपरिवृतम् ऊर्ध्वयष्टिविष्कम्भवितते वामहस्तवर्तिनि भीषणमहिषाधिरूढ-प्रेतनाथसनाथे चित्रवति पटे परलोकव्यतिकरम् इतरकरकलितेन शरकाण्डेन कथयन्तं यमपट्टिकं ददर्श तेनैव च गीयमानं श्लोक-मशृणोत्

मातापितृसहस्राणि पुत्रदारशतानि च।

युगे युगे व्यतीतानि कस्य ते कस्य वा भवान्॥ इति।

तेन चाधिकतरमवदीर्यमाणहृदयः क्रमेण राजद्वारं प्रतिविद्ध सकललोकप्रवेशं ययौ। तुरगादवतीर्णश्च अभ्यन्तरान्निष्क्रामन्तम् अप्रसन्नमुखरागं सूक्ष्ममिवेन्द्रियैः सुषेणनामानं वैद्यकुमारम् अद्राक्षीत्। कृतनमस्कारश्चाप्राक्षीत् सुषेण अस्ति तातस्य विशेषो न वेति। सोऽब्रवीत् नाद्यापि यदि भवेत् कुमारं दृष्ट्वेति। मन्दमन्दं द्वारपालैः प्रणम्यमानश्च दीयमानसर्वस्वं पूज्यमानकुल देवतं प्रारब्धामृतचरुपचनक्रियं क्रियमाणषडाहुतिहोमं हूयमान दपदाज्यलवलिप्रचलद्दूर्वापल्लवम् पठ्यमानमहामायूरि प्रवर्त्य मानगृहशान्ति निवर्त्यमानभूतरक्षाबलिविधानं प्रयतविप्रप्रस्तुत-संहिताजपं जप्यमानरुद्रैकादशीशब्दायमानशिवगृहम् अतिशुचि-शैवसम्पाद्यमानविरूपाक्षक्षीरस्नपनम् अभिरोपविष्टैश्च अनासादितस्वामिदर्शनदूयमानमानसैः अभ्यन्तरनिर्गतनिकट-वर्तिपरिजननिवेद्यमानवार्त्ताभिरनुस्नानभोजनशयनैर्वर्जिताङ्ग-संस्कारमलिनवेशैर्लिखितैरिव निश्चलैर्नरपतिभिर्नीयमानन-न्दिवं दुःखदीनवदनेन च प्रणयिषु बहुमन्यतेनोपांशुव्याहृते.

केनचिच्चिकित्सकदोषानुद्भावयता केनचिदसाध्यव्याधिलक्षणपदानि पठता केनचिद्दुःस्वप्नानावेदयता केनचित् पिशाचवार्त्तां विदूष्यता केनचित् कार्त्तान्तिकादेशान् प्रकाशयता केनचिदुपलिङ्गानि गायता अन्येनानित्यतां भावयता संसारस्यापवदता कलिकालविलसितानि च निन्दता दैवस्योपालभमानेन अपरेण धर्म्माय कुप्यता राजकुलदेवतास्याधिक्षिपता अपरेण क्लिष्टकुलपुत्त्रकभाग्यानि गर्हयता बाह्यपरिजनेन कथ्यमानकष्टपार्थिवावस्थं राजकुलं विवेश।

अविरलवाष्पपयःपरिप्लुतलोचनेन पितृपरिजनेन वीक्ष्यमाणो विविधौषधिद्रव्यद्रवगन्धगर्भमुत्क्वथतां क्वाथानां सर्पिषां तैलानाञ्च पच्यमानानां गन्धमाजिघ्रन्नवाप तृतीयं कक्ष्यान्तरम्।

तत्र चातिनिःशब्दे गृहावग्रहणीग्राहिवक्त्रवेत्रिणि त्रिगुणतिरस्करणीतिरोहितसुवीथीपथे पिहितपक्षद्वारके परिहृतकवाटरटिते घटितगवाक्षरक्षितमरुति दूयमानपरिचारके चरणताडनस्वनत्सोपानप्रकुपितप्रतीहारे निभृतसंज्ञानिर्दिश्यमानसकलकर्म्मणि नातिनिकटोपविष्टकञ्चुकिनि कोणस्थितात्तानचकिताचमनकवाहिनि चन्द्रशालिकालीनमूकमौललोके महाधिविधुरबान्धवाङ्गनावर्गगृहीतप्रच्छन्नप्रग्रीवके सञ्जवनपुञ्जितोद्विग्नपरिजने प्रविष्टकतिपयप्रणयिनि गम्भीरज्वरारम्भभीतभिषजि दुर्म्मनायमानमन्त्रिणि मन्दायमानपुरोधसि सीदत्सुहृदि निद्राणविपश्चिति सन्तप्तासप्तसामन्ते त्रिचित्तचामरग्राहिणि दुःखक्षामशिरोरक्षिणि क्षीयमाणप्रसादवित्तमनोरथसम्पदि स्वामिभक्तिपरित्यक्ताहारक्षीयमानबलविकलवल्लभभूभृति क्षितितलपतितसकलरजनीजागरूकराजपुत्त्रकुमारके कुलक्रमागतकुलपुत्त्रनिवहोह्यमानशुचिशोकसङ्कुचितकञ्चुकिनि निरानन्दवन्दिनि निश्वसन्निराशाससेवके निःस्वन-

ताम्बूलधूसराधरवारयोषिति विलक्षवैद्योपदिश्यमानपथ्याचरणाव-
क्षितपौरोगवे अनुजीविपीयमानोष्णचषकधारावारिविनोद्यमानास्य-
शोषवृत्ति राजाभिलाषभोज्यमानबहुभुजि भेषजसामग्रीसम्पादन-
व्यग्रसमग्रव्यवहारिणि मुहुर्मुहुराहूयमानतोयकर्मान्तिकानुमित-
घोरातुरतृषि तुषारपरिकरितकरकशिशिरीक्रियमाणोदश्विति
श्वेतार्द्रकर्पटार्पितकर्पूरपरागशीतलीकृतशलाके नाम्नामपङ्क्तिपच्य-
मानमनवभाण्डगतगण्डूषग्रहणमस्तुनि तिम्यत्कोमलकमलिनीपलाश-
प्रावृतवटुमृणालके सनालनीलोत्पलपूलीसनाथसलिलपानभाजन-
भुवि धारानिपातनिर्वाप्यमाणक्वथिताम्भसि पट्पाटलशर्करामोद
मुचि मस्तकाश्रितसिकतिलककरीविश्रान्तान्तरचक्षुषि सरलशैवल-
वलयितगलन्नालयन्त्रके गल्वर्कशालाजिरोन्मार्जितलाजसक्तुनिपीत-
मसारपारीपरिष्टष्टीतकर्कशर्करे शिशिरीपयःसवर्णावकीर्ण
स्फटिकशुक्तिशङ्खसञ्चये सञ्चितप्रचुरप्राचीनामलकमातुलुङ्गद्राक्षा-
दाडिमादिफले प्रतिशाखितविप्रविप्रकीर्यमाणशान्त्युदकविप्रुषि
प्रेक्षापेक्ष्यमाणललाटलेपोपदिग्धहृत्पदि धवलगृहे स्थितं परलोक-
विजयाय नीराज्यमानमिव ज्वरज्वलनेन अनवरतपरिवर्तनैश्चार-
क्लिश्यति शयनीये शेषमिव विषोष्मणा क्षीरोदन्वति विचेष्टमानं मुक्ता-
फलवालुकाधूलिधवलितं जलधिमिव क्षयकाले शुष्यन्तं कालेन
कैलासमिव दशाननेनोद्ध्रियमाणम् अविरतचन्दनचर्चोपरागा
परिचारकाणामत्युष्णावयवस्पर्शभस्मीभूतोदरैरिव धवलैः करैः
स्पृश्यमानं लोकान्तरप्रस्थितं स्वात्मना स्वयशसेव चन्दनानुलेपन-
च्छलेनाच्छाद्यमानम् अविच्छिन्नदीयमानकमलकुमुदेन्दीवरदलं
कालकूटानलपतनशबलमिव शरीरमुद्वहन्तं निबिडदुकूलपट्टनिपी-
डितकेशान्तकथ्यमानकष्टवेदनानुबन्धं मूर्धानं धारयन्तं दुर्धरवेदनो

न्नमन्नीलशिराजालककरालेन च कालाङ्गुलिलिख्यमानलेखा-ख्यातमरणावधिदिवससंख्यानेनेव ललाटफलकेन भयमुपजनयन्तम् आसन्नयमदर्शनोद्वेगादिव च किञ्चिदन्तःप्रविष्टतारकं शुष्यद्दशन-पङ्क्तिप्रसृतधूसरदीधितितरङ्गिणीं मृगतृष्णिकामिवोष्णां निश्वास-परम्परामुद्वहन्तम् अत्युष्णनिश्वासदग्धयेव श्यामायमानया रस-नया निवेद्यमानदारुणसन्निपातारम्भम् उरःस्थलस्थापितमणि-मौक्तिकहारचन्दनचन्द्रकान्तं कृतान्तदूतदर्शनयोग्यमिवात्मानं कुर्व्वाणम् अङ्गभङ्गवलनोत्क्षिप्तभुजयुगलम् पर्य्यस्तहस्तनखमयूखैः धारागृहमिव तापशान्तये रचयन्तं नेदिष्ठसलिलमणिकुट्टिमा-दर्शोदरेषु निपतद्भिः प्रतिबिम्बैरपि सन्तापातिशयमिव कथयन्तं स्पृशन्तीं प्रणयिनीमिव विश्वासभूमिं मूर्च्छां बहु मन्यमानम् अन्तकाह्वानाक्षरैरिव सभयभिषग्दृष्टैररिष्टैराविष्टम् महाप्रस्थान-काले स्वसन्तापसन्तानमाप्तहृदयेषु सञ्चारयन्तम् अरतिपरिगृही-तम् ईर्ष्ययेव छायया मुच्यमानम् उद्योगमिवोपद्रवाणां सर्व्वास्र-मोक्षमिव क्षामतायाः हस्तीकृतं विह्वलतया विषयीकृतं वैवश्येन चेलीकृतं क्षयेण गोचरीकृतं ग्लान्या दृष्टं दुःखासिकया आत्मीकृतम् अस्वास्थ्येन विधेयीकृतं व्याधिना क्रोडीकृतं कालेन लक्ष्यीकृतं दक्षिणाशया पीतमिव पीडाभिः जग्धमिव जागरेण निगीर्णमिव वैवर्ण्येन ग्रासीकृतं गात्रभङ्गेन क्रियमाणमिव विपद्भिः वण्ट्यमानम् इव वेदनाभिः लुण्ठ्यमानमिव दुःखैः आदिष्टितं दैवेन निरूपितं नियत्या घ्रातमनित्यत्वेन अभिभूयमानमभावेन परिकलितं परासु-तया हस्तावकाशं क्लेशस्य निवासं वैमनस्यस्य समीपे कालस्य अन्तिकेऽन्त्योच्छ्वासस्य मुखे महाप्रयासस्य द्वारि दीर्घनिद्राया जिह्वाग्रे जीवितेशस्य वर्त्तमानम् विरलं वाचि चलितं चेतसि

विरलं वपुषि क्षीणमायुषि प्रचुरं प्रलापे सन्ततं श्वसिते जितं जृम्भिकाभिः पराधीनमाधिभिः अनुबद्धमनुबन्धिकाभिः पार्श्वोपविष्टया अनवरतरोदनोच्छूननयनया म्लानधात्रिकयापि निःश्वसितैरेव (७) वीजयन्त्या विविधौषधिधूलिधूसरितशरीरया मुहुर्मुहुः आर्यपुत्र स्वपिषि इति व्याहरन्त्या देव्या यशोवत्या शिरसि वक्षसि च स्पृश्यमानं पितरमद्राक्षीत्।

दृष्ट्वा च प्रथमदुःखसम्पातमूर्च्छामानमतिराशङ्कित इव भागधेयेभ्यः समभवत्। अन्तकपुरवर्तिनमेव च पितरममन्यत। निराकृत इव चान्तःकरणेन शून्यमासीत्। अपधृतश्च धैर्येण स्वीकृतः क्षोभेण विक्रीकृतो रत्या विपर्यीकृतो विषादेन पावकमयमिव हृदयमुद्वहन् विषमविषदूषितानीव मुह्यन्तीन्द्रियाणि बिभ्राणः तमसा रसातलमपि विशयन् शून्यत्वेनाकाशमप्यतिशयानो नाविन्दत कर्तव्यम्। पस्पर्श च हृदयेन भियम् उत्तमाङ्गेन च गाम्।

अवनिपतिस्तु दूरादेव दृष्टातिवल्लभं तनयं तदवस्थोऽपि निर्भरस्नेहावर्जितः प्रधावमानो मनसा प्रसार्य भुजौ एह्येहि इत्याह्वयन् शरीरार्धेन शयनादुदगात्। ससम्भ्रममुपसृतं चैनं विनयावनम्रमुत्तमाङ्गं बलादुरसि निवेश्य विशन्निव प्रेम्णा निशाकरमण्डलमध्यं मज्जन्निवामृतमये महासरसि स्नान्निव महति हरिचन्दनरसप्रस्रवणे अभिषिच्यमान इव तुषाराद्रिद्रवेण पीडयन्नङ्गैरङ्गानि कपोलेन कपोलमवघट्टयन् निमीलयन् पक्ष्माग्रग्रथिताश्रुधाराविसर्पिणी विलोचने विस्मृतज्वरसंज्वरः सुचिरम् आलिङ्ग्य कथं कथमपि चिराद्विमुक्तमुपसृत्य कृतनमस्कारं प्रयत-

(७) निःश्वसितैः। २।१।

जननीकमुपागतमासीनञ्च शयनान्तिके पिबन्निव विगतनिमेष-निश्चलेन चक्षुषा व्यलोकयत्। पस्पर्श च पुनःपुनर्व्वेपथुमता पाणितलेन शयनामकण्ठञ्च लज्जादिवाबाहीत् वत्स क्षमोऽसीति। भण्डिस्त्वकथयत् देव तृतीयमहः कृताहारस्यास्येति।

तत् श्रुत्वा वाष्पवेगगद्गदमाणाक्षरं कथं कथमप्यायतं निश्वस्य उवाच वत्स जानामि त्वां पितृप्रियमतिमृदुहृदयम्। ईदृशेषु विधुरयति धीमतोऽपि धियम्। अतिदुर्धरो बान्धवस्नेहः सर्व्व-प्रमाथी। अतो नार्हस्यात्मानं शुचे दातुम्। उद्दामदाहज्वर-दग्धोऽपि दह्ये त्वल्लहमधिकतरमनेनायुष्मदाधिना। निम्नितमिव शल्यं तच्छोति मां त्वदीयतनिमा। सुखञ्च राज्यञ्च वंशश्च प्राणाश्च त्वयि मे स्थिताः। यथा मम तथा सर्व्वासां प्रजानाम्। त्वद्विधानां पीड़ाः पीड़यन्ति सकलमेव भुवनतलम्। नस्वल्प-पुण्यभाजां वंशमलङ्कुर्व्वन्ति भवादृशाः। फलमस्यनेकजन्मान्तरो-पार्जितस्याकलुषस्य कर्म्मणः। करतलगतमिव कथयन्ति चतुर्णाम् अर्णवानामाधिपत्यं ते लक्षणानि। त्वज्जन्मनैव कृतार्थोऽस्मि निरभिलाषोऽस्मि जीविते। भिषगनुरोधः पाययति माम् औषधम्। अपिच सर्व्वप्रजापुण्यैः सकलभुवनतलपरित्राणार्थम् उत्पद्यमानाना भवादृशां जन्मग्रहणोपायः पितरौ। प्रजाभिस्तु बन्धुमन्तो राजानः न ज्ञातिभिः। तदुत्तिष्ठ कुरु पुनरेव सर्व्वाः क्रियाः। कृताहारे च त्वयि अहमपि स्वयमुपयोक्ष्ये पथ्यम्।

इत्येवमभिहितस्य चास्य धर्व्यन्निव हृदयमतितरां शोकानलः सन्दधुक्षे। क्षणमात्रञ्च स्थित्वा पित्रा पुनराहारार्थमादिश्यमानो धवलगृहादवततार चकार च चेतसि अकाण्डे खलयं समुपस्थितो महाप्रलयो व्यभ्र इव वज्रपातः। सामान्योऽपि तावत् शोकः

सोच्छ्वासं मरणम् अनुपदिष्टौषधो महाव्याधिः अभस्मीकरणोऽग्नि-प्रवेशः अनुपरतस्यैव नरकवासः निर्ज्योतिरन्धकारवर्षम् अयस्की-करणं मकचदारणम् अव्रणो वज्रसूचीपातः किमुत विशेषाचितः किमत्र करवाणीति ।

राजपुरुषेणाधिष्ठितश्च गत्वा स्वधाम धूममयानिव हताश्रु-पातान् अग्निमयानिव अभितप्तहृदयदाहान् विषमयानिव दत्त-मूर्च्छावेगान् महापातकमयानिव उत्पादितघृणान् क्षारमयानिव आनीतवेदनान् कतिचित् कवलानगृह्णात् । आचम्य च आमर-णाच्छिष्यमादिदेश विज्ञायागच्छ कथमास्ते तात इति । गत्वा च प्रतिनिवृत्तेन च देव तथैवेति विज्ञापितस्तेन अगृहीतताम्बूल एव उद्भ्रान्तता मनसा अखिलाभिलाषिणि सवितरि सर्व्वाङ्गाद्ययोपचारे वैद्यान् किमस्मिन्नेवंविधे विधेयमधुनेति विषण्णहृदयः पप्रच्छ । ते तु अभ्यापवन् देव धैर्य्यमवलम्बस्व कतिपयैरेव वासरैः पुनः स्वां प्रकृतिमापन्नं स्वस्थं द्रक्ष्यसि पितरमिति ।

तेषां तु भिषजां मध्ये पौनर्वसवो युवा अष्टादशवर्षदेशीयः तस्मिन्नेव राजकुले कुलक्रमागतो गतः पारमष्टाङ्गस्यायुर्वेदस्य भूभुजा सुतनिर्विशेषं लालितः प्रकृत्यैवातिपटीयस्या प्रज्ञया यथावस्थितज्ञाता व्याधिस्वरूपाणां रसायनो नाम वैद्यकुमारकः साश्रुरधोमुखोऽभूत् । दृष्टश्च राजसूनुना सखे रसायन कथय तथ्यं वस्तुस्थितिमिव पश्यसीति । सोऽब्रवीत् देव श्वः प्रभाते यथावस्थितमावेदयिताऽस्मीति ।

अत्रैव चान्तरे भवनकमलिनीपालः कोकमाक्रन्दन्तम् अपर-वक्त्रेणापठत् (८)

(८) पद्यपटल् । १ । २ ।

विहग कुरु दृढं मनः स्वयं त्यज शुचमाशु विवेकवर्त्मनि।
सह कमलसरोजिनीश्रिया अयति सुमेरुशिरो विरोचनः॥

तच्चाकर्ण्य वाङ्निमित्तज्ञः पितरि सुतरां जीविताशां शिथिलीचकार। गतेषु च भिषक्षु क्षतधृतिः क्षपामुखे क्षितिपालसमीपम् एव पुनरारुरोह। तत्र च दाहो महान् आहर हारान् हरिणि मणिदर्पणान् मे देहि देहि वैदेहि हिमलवैर्लिम्प ललाटं लीलावति घनसारक्षोदधूलीर्निधेहि धवलाक्षि निक्षिप चक्षुषि चन्द्रकान्तं कान्तिमति कपोले कलय कुवलयं कलावति चन्दनचर्चां रचय चारुमते पाटय पटमावृतं पाटलिके मन्दय(९) दाहम् दृन्दुमत्यरविन्दैः जनय जलार्द्रया मुदं मदिरावति समुपनय मृणालानि मालति तरलय तालवृन्तमावन्तिके स्नानं धावमानं बधान बन्धुमति कन्धरां धारय धारणिके उरसि सशीकरं करं कुरु कुरङ्गवति संवाहय बाहू बलाहिके पीडय पादौ पद्मावति गृहाण गाढमङ्गमनङ्गसेने का वेला विलासवति नैति निद्रा कथाः कथय कुमुद्वति इत्येवंप्रायान् पितुरालापान् अनवरतम् आकर्णयन्(१०) दूयमानहृदयो दुःखदीर्घां जाग्रदेव निशामनैषीत्।

उषसि चावतीर्य राजद्वारदेशोपसर्पिणा परिवर्धकेनोपस्थापितेऽपि तुरङ्गे चरणाभ्यामेवाजगाम स्वमन्दिरम्। तत्र च त्वरमाणो भ्रातुरागमनार्थमुपर्युपरि क्षिप्रपातिनो दीर्घाध्वगान् प्रजविनश्चोष्ट्रपालान् प्राहिणोत्। प्रक्षालितवदनश्च परिजनोपनीतमपि प्रतिकर्म नाग्रहीत्। अग्रतः स्थितानां राजपुत्रयूनां विमनसां रसायनो रसायन इति जल्पितमव्यक्तमश्रौषीत्। पर्यपृच्छच्च तान् भद्राः किं रसायन इति। दृष्टाश्च ते सर्वे समम्

(९) मर्द्दय। १। २। (१०) आकलयन्। २। २।

एव दृष्टौ बभूवुः। भूयोभूयश्चानुबध्यमाना दुःखेन कथंकथमपि आचचक्षिरे देव पावकं प्रविष्ट इति। तच्च श्रुत्वा स्फुट इवाग्निस्तापेन सद्यो विवर्णतामगात्। उत्पाद्यमानमिव च न शशाक शोकान्धं धारयितुं हृदयम्। आशीश्चास्य चेतसि कामं स्थैर्यं न भवति ननु श्रावयत्यप्रियं वचनमरतिकरमितर इवाभिजातो जनः। तत्र च यथानेनानुष्ठितम् उज्ज्वलीकृतमधिकतरं ज्वलनप्रवेशेन कल्याण-प्रकृति कार्तस्वरमिव कौलपुत्त्रमस्येति। पुनश्चाचिन्तयत् समुचितम् एवाथवा प्रेम्णस्येदम्। किमस्य तातो न तातः किं वाम्बा न जननी वयं न भ्रातरः। अन्यस्मिन्नपि तावत् स्वामिनि दुर्लभो भवन्ति भवन्त्यसवो म्रियमाणा कीर्तिहेतवो लोके किमुतास्तमयेऽनुजीविना निर्व्याजवात्सल्येऽनन्यप्रसादे सुगृहीतनाम्नि ताते। सम्प्रति साम्प्र-तम् आचरितमनेनात्मानं दहता। किं वास्य आकल्पमवस्थितस्य श्रेयसो यशोमयस्य दह्यते। पतितः स केवलं दहने दग्धास्तु वयम्। धन्यः खल्वसावग्रणीः पुण्यभाजाम्। अपुण्यभाक् त्विदमेव राजकुलं कुलपुत्त्रेण यस्मादृशा वियुक्तम्। अपि च ममापि कः खल्वेतेषां प्राणानां कार्यातिभारः स्वयंग्रहो वा का वा स्पृहणता येन नाद्यापि निष्ठुराः प्राणाः प्रतिष्ठन्ते। को वान्तरायो हृदयस्य येन सहस्रधा न दलतीति। दुःखार्तश्च न जगाम राजसद्म। समुत्ससर्ज च सर्वकार्याणि। शयनीये निपत्य उत्तरीयवाससा सोत्तमाङ्गमात्मानमवगुण्ठ्यातिष्ठत्।

इत्थम्भूते च देवे हर्षे राजनि च तदवस्थे सर्वस्य लोकस्य कपोलेषु कीलिता इव कराः लोचनेषु लेप्यमय्य इवाश्रुस्रुतयः नासाग्रेषु ग्रथिता इव दृष्टयः कर्णेषूत्कीर्णा इव रुदितध्वनयः जिह्वासु सञ्जातानीव हाहाकाराणि वदनेषु पल्लवितानीव श्वसितानि

अधरेषु लिखितानीव परिदेवितपदानि हृदयेषु निखातीकृतानीव दुःखान्यभवन्। उष्णाश्रुदाहभीतेव नाभजत नेत्रोदराणि निद्रा। निश्वासवातविधुता इव व्यलीयन्त हासाः। निरवशेषदग्धेव च सन्तापेन न प्रावर्त्तत वाणी। कथास्वपि नाश्रूयन्त परिहासाः। क्वागमन्निति नाज्ञायन्त गीतगोष्ठ्यः। जन्मान्तरातीतानीव नास्मर्यन्त लास्यानि। स्वप्नेऽपि नादृश्यन्त प्रसाधनानि। वार्त्तापि नालभ्यतोपभोगानाम्। नामापि नाकीर्त्यत आहारस्य। खपुष्पप्रतिमान्यासन्नापानमण्डलानि। लोकान्तरम् इवानीयन्त वन्दिवाचः। युगान्तर इवावर्त्तन्त निर्वृतयः। पुनरिवादह्यत शोकाग्निना मकरकेतुः। दिवापि नामुच्यन्त शयनानि। शनैः शनैश्च महापुरुषविनिपातपिशुनाः सर्वं समन्तात् समुदभवन् भुवने भूयांसो भूपतेरभावाय भयमुत्पादयन्तो भूतानां महोत्पाताः।

तथाहि दोलायमानसकलकुलाचलचक्रवाला पत्या सार्द्धं गन्तुकामेव प्रथममचलत् धरित्री। धान्वन्तरेरिवान्तरे तस्मिन् स्वरन्तः परस्परास्फालनवाचालवीचयो विजघूर्णिरेऽर्णवाः। भूभृद्भावभीतानां विततशिखाकलापविकटकुटिलाः केशपाशा इवोर्द्ध्वी-बभूवुर्धूमकेतवः ककुभाम्। धूमकेतुकरालितदिङ्मुखं दिक्पाला-रब्धायुष्कामहोमधूमधूम्रमिवाभवद्भुवनम्। अदृश्यत च तप्तकालायसकुम्भवभ्रुणि भानुमण्डले भयङ्करकबन्धकायव्याजेन कोऽपि पार्थिवप्राणितार्थी पुरुषोपहारमिवोपजहार। ज्वलितपरिवेषमण्डलाभोगभास्वरो जिघृक्षाजृम्भमाणस्वर्भानुभयादुपरचिताग्निप्राकार इव प्रत्यदृश्यत श्वेतभानुः। अवनिपतिप्रतापप्रसाधिताः प्रथमतरकृतपावकप्रवेशा इवादृश्यन्तानुरक्ता दिशः। स्तुतशोणित-

शीकरासारावसिक्ततनुरुधिररजसीव प्रावृतपाटलांशुकपटेवादृश्यत वसुधावधूः। नराधिपविनाशसम्भ्रमभीतैर्लोकपालैरिव कालायस-कपाटपुटैरकालकालमेघपटलैरस्थग्यन्त दिग्द्वाराणि। प्रेतपति-प्रयाणप्रहताः पटवः पटहा इवारटन्तो रूक्षस्फोटनाः पस्फु-रिरे निर्घातानां घोरा निर्घोषाः। निकटीभवद्यममहिषखुर-पुटोद्धूता इव धूमध्यामा धूसरीचक्रुः क्रमेलककपिलाः पांशु-वृष्टयः। विरसविराविणीनामुल्मुकीनां शिखिनो ज्वालाः प्रतीच्छन्त्य इव पतन्तीरुल्का नभसो ववाशिरे शिवाना राजवः। राजधामनि धूमायमानकबरीविभागविभावितविकाराः प्रकीर्ण-केशपाशप्रकाशितशोका इव शाकायन्त प्रतिमाः कुलदेवता-नाम्। उपसिंहासनमाकुलं कालरात्रिविधूयमानरुचिरवेणी-बन्धविभ्रमं बिभ्राणं बभ्राम भ्रामरं पटलम्। पटतामन्तः-पुरस्योपरि क्षणमपि न शशाम व्याक्रोशी वायसानाम्। श्वेतात-पत्रमण्डलमध्यात् जीवितमिव राज्यस्य सरमपिशितपिण्डलोहितं चञ्चुसम्पुटेनोत्खाय खण्डं माणिक्यस्य कूजन् जरद्गृध्रोऽक्षो-त्पातदूयमानश्च कथमपि निनाय निशाम्।

अन्यस्मिन्नहनि समीपमस्य राजकुलात् द्रुतगतिश्श्रमविशीर्ण-मालालङ्कारझाङ्कारिणी विजयघोषघोष विषादस्य चाकुलचरण-चलत्तुलाकोटिक्वणितवाचालिताभिरुद्ग्रीवाभिः किं किमिति पृच्छ्यमानेव दूरादेव भवनहंसीभिः स्खलितविशालश्रोणिभारान रशनागुरावियोगिभिश्च वाष्पान्धा समुपदिश्यमानमार्गेव गृहसारसी-भिः घट्टकपाटपट्टसंघट्टस्फुटितललाटपट्टरुधिरपटलेन पटान्तेनेव रक्तांशुकस्य मुखमाच्छाद्य प्ररुदती सन्तापप्रविलीनकनककटकरस-धारामिव वेत्रलतामुन्मृजन्ती मुखमरुत्तरङ्गितामुत्तरीयांशुकपटीं

स्फुरन्तीं फणिनीव निर्मोकमञ्जरीमाकर्षन्ती नम्रांसस्रंसिनानिल-विलोलेन नीलतमेन तमालचीरचीवरेणेव शोकोचितेन धम्मिल्ल-रचनारहितेन शिरोरुहसञ्चयेन चञ्चता प्राहतकुचा कुचताडन-पीडया समुच्छूनाताम्रश्यामतलं मुहुर्मुहुरत्युष्णाश्रुप्रमार्जनप्रदग्धम् इव करकिसलयं धुनाना चक्षुर्निर्झरे शीर्यति स्नपयन्तीव शोकाग्निप्रवेशाय स्वकपोलतलप्रतिबिम्बितमासन्नलोकं लोललोचन-प्रवृत्तैस्तरलैस्तारकांशुभिः श्यामायमानमात्मदुःखेन दिवसमपि दह-न्तीव क्व कुमारः क्व कुमार इति पुरुषं पृच्छन्ती वेलेति नाम्ना यशोवत्याः प्रतीहारी आजगाम। विषमलोकलोचनप्रत्युद्गता चोपसृत्य कुट्टिमन्यस्तहस्तयुगला गलन्तीभिः सिञ्चन्तीव शुष्यन्तं दशनदीधितिधाराभिराधूसरमधरमधोमुखी विज्ञापितवती देव परित्रायस्व परित्रायस्व जीवत्येव भर्त्तरि किमप्यध्यवसितं देव्येति।

ततस्तदपरमाकर्ण्य च्युत इव सत्त्वेन द्रुत इव दुःखेन आचान्त इव चिन्तया तुलित इव तापेन अङ्कीकृत इवातङ्केनाप्रतिपत्तिः आसीत्। आसीच्चास्य चेतसि प्रतिपन्नसंज्ञस्य वज्रशोऽपि हृदये दुःखाभिषङ्गो निपतन् अश्मनीव लोहप्रहारः कठिने कृतभुजम् उत्थापयति न तु भस्मसात्करोति मे निरनुक्रोशस्य कायमिति। उत्थाय च त्वरमाणोऽन्तःपुरमगात्। तत्र च मर्त्तुमुद्यतानां राज-महिषीणाम् अशृणोद्दूरादेव तात वत चिन्तयात्मानं प्रवसति ते जननी वत्स जातीगुच्छ गच्छाम्यापृच्छस्व माम् मया विना अद्य अनाथा भवसि भगिनि भवनदाडिमलते, रक्ताशोक मर्षणीयाः पादप्रहाराः, कर्णपूरपल्लवभङ्गापराधाश्च पुत्रक अन्तःपुरबालबकुलक वारुणीगण्डूषग्रहणदुर्ललित दृष्टोऽसि वत्से प्रियङ्गुलतिके गाढम् आलिङ्ग मां दुर्लभा भवामि ते भद्र भवनद्वारसहकारक दातव्यो

निपतितोऽपि वाञ्जलिः अपत्यमसि तात पञ्जरशुक यथा न विस्मरसि माम् किं व्याहरसि दूरीभूतास्मि ते शारिके स्वप्ने नः समागमः पुनर्भूयात् मातर्मङ्गलमञ्जं कस्य समर्पयामि गृहमयूरकम् अम्ब सुतवल्लालनीयमिदं हंसमिथुनं मन्दपुण्यया मया न सम्भावितोऽस्य चक्रवाकयुगलस्य विवाहोत्सवः आलवाले निवर्त्तस्व गृहहरिणिके समुपनय मौविदल्लवल्लभवल्लकीं परिष्वजे तावदेनाम् चन्द्रसेने सुहृदः क्रियतामयं जनः विन्दुमति इयं ते पश्चिमा वन्दना चेटि मुञ्च चरणौ आर्य्ये कात्यायनिके किं रोदिषि नीतास्मि दैवेन तात कञ्चुकिन् किं मामनुव्रज्य प्रदक्षिणीकरोषि धात्रेयि धारय आत्मानं किं पादयोः पतसि भगिनि गृहाणि मामर्पितमा कण्ठ कष्टं न दृष्टा प्रियसखी मलयवती कुरङ्गवति अयमामन्त्रणाञ्जलिः सानुमति अयमन्त्यः प्रणामः कुवलयवति एष ते अवसानपरिष्वङ्गः सख्यः अन्तस्थाः प्रणयकलहाः इत्येवंप्रायानालापान्।

इत्याभाषमाणा च तैः प्रविशन्नेव निर्यान्ती इन्तःसर्वस्वापनेत्री गृहीतमरणप्रसाधना आत्मीमिव जातवेदसं पत्युः पुरः प्रवेश्यन्ती प्रत्यग्रस्नानार्द्रदेहतया श्रियमिव भगवतो सद्यः समुद्रादुत्थिता कुसुम्भवस्त्रणी वासमी दिवमिव तेजसी सान्ध्य दधाना ताम्बूल-दिग्धरागान्धकाराधरप्रभापटलपाटलं पट्टांशुकमिव विधवाभरण-चिह्नमङ्गलम्नमुद्वहन्ती रक्तकण्ठसूत्रेण कुचान्तरावलम्बिना स्फुटितहृदयविगलितरुधिरधारायुक्ता कुर्वती तिर्यक्कुटिल-कुण्डलकोटिकपटकाटतन्तुना हारेण वलितेन सितांशुकपाशेनेव कण्ठमुत्पीडयन्ती सरसकुङ्कुमाङ्गरागतया कवलितामिव दिधक्षता चितानलाग्निनाता चितानलाग्निनाकुसुमैरिव अवशधवलैरश्रुबिन्दुभिः अंशुकोत्सङ्गमापूरयन्ती गृहदेवतामभ्यर्चयन्तीमिव वक्त्रैर्निगलद्भिः

पदे पदे विकिरन्तीमाप्रपदीनां कण्ठे गुणकुसुममालां यमदोलाम् इवारूढाम्, अन्तर्गुञ्जन्मधुकरमुखरेणामन्त्र्यमाणलोचनोत्पलामिव कर्णोत्पलेन, प्रदक्षिणीक्रियमाणामिव मणिनूपुरबन्धुभिर्बद्धमण्डलं भ्रमद्भिर्भवनहंसैः सन्निहितप्राणसमं मरणाय चित्तमिव चित्रफलकमविचलं धारयन्तीम् अन्त्रैर्बद्धोद्धूयमानधवलपुष्पदामकां पतिव्रतापताकामिव पतिप्राणयष्टिमिष्टामुपगूहमानां, बन्धोरिव निजचारित्रधवलस्य नृपातपत्रस्य पुरो नेत्रोदकमुत्सृजन्तीं, पत्युः पादपतनसमुद्गमदभ्यधिकवाष्पाम्भःप्रवाहप्रतिरुद्धहृदयः कथमपि प्रतिपन्नादेशान् सचिवान् सन्दिशन्तीम्, अनुनयनिवर्त्तितविधुरहृद्बन्धुवर्गवर्द्धमानध्वनिभिर्हाहाकन्दैराकृष्यमाणश्रवणां भर्त्तृभाषितनिभैः पञ्जरसिंहहंसैर्हितैः क्रियमाणहृदया धात्र्या भर्त्तृभक्त्या च निजया प्रसाधितां अरत्या मूर्च्छया च संस्तुतया धार्य्यमाणां सख्या पीडया च व्यसनसङ्गतया समालिङ्गितां परिजनेन सन्तापेन च गृहीतसर्व्वावयवेन परीतां कुलपुत्रोच्छ्वसितैश्च महत्तरैरधिष्ठितां कञ्चुकिभिर्दुःखैश्चातिदृढैरनुगतां भूपालवल्लभान् कौलेयकान् अपि साश्रमालोकयन्तीं सपत्नीनामपि पादयोः पतन्तीं चित्रपुत्रिका अप्यामन्त्रयमाणां गृहपतत्रिणामप्यञ्जलिं पुरस्तादुपरचयन्तीं पशूनप्याहूयमानां भवनपादपानपि परिष्वजमानां मातरं ददर्श ।

दूरादेव च वाष्पायमाणदृष्टिरभ्यधात् अम्ब त्वमपि मां मन्दपुण्यं त्यजसि प्रसीद निवर्त्तस्व इत्यभिदधान एव च सस्नेहमिव नूपुरमणिमरीचिभिश्चुम्ब्यमानचूडश्चरणयोर्न्यपतत् । देवी तु यशोवती तथा तिष्ठति पादनिहितशिरसि विमनसि कनीयसि प्रेयसि तनये गुरुणा गिरिणेवोद्वेगवेगेनावष्टभ्यमाना मूर्च्छान्ध-

तमसं रसातलमिव प्रविशन्ती बाष्पप्रवाहेणेव चिरनिरोधसम्पिण्डि-तेन शोकसम्भारेण निर्भराविर्भूतेनाभिभूयमाना कृतप्रयत्नापि निवारयितुं न शशाक बाष्पोत्पतनम्(११)। उत्कटकुचोत्कम्पप्रक-टितासह्यशोकाकुलता च गद्गदिकास्खलमानवागविकला निःसामान्य-मन्युतरलीक्रियमाणाधरोष्ठी। पुनरुक्तस्फुरणनिर्विवृतनासापुटा निमील्य नयने नयनाम्भःसेकसवेन स्नापयन्ती विमलौ कपोलौ संछाद्य करनखमयूखमालापञ्चिततनुना तदनन्तरनिर्गच्छदच्छा-च्छोतसेवांशुकपटान्तेन किञ्चिदुन्नामितं वदनन्दूयमानमानसा स्मरन्ती प्रस्नुतस्तनी प्रसवदिवसादारभ्य सकलमङ्गलायिनः शैशवम् अस्य, आर्त्तिस्खलगतहृदया अम्ब तात न पश्यतं पापां परलोक-प्रस्थिता मामेवमतिदुःखितामिति मुहुर्मुहुराक्रन्दन्ती पितरौ, वा वत्स विश्रान्तभागधेयया न दृष्टोऽसीति प्रेष्ठं ज्येष्ठं तनयमसन्नि-हितं क्रोशन्ती अनाथा जातेति श्वशुरकुलवर्त्तिनीं दुःखितरमनु-शोचन्ती निष्करुण किमपराद्धं तवामुना जनेनेति दैवमुपालभ-माना नास्ति मत्समा सीमन्तिनी दुःखभागिनीति निन्दन्ती बहुविधमात्मानं सुपितास्मि शयांस त्वयेत्यकाण्डे कृतान्तं गर्हमाणा मुक्तकण्ठमतिचिरं प्रालपदरोदीत्।

प्रशान्ते च मन्युवेगे सजलमुत्थापयामास सुतम्। यथा च अस्य प्रवर्त्तितस्य पक्ष्मपालीपुञ्जमानमपाकिरणमितरा दूताम् दूर्वाधिकतरं धारन्तीं दृष्टिमुन्ममार्ज। स्वयमपि कठोररागपरि-पीयमानेन धवलिम्ना मुच्यमानदरे कयदन्तखचितच्छदे शुक-चीकारतारतरङ्कितपक्ष्मणी सूक्ष्मतराम्बुबिन्दुपरिपाटीपतनानु-बन्धविधुरे लोचने पुनःपुनरापूर्यमाणे प्रक्षाल्य वाष्पार्द्रगण्ड-

(११) बाष्पोत्पीडम्। १।

गृहीतां च श्रवणशिखरमारोप्य शोकलम्बामलककलताम् अधः-स्रस्तविलोलबालिकाव्याकुलिताश्च समुत्सार्य्य तिरश्चीं चिकुरसटाम् अश्रुप्रवाहपूरितमार्द्रञ्च किञ्चित् च्युतमुत्क्षिप्य हस्तेन स्तनोत्तरीयं तरङ्गितमिव मग्नांशुकपटान्ततनुताम्रलेखालाञ्छितलावण्य-कुञ्जिकावर्जितराजतराजहंसास्यसमुद्गीर्णेन पयसा प्रक्षाल्य मुख-कमलं कलमूकलोकविहृते वासःशकले शुचिनि समुन्मृज्य पाणौ सुतवदनविनिहितनिभृतनयनयुगला चिरं स्थित्वा पुनः पुनरायतं निश्वस्यावादीत्,

वत्स नासि नप्रियो निर्गुणो वा परित्यागार्हो वा। स्तन्येनैव सह त्वया पीतं मे हृदयम्। अस्मिंश्च समये प्रभूतप्रभुप्रसादान्त-रिता त्वां न पश्यति दृष्टिः। अपिच पुत्रक पुरुषान्तरविलोकन-व्यसनिनी राज्योपकरणम् अकरुणा वा नास्मि लक्ष्मीः क्षमा वा। कुलकलत्रमस्मि चारित्रधना धर्म्मधवले कुले जाता। किं विस्मृतोऽसि मा समरशतशौण्डस्य पुरुषप्रकाण्डस्य केशरिण इव केशरिणीं गृहिणीम्। वीरजा वीरजाया वीरजननी च मादृशी पराक्रमक्रीता कथमन्यथा कुर्य्यात्। एवंविधेन पित्रा ते भरत-भगीरथनाभागनिभेन नरेन्द्रवृन्दारकेण गृहीतः पाणिः। आसे-वितः सेवासम्भ्रान्तानन्तसामन्तसीमन्तिनीसमावर्जितजाम्बूनद-घटाभिषेकः शिरसा। लब्धो मनोरथदुर्लभो महादेवीपट्टबन्ध-सत्कारलाभो ललाटेन। आपीतौ शुभ्रहिमैः पुत्रैरमित्रकलत्रवन्दी-वृन्दविधूयमानचामरमरुच्चलचीनांशुकधरौ पयोधरौ। सपत्नीनां शिरःसु निहितं ममखिखिलकटककुटुम्बिनीकिरीटमाणिक्य-मालार्च्चितं चरणयुगलकम्। एवं कृतार्थसर्व्वावयवा किमपरमपेक्षे क्षीणपुण्या। मर्त्तुमविधवैव वाञ्छामि। न च शक्नोमि दग्धस्य

भर्त्तुरार्य्यपुत्रविरहिता रतिरिव निरर्थकान् प्रलापान् कर्त्तुम्। पितुश्च ते पादधूलिरिव प्रथमं गगनगमनमावेदयन्ती बहुमता भविष्यामि शूरानुरागिणीनां सुराङ्गनानाम्। प्रत्यग्रदृष्टवैधव्य-दुःखदग्धायाश्च मे किं धक्ष्यति धूमध्वजः। मरणाच्च मे जीवितम् एवास्मिन् समये साहसम्। अतिशीतलः पतिशोकानलादस्य-स्नेहेन्धनादस्मादनलः। कैलासकल्पे प्रवसति जीवेश्वरे जरत्तृण-कणिकालघीयसि जीविते लोभ इति क्व घटते। अपि च जीवन्तीम् अपि मां नरपतिमरणावधीरणमहापातकिनीं न स्पृशन्ति पुत्र पुत्रराज्यसुखानि। दुःखदग्धानाञ्च धृतिरमङ्गला चाप्रशस्ता च निरुपयोगा च भवति। वत्स विश्वसनीया यशसा स्थातुमिच्छामि लोके न वपुषा। तदहमेव त्वां तावत्तात प्रसादयामि न पुनः मनोरथप्रातिकूल्येन कदर्थनीयास्मि। इत्युक्त्वा पादयोरपतत्।

स तु ससम्भ्रममपनीय चरणयुगलम् अवनमितमुखभयकर-विघटितवपुषम् अवनिगतशिरसमुदनमयन्मातरम्। दुर्निवारताञ्च शुचः समवधार्य्य कुलयोषिदुचिताञ्च तामेव श्रेयसीं मन्यमानः क्रिया कृतनिश्चयाञ्च तां ज्ञात्वा तूष्णीमधोमुखोऽभवत्।

अभिनन्दति हि स्नेहकातरापि कुलीनता देशकालानुरूपम्। देव्यपि यशोवती परिष्वज्य समाघ्राय च शिरसि निर्गत्य चरणा-भ्यामेव आन्तःपुरात् पौराक्रन्दनिर्भराभिरुपरुध्यमानेव दिग्भिः सरस्वतीतीरं ययौ। तत्र च सौम्यभावकातरैर्दृष्टिपातैः प्रविकसित-रक्तपङ्कजपुञ्जैरिवार्च्चयित्वा भगवन्तं भानुमन्तमिव मूर्त्तिरैन्दवी चित्रभानुं प्राविशत्। इतरोऽपि मातृमरणविह्वलो बन्धुवर्गपरिवृतः पितुः पार्श्वं प्रायात् अपश्यच्च स्वल्पावशेषप्राणवृत्तिं परिवर्त्तमान-तारकं तारकराजमिवास्तमभिलषन्तं जनयितारम्। अवश्यायोक्ता-

द्रेकाभिद्रुतश्च त्याजितः स्नेहेन धैर्य्यम् आश्लिष्याश्च सकलदुर्मद-महीपालमौलिमालालालितौ पादपद्मौ अन्तस्तापाग्नश्चन्द्रमिव द्रवीभवन्तं दशनज्योत्स्नाजालमिव जलतामापद्यमानं लोचन-लावण्यमिव विलीयमानं सुखसुधारसमिव स्यन्दमानम् अच्छा-च्छम् अश्रुस्रोतसां सन्तानं महामेघमयविलोचन इव वर्षन् इतरवद्विमुक्तारावश्चिरं रुरोद।

राजा तु तमुपरुध्यमानदृष्टिरविरतरुदितशब्दाश्रितश्रवणः प्रत्यभिज्ञाय शनैः शनैरवादीत् पुत्त्र नार्हस्येवं भवितुम्। भवद्विधा नन्वमहासत्त्वाः। महासत्त्वता हि प्रथममवलम्बनं लोकस्य पश्चात् राजबीजिता। सत्त्ववताञ्चाग्रणीः सर्व्वातिशयाश्रितः क्व भवान् क्व वैक्लव्यम्। कुलप्रदीपोऽसीति दिवसकरसदृशतेजसस्ते लघू-करणमिव। पुरुषसिंहोऽसीति शौर्य्यपटुप्रज्ञोपरञ्जितपराक्रमस्य निन्देव। क्षितिरियं तवेति लक्षणाख्यातचक्रवर्त्तिपदस्य पुनरुक्तम् इव। गृह्यतां श्रीरिति स्वयमेव श्रिया गृहीतस्य विपरीतमिव। अध्यास्यतामयं लोक इति उभयलोकविजिगीषोरपुष्कलमिव। स्वीक्रियतां कोष इति शशिकरनिकरनिर्म्मलयशःसञ्चयैकाभिनि-वेशिनो निरुपयोगमिव। आत्मीक्रियतां राजकमिति गुणगणात्मी-कृतजगतो गतार्थमिव। उह्यतां राज्यभार इति भुवनत्रयभारो-चितस्य अनुचितनियोग इव। प्रजाः परिरक्ष्यन्तामिति दीर्घ-दोर्दण्डार्गलितदिङ्मुखस्यानुवाद इव। परिजनः परिपाल्यतामिति लोकपालोपमस्यानुषङ्गिकमिव। शस्त्राभ्यासः कार्य्य इति धनु-र्गुणकिणकलङ्ककालीकृतप्रकोष्ठस्य किमादिश्यते। निग्राह्यता चापलमिति नूतनतरवयसि निगृहीतेन्द्रियस्य निरवकाशैव मे वाणी। निरवशेषतां शत्रवो नेया इति सहजस्य तेजस एवेयं

चिन्ता । इत्येवं वदन्नेव अपुनरुन्मीलनाय निमिमील राजसिंहो लोचने ।

अस्मिन्नेवान्तरे पूषापि आयुषेव तेजसा व्ययुज्यत । ततश्च लज्जमान इव नरपतिजीवितापहरणजनितात्मापराधादधोमुखः समभवत् । भूपालाभावशोकशिखिनेवाक्वाथ्यमानस्ताम्रतां प्रपेदे । मन्दं मन्दमप्रियप्रश्नार्थमिव स्थितिमनुवर्तमानो लौकिकीम् अवातरद्दिवः । दित्सुरिव जनेशाय जलाञ्जलिम् अपरजलनिधिसमीपमुपससर्प । सद्योदत्तजलाञ्जलिर्दुःखदह्यमानमिव करसहस्रमालोहितमधत्त ।

एवञ्च महानराधिपनिधननिधीयमानविप्लवैराग्य इव शान्तवपुषि वियति गिरिगुहागह्वरं गभस्तिमालिनि समुपोह्यमानमहाजनाश्रुदुर्दिनार्द्रीकृत इव निर्वात्यातपे रोदनताम्रसकललोकलोचनवशेनेव लोहितायति जगति उष्णायमानानेकनरनिश्वाससन्तापस्फुट इव च मीलायमाने दिवसे नृपानुगमनप्रचलितयेव लक्ष्म्या मुच्यमानासु कमलिनीषु पतिशुचेव परिहृतच्छायायां श्यामायमानायां भुवि कुलपुत्रेष्विव परित्यक्तकर्मन्तेषु कृतकरुणप्रलापेषु वनान्तानाश्रयत्सु (१२) दुःखितेषु चक्रवाकेषु कुलभङ्गभीतेष्विव निगूढकोशेषु कुशेशयेषु स्फुटितदिग्वधूहृदयरुधिरस्रव इव गलिते रक्तातपे क्रमेण च लोकान्तरमुपगतवत्यनुरागशेषे जाते तेजसामधीशे गगनतलवितन्यमानपटलरागपाटलायां प्रेतपताकायामिव प्रहतायां सन्ध्यायां शवशिबिकालङ्कारकचामरमालास्विव स्फुरन्तीषु दर्शनप्रतिकूलासु तिमिरलेखासु चिता-गुरुकालकाष्ठायां केनापि चितायामिव रचितायां रजन्या दन्ता-

(१२ वनान्ताश्रितेषु । २ । वनान्तानाश्रितेषु । ३ ।

मलपत्रप्रसाधितकर्णिकासु केसरमालाकल्पितमुण्डमालिकासु अनुमर्त्तुमिवोद्यतासु प्रहसितमुखीषु कुमुदलक्ष्मीषु अवतरत्त्रिदशविमानकिङ्किणीक्वणित इव श्रूयमाणे शाखिशिखरकुलायलीयमानशकुनिकुलकूजिते नाकपथप्रस्थितपार्थिवप्रत्युद्गतपुरुहूतातपत्र इव पूर्व्वस्यां दिशि दृश्यमाने चन्द्रमसि नरेन्द्रः स्वयं समर्पितस्कन्धैः गृहीत्वा शवशिविका शिविसमः सामन्तैः पौरैश्च पुरोहितपुरःसरैः सरितं सरस्वतीं नीत्वा नरपतिसमुचितायां चितायां हुताशसत्क्रियया यशःशेषतामनीयत ।

देवोऽपि हर्षः पुञ्जीभूतेन सकलेनेव जीवलोकेन लोकेन राजकुलसम्बन्धेनाशेषेण शोकमूकेन परिवृतः अन्तर्व्वर्त्तिनापि शोकानलतप्तेन स्नेहद्रवेण वहिरिव सिच्यमानो निर्व्यवधानायां धरण्यामुपविष्ट एव तां निशीथिनीं भीमरथीभीमामखिलां सराजको जजागार । अजनि चास्य चेतसि ताते दूरीभूते सम्प्रत्येतावान् खलु जीवलोको लोकस्य भग्नाः पन्थानो मनोरथानां खिलीभूतानि भूतिस्थानानि स्थगितान्यानन्दस्य द्वाराणि सुप्ता सत्यवादिता लुप्ता लोकयात्रा विलीना वाङ्मशालिता प्रलीना प्रियालापिता प्रोषिताः पुरुषकारविहारविकाराः समाप्ता समरशौण्डता ध्वस्ता परगुणप्रीतिः विश्रान्ता विस्रम्भभूमयः अपदान्यपदानानि निरुपयोगानि शास्त्राणि निरवलम्बना विक्रमैकरसता कथावशेषा विशेषज्ञता ददातु जनो जलाञ्जलिमौर्जित्याय प्रतिपद्यतां प्रव्रज्यां प्रजापालता बध्नातु वैधव्यवेणीं वरमनुष्यता समाश्रयतु राजश्रीराश्रमपदम्, परिधत्तां धवले वाससी वसुमती वहतु वल्कले विलासिता तपस्यतु तपोवनेषु तेजस्विता प्राप्नोतु चीवरे वीरता क्व गम्यता पुनस्तस्य

हते हतभाग्यतया क्व पुनः प्राप्स्यति तादृशान् महापुरुषनिर्माण-परमाणून् परमेष्ठी शून्याः संवृत्ता दश दिशो गुणानां जगत् जातमन्धकारं धर्मस्य निष्प्रणयमधुना जन्म शस्त्रोपजीविनाम्। तातेन विना कुतस्त्याः शिवसमरसमरभसमारब्धकलकला-कण्टकितसुभटकपोलभित्तयो वीरगोष्ठ्यः अपि नाम स्वप्नेऽपि दृश्येत दीर्घरक्तनयनम् पुनरसम्भ्रमस्मेरोक्तं जन्मान्तरेऽपि पुनः परिष्वज्येत तद्वक्षःस्थलमाभ्यधिकगरिमगर्भं भुजयुगलम् लोकान्तरेऽपि पुनरालापतः श्रूयेत सा सुधारसवृष्टिरिन्दोर्मथ्यमानक्षीरसागरोद्गार-गम्भीरा भारतीति। एतानि चान्यानि च चिन्तयत एवास्य कथमपि सा क्षयमियाय यामिनी।

ततः शुचेव मुक्तकण्ठमारटत्सु हंसकाकुकुलेषु टङ्कगिरितट-शिखरेभ्यः पातयत्स्वात्मानं मन्दिरमयूरेषु परित्यक्तनिवासेषु च वनाय प्रस्थितेषु पञ्जरस्थेषु सद्यःसम्भूते ताम्यति तमसि मन्दी-भूतालोकेष्वभावमभिलषत्सु प्रदीपेषु स्फुरद्दवदावल्कलपाटलमपि प्रव्रज्यामिव प्रतिपन्ने नभसि प्रभातसमयेन समुत्तीर्यमाणासु पार्थिवाश्रियश्चलकलास्विव कलविङ्ककन्धराधूसरासु तारकासु भूभृद्धातुगर्भकुम्भधारिषु विविधसरःसरित्तीर्थाभिमुखेषु प्रस्थितेषु वनकरिकुलेषु शावशुचिसिक्थपटलपाण्डुरे पिबति दूरापरपयो-निधिपुलिनपरिसरे पात्यमाने शशिनि क्रमेण दर्पितानलधूम-विसरधूसरीकृततेजसीव नरपतिशोकपावकदाहविकलकलङ्कालो-कृतचेतसीव प्रोषितसमस्तान्तःपुरपुरन्ध्रिमुखचन्द्रज्योत्स्नोद्गमविगत-वपुषीव प्रथमास्तमितरोहिणीरमणचक्रविमनसीव चाचलमुपगते रजनिकरे राजतीव देवे दिवमारूढे सवितरि परित्यक्ते राज्य इव रजनीप्रबन्धे प्रबुद्धराजहंसमण्डलप्रबोध्यमानः पङ्कजाकर इव

चचाल देवो हर्षः । ततश्च नूपुररवविरामसूकमन्दमन्दिरहंसे
शोकाकुलकतिपयकञ्चुकिमात्रावशेषेषु शुद्धान्तेषु पतितयूथप इ
वनगजयूथे कक्ष्यान्तरवर्त्तिनि पितृपरिजने विषादिन्यपरिहृ
त्विषादिनि च स्तम्भनिषण्णे निष्पन्दमन्दे राजकुञ्जरे, मन्दुरा
पालकाक्रन्दकथिते वाजिरवाजि राजवाजिनि विश्रान्तजयशब्द
कलकले च शून्ये च महास्थानमण्डपे दह्यमानदृष्टिर्निर्जगाम राज
कुलात् । अगाच्च सरस्वतीतीरं तस्यां स्नात्वा पित्रे ददावुदकम्
अपस्नातस्वामिष्ठीवितमौलिरेव परिधायोद्गमनीयदुकूलवासर्स
निश्वासपरो निरातपत्रो निरस्तवारणः समुपनीतेऽपि सप्तौ चरणा
भ्यामेव नासाग्रासक्तेन रक्ततामरसताम्रेण चक्षुषा हृदयावशेषस्यापि
पितुर्दोहशङ्कया शोकाग्निमिव उद्गिरन् अताम्बूलस्यापि सुचिर
प्रक्षालितस्य कल्पतरुकिसलयस्येव स्वभावपाटलस्याधरस्याधर
पल्लवस्य प्रभया मांसरुधिरकवलानिव हृदयाभिघातादुद्वम
उष्णनिश्वासमोचैर्भवनमाजगाम ।

राजवल्लभास्तु भृत्याः सुहृदः सचिवाश्च तस्मिन्नेवाहनि
निर्गत्य प्रियं पुत्रदारमुत्सृज्य उद्वाष्पैर्बन्धुभिर्वार्य्यमाणा अपि बहु
नृपगुणगणहृतहृदयाः केचिदात्मानं भृगुषु बबन्धुः केचित्तत्तैः
तीर्थेषु तस्थुः केचिदनशनैराशीर्णतृणकुशा व्यथमानमानसा
शुचमसमामशमयन् केचिच्छलभा इव वैश्वानरं शोकावेगविवश
विविशुः केचिद्दावणदुःखदहनदह्यमानहृदया गृहीतवाचस्तुषार
शिखरिणं शरणं ययुः केचिद्विन्ध्योपत्यकासु वनकरिकुलकर
शीकरासारसिच्यमानतनवः पल्लवशयनशायिनः सन्तापमशमयन्
केचित् सन्निहितानपि विषयानुत्सृज्य सेवाविमुखाः परिक्लिष्टै
पिण्डकैरटवीभुवः भूत्वा जगृहुः केचित् पवनाशना धर्म्मधना

धर्म्मप्रणयो मुनयो बभूवुः केचिद्गृहीतकाषायाः कापिलं मतम् अधिजगिरे गिरिषु केचिदाक्षोटितचूडामणिषु शिरःसु धवली-कृतधूर्जटयो जटा जघटिरे अपरे परिपाटलप्रलम्बचीवराम्बर-संवीताः स्वाम्यनुरागमुज्ज्वलं चक्रुः अन्ये तपोवनचरिष्णुजटा-घोणोल्लिख्यमानकर्णयो जरां ययुः अपरे पुनः पाणिपल्लवप्रवाहैः आताम्ररागैर्नयनपुटैः कमण्डलुमिव वारि वहन्तो म्लीततनता मुण्डा विचेरुः।

देवमपि हर्षं तदवस्थं पितृशोकपिशुनीकृतं श्रियं शाप इति मह्यं महापातकमिति राज्यं रोग इति भोगान् भुजङ्गा इति निलयं निरय इति बन्धुं बन्धनमिति जीवितमयश इति देहं द्रोह इति कल्यतां कलङ्क इति आयुरपुण्यफलमिति आहारं विषमिति विषममृतमिति चन्दनं दहन इति कामं क्रकच इति हृदयस्फोटनमभ्युदय इति च मन्यमानं सर्व्वासु क्रियासु विमुखं पितृपितामहपरिग्रहागताश्चिरन्तनाः कुलपुत्रा वंशक्रमाहित-गौरवाश्च शास्त्रगिरो गुरवः श्रुतिस्मृतीतिहासविशारदाश्च जरद्विजातयः श्रुताभिजनशीलशालिनो मूर्द्धाभिषिक्ताश्चामात्या राजानो यथावदधिगतात्मतत्त्वाश्च संस्तुता मस्करिणः समदुःख-सुखाश्च मुनयः संसारासारत्वकथनकुशला ब्रह्मवादिनः शोकाप-नयननिपुणाश्च पौराणिकाः पर्य्यवारयन्।

अस्वतन्त्रीकृतश्च तैर्म्मनसापि नालभत शोकमनुप्रवर्त्तितुम्। अनुनीयमानश्च कथं कथमप्याहारादिकासु क्रियासु आभिमुख्यम् अभजत। स्वात्मगतहृदयश्चाचिन्तयत् अपि नाम तातस्य मरणं महाप्रलयसदृशमिदमुपश्रुत्य आर्य्यो बाष्पजलस्नातो न म्लायीत वल्कले। नाश्रयेद्वा राजर्षिराश्रमपदम्। न विशेद्वा पुरुषसिंहो

गिरिगुहाम्। अश्रुसलिलनिर्भरभरितनयननलिनयुगलो वा प्रश्येदनाथां पृथिवीम्। प्रथमव्यसनविषमविषविह्वलः क्षरेदात्मानं वा पुरुषोत्तमः। अनित्यतया जनितवैराग्यो वा न निराकुर्य्यात् उपसर्पन्तीं राज्यलक्ष्मीम्। दारुणदुःखदहनप्रज्वलितदेहो वा प्रतिपद्येताभिषेकम्। दूरागतो वा राजभिरभिधीयमानो न पराचीनतामाचरेत्। अतिपितृपक्षपाती खल्वार्य्यः। सर्व्वदा तातश्लाघया मामभिधत्ते तात हर्ष कस्यचिदभूत् भविष्यति वा पुनः काञ्चनतालतरुप्रांशु कायप्रमाणमिदम् ईदृक् च दिवसकर-प्रीत्या दिवसम् उन्मुखविकसितं मुखमहाकमलम् एतौ च वज्र-स्तम्भभास्वरौ भुजकाण्डौ एते च हसितमदालसहलधरविभ्रमा विलासाः कोऽन्यो मानी विक्रान्तो वदान्यो वेति। एतानि चान्यानि च चिन्तयन् दर्शनोत्सुकहृदयो भ्रातुरागमनमुदीक्षमाणः कथं कथमप्यतिष्ठदिति।

इति श्रीबाणभट्टकृते हर्षचरिते पञ्चम उच्छ्वासः।

षष्ठ उच्छ्वास ।

उच्छ्रितस्योच्छ्रितस्य भुवि प्रथितनिगूढाग्रदूतनीतानाम् ।
विजिगीषुरिव कृतान्तः शूराणां संग्रहं कुरुते ॥
विश्रब्धघातदोषः स्ववधाय खलस्य वीरकोपकरः ।
नवतरुभङ्गध्वनिरिव हरिनिद्रातस्करः करिणः ॥

अथ प्रथमप्रेतपिण्डभुजि भुक्ते द्विजन्मनि गतेषूदकर्माशेषु अशौचदिवसेषु चतुर्दशदायिनि दीयमाने द्विजेभ्यः शयनासनचामरातपत्रामत्रपत्रशस्त्रादिके नृपनिकटोपकरणकलापे नीतेषु तीर्थस्थानानि सह जनहृदयैः कीकसेषु कल्पितशोकशल्ये सुधानिचयचिते चिताचैत्यचिह्ने वनाय विसर्जिते महोर्जित राजगजेन्द्रे क्रमेण च मन्देष्वाक्रन्देषु विरलीभवत्सु च विलापेषु विश्राम्यत्स्वश्रुषु शिथिलीभवत्सु श्वसितेषु अविस्पष्टेषु हाहाकारेषु उत्सार्यमाणासु च व्यसनशय्यासु उपदेशश्रवणक्षमेषु श्रोत्रेषु अनुरोधावधानयोग्येषु हृदयेषु गणनीयेषु नृपगुणेषु प्रदेशदर्शिताम् आश्रयति शोके हृतेषु कविरुदितकेषु जाते च स्वप्नावशेषदर्शने हृदयावशेषस्थाने चित्रावशेषाकृतौ काव्यावशेषनाम्नि नरनाथे देवो हर्षः कदाचिदुत्सृष्टव्यापारः पुञ्जीभूतहृद्बन्धुवर्गपरिवृत्त अवनतमुखेन महाजनेन मौनेनाकाले चात्मानं वेदयमानम् अद्राक्षीत् । दृष्ट्वा चाकरोन्मनसि किमन्यत् आर्य्यमागतमावेदयत्ययं शोकपराभूतो लोकाकर (१) इति वेपमानहृदयश्च पप्रच्छ

(१) लोकोत्कर. । ख ।

प्रविशन्तम् अधिकृतरप्रचारमन्यतमं पुरुषम् अङ्ग कथय किमार्य्यः प्राप्त इति । स मन्दमब्रवीत् देव यथादिशसि हारीति श्रुत्वा च सोदर्य्यस्नेहनिर्हितनिरतिशयमन्युच्छ्रुद्धतमनाः कथमपि न ववाम वाष्पवारिप्रवाहोत्पीड़ेन सह जीवितम् ।

अनन्तरञ्च द्वारपालमुक्तेन प्रथमप्रविष्टेन परिजनेनेवाक्रन्देन कथ्यमानं दूरद्रुतागमनमुषितबाहुल्येन विच्छिन्नच्छत्त्रधारेण लम्बिताम्बरवाहिना भ्रष्टभृङ्गारग्राहिणा च्युताचमनधारिणा ताम्य-त्ताम्बूलिकेन खञ्जत्खड्गग्राहिणा कतिपयप्रकाशदासेरकप्रायेण बहुवासरान्तरितस्नानभोजनशयनश्यामक्षामवपुषा परिजनेन परिहृतम् अविरलमार्गधूलिधूसरितशरीरतया शरणीकृतमिव अशरणया क्रमागतया वसुन्धरया हूणनिर्जयसमरशरव्रणबद्धपट्टकैः दीर्घधवलैः समासन्नराज्यलक्ष्मीकटाक्षपातैरिव शवलीकृतकायम् अवनिपतिप्राणपरित्राणार्थमिव च शोककृतभुजि कृतमांसैरति-कृशैरवयवैरावेद्यमानदुःखभारम् अपगतचूड़ामणिनि मलिना-कुलकुन्तले शेखरशून्ये शिरसि शुचमारूढ़ां मूर्त्तिमतीमिव दधानम् आतपगलितस्वेदराजिना रुदतेव पितृपादपतनोत्कण्ठितेन ललाट-पट्टेन लक्ष्यमाणं प्रथीयसा वाष्पपयःप्रवाहेनाभिमतपतिमरण-मूर्च्छितामिव महीमनवरतं सिञ्चन्तम् अनन्तसन्तताश्रुप्रवाह-निपतननिम्नीकृताविव दुःखक्षामौ कपोलावुद्वहन्तम् अत्युष्णमुख-मारुतमार्गगतेन द्रवतेव गलितताम्बूलरागेणाधरबिम्बेनोपलक्षितं पवित्रिकामालावशेषेन्द्रनीलिकांशुश्यामायमानम् अचिरश्रुतपितृ-मरणमहाशोकाग्निदग्धमिव श्रवणप्रदेशमुद्वहन्तम्, अस्फुटाभिव्यक्त-व्यञ्जनेनाप्यधोमुख स्तिमित नयन नील तारक मयूख माला खचितेन शोकप्ररूढ़श्मश्रुश्यामलेनेव मुखशशिना लक्ष्यमाणं केशरिणमिव

महाभूभृद्विनिपातविह्वलनिरवलम्बनं दिवसमिव तेजःप्रतिपन्न-परिम्लानश्रियं छायीभूतं चन्द्रमसमिव भग्नकल्पपादपं विच्छायं दिग्भागमिव प्रोषितदिक्कुञ्जरशून्यं, गिरिमिव गुरुवज्रपातदारितं कम्पमानं भीतमिव कृशिम्ना किङ्करीकृतमिव कार्श्येन दासी-कृतमिव दौर्मनस्येन शिष्यीकृतमिव शोचितव्येन आत्मीकृतमिव व्याधिना मूकीकृतमिव मौनेन पिष्टमिव पीडया स्विन्नमिव सन्ता-पेन उज्झितमिव चिन्तया मग्नमिव विलापेन हृतमिव वैराग्येण प्रत्याख्यातमिव प्रतिसङ्ख्यानेन अवज्ञातमिव प्रज्ञया दूरीकृतमिव दुरभिभवत्वेन अबोध्येन हृदयबन्धूनाम् असाध्येन साधुभाषितानाम् अगम्येन गुरुगिराम् अशक्येन शास्त्रशक्तीनाम् अपथेन प्रज्ञा-प्रयत्नानाम् अगोचरेण सुहृदनुरोधानाम् अविषयेण विषयोप-भोगानाम् अभूमिभूतेन कालक्रमोपचयानाम्। शोकेन कवलीकृतं ज्येष्ठं भ्रातरमपश्यत् आवेगान्तरस्फुटच्छोकशिखाकलापैरिवप्लुष्य-माणकाय इव च परवशः समुदगात्।

अथ दूरादेव दृष्ट्वा देवो राज्यवर्धनश्चिरकालकलितं बाष्पवेगं मुमुचुः सुदूरप्रसारितेन सङ्कल्पयन्निव सर्वदुःखानि दीर्घेण दोर्दण्डद्वयेन गृहीत्वा कण्ठे मुक्तकण्ठं पुनः पतितक्षौमे वामे वक्षसि पुनः कण्ठे पुनः स्कन्धभागे पुनः कपोलोदरे निधाय तथा तथा रुरोद यथा सबन्धमानीतोदपाश्रुन्त हृदयानि। अस्त-नृपतिना राजवल्लभेनापि प्रतिपन्ननिर्भरं निर्भरमिवाक्रन्दत। सुचिराच्च कथं कथमपि निरुद्धनयनजलः पर्जन्य इव शरदि स्वयमेवोपशशाम। उपविष्टश्च परिजनोपनीतेन तोयेन तत्कर-नखमयूखपुञ्जतया महाजलप्रवाहायमानफेनलेखमिव पुनः पुनः प्रक्षालितमपि पक्ष्माग्रसंसक्तबिन्दुवृन्दमन्दोन्मेषमुषितदर्शनं कथं कथम्

अपि चक्षुरक्षालयत् । ताम्बूलिकोपस्थापितेन च वाससा चन्द्रातपशकलेनेवोष्णोष्णवाष्पदग्धं वदनमुन्ममार्ज । तूष्णीमेव च चिरं स्थित्वा उत्थाय स्नानभूमिमगात् । तस्याञ्च स्थित्वा विभूषं वित्रस्तव्यस्तकुन्तलं मौलिमनादरान्निष्पीड्य सावशेषमन्युस्फुरितेन जिजीविषतेव जलधौतसुभगमात्मानमपि चुचुम्बिषतेवाधरेण क्षालितस्य चक्षुषः श्वेतिम्ना च शारदशशिकरविकसितविषदकुमुदवनदलावलिबलिविक्षेपैरिव दिग्देवतार्च्चनकर्म्म कुर्व्वाणः चतुःशालवितर्द्दिकायां नीचापाश्रयविनिहितैकोपवर्हायां पर्य्यङ्किकायां निपत्य जोषमस्थात् ।

देवोऽपि हर्षस्तथैव स्नात्वा धरणितलनिहितकुथाप्रसारितमूर्त्तिरदूर एवास्य तूष्णीमेव समवातिष्ठत । दृष्ट्वा दृष्ट्वा दूयमानमानसमग्रजन्मानं समस्फुटदिवास्य सहस्रधा हृदयम् । औरसदर्शनं हि यौवनं शोकस्य । लोकस्य तु नरपतिमरणदिवसादपि दारुणः स बभूव दिवसः । सर्व्वस्मिन्नेव नगरे न केनचिदपाचि न केनचित् अस्नायि नाभोजि सर्व्वत्र सर्व्वेणारोदि । केवलमनेन क्रमेणातिचक्राम दिवसः । स च प्रत्यग्रत्वष्टृटङ्कतष्टतनुरिव बहुहलरुधिररसमांसच्छविः अपरपारावारपयसि ममज्ज मञ्जिष्ठारुणोऽरुणसारथिः । मुकुलायमानकमलिनीकोषविकलं चकाण चञ्चरीककुलं कमलसरसि । सविधविरहव्याधिविधुरवधूबाध्यमानं बबन्ध बन्धाविव विद्रुमबन्धूकभासि भास्वति साश्रां दृशं चक्रवाकचक्रवालम् । सञ्चरन्त्याः समधुकररवं कैरवाकरं कलहंसरमणीरमणीयं माणिक्यकाञ्चीकिङ्किणीजालमिवाचकाश श्रियः । प्रकटकलङ्कमुदयमानं विसङ्कटविषाणोत्कीर्णपङ्कसङ्करशङ्करशङ्करशक्वरककुदकूटसङ्काशमकाशताकाशे शशाङ्कमण्डलम् ।

अस्यां च वेलायामनतिक्रमणीयवचनैरपत्यैः प्रधानसामन्तैः विज्ञाप्यमानः कथं कथमप्यभुङ्क्त। प्रभातायां च शर्वर्यां सर्वेषु प्रविष्टेषु राजसु समीपस्थितं हर्षदेवमुवाच तात भूमिरसि गुरु-नियोगानाम्। शैशव एवाख्याति गुणवत्त्वताकेव भवता तातस्य चित्तवृत्तिः। यतो भवन्तमेवंविधं विधेयं विधिविधानोपनत-नैर्घृण्यम् इदं किमपि विज्ञापयति मे हृदयम्। नावलम्बनीया बालभावसुलभा प्रेमविलोमा वामता। वैधेय इव मा कृथाः प्रत्यूहमीहितेऽस्मिन्। न खलु न जानासि लोकवृत्तम्। लोक-त्रयत्रातरि मान्धातरि वने किं कृतं पुरुकुत्सेन भूतलाविष्टा-ष्टद्वीपे दिलीपे वा रघुणा महासुरसमरमध्याध्यासितविबुध-रथे दशरथे वा रामेण गोष्पदीकृतचतुरम्बुरन्ते दुष्यन्ते वा भरतेन। तिष्ठन्तु तावदेते तातेनैव शतसमधिकाध्वरधूमनिकर-धूसरितवासववयसि [illegible]गृहीतमाज्ञि तत्रभवति परासुतां गते पितरि किं नाकारि राज्यम्। यश्च किल शोकः समभिभवति तं कापुरुषमाचक्षते शास्त्रविदः। स्त्रियो हि विषयः शुचाम्। तथापि किं करोमि स्वभावस्य सेयं कापुरुषता वा स्त्रैणं वा यदेवम् आस्पदं पितृशोकशङ्कुभग्नो जातोऽस्मि। मम हि भूभृति पञ्चत्वे निरवशेषतः प्रव्रजितानीव श्रुतान्यभूवन् अस्तमिते भवति तेजसि अन्धकारीभूतदशाशस्य प्रनष्टः प्रज्ञालोकः प्रज्वलितं हृदयम् आक्रन्दाद्भीत इव स्वप्नेऽपि नोपसर्पति विवेकः बलीयसा सन्तापेन आतपमिव विलीनमखिलं धैर्यम् पदे पदे दिग्भ्रमपातनेव हरिणी मुह्यति मतिः पुरुषद्वेषिणीव दूरत एव भ्रमन्ती परिहरति धृतिः अस्तेव तातेनैव सह गता रतिः वासुकिक-

प्रयुक्तानीव वित्तानि (२) प्रतिदिवसं वर्द्धन्ते दुःखानि शोकानलधूमसम्भारसम्भृताम्भोधरभरितमिव वर्षति नयनवारिधाराविसरं शरीरम् । सर्व्वः पञ्चजनः पञ्चत्वमुपरतः प्रयाति वितथमेतद्वदति बालो लोकः । तातो हुताशनतामेव केवलमापन्नो येनैवं दहति माम् । दृढमसाम्परायिकमिव हृदयमवष्टभ्य व्युत्थितः शोको दुर्निवारः वाड़व इव वारिराशिं पविरिव पर्व्वतं क्षय इव क्षपाकरं राहुरिव रविं दहति दारयति तनूकरोति कवलयति । न शक्नोति मे हृदयं तादृशस्य सुमेरुकल्पस्य महापुरुषस्य विनिपातमश्रुभिरेव केवलैरतिवाहयितुम् । राज्ये विष इव चकोरस्य मे विरक्तं चक्षुः । बहुक्षतपटावगुण्ठनां रक्षितरक्षां अनङ्गनानामिव वंशवाह्यामनार्य्यां श्रियं त्यक्तुमभिलषति मे मनः । क्षणमपि दग्धगृहे शकुनिरिव न पारयामि स्थातुम् । सोऽहमिच्छामि मनसि वाससीव सुलग्नं स्नेहमलमिदममलैः शिखरिशिखरप्रस्रवणस्वच्छस्रोतोऽम्बुभिः क्षालयितुमाश्रमपदे । अतस्त्वमन्तरितयौवनसुखामनभिमतामपि जरामिव पूरुराज्ञया गुरोर्म्मेहाणा मे राज्यचिन्ताम् । त्यक्तसकलबालक्रीड़ेन हरिणेव दीयतामुरो लक्ष्म्यै । परित्यक्तं मया शस्त्रम् । इत्येवमभिधाय खड्गग्राहिणो हस्तादादाय निजं निस्त्रिंशमुत्ससर्ज धरण्याम् ।

अथ तच्छ्रुत्वा निशितशिखेन शूलेनेवाहतः प्रविदीर्णहृदयो देवो हर्षः समचिन्तयत् किं नु खलु मामन्तरेण आर्य्यः केनचिद्सहिष्णुना किञ्चिद्ग्राहितः कुपितः स्यात्, उतानया दिशा परीक्षितुकामो माम् उत शोकजन्मा चेतसः समाक्षेपोऽयमस्य । आहोस्विदार्य्य एवायं न भवति किं वार्य्यस्यान्यदेवाभिहितम् अन्य-

(२) वार्द्धुषिकप्रयुक्तानि धनानीव । १ । २ ।

देशाग्रापि मया शोकशून्येन अवशेन्द्रियेण। आर्य्यस्य वा अन्यदेव विवक्षितम् अन्यदेवापतितं मुखेन। अथवा सकलवंशविनाशाय निपातनोपायोऽयं विधेः मम वा निखिलपुण्यपरिक्षयोपक्षेपः कर्म्मणाम् अननुकूलसमयप्रक्षेपक्षुद्रकालविलसितं वा। अथवा तात-विनाशनिःशङ्ककलिकालक्रीडितम् येनायं यः कश्चिदिव अकिञ्चनकारिणं माम् अपुष्पभूतिवंशसम्भूतमिव अताततनयमिव अनार्य्यानुजमिव अभक्तमिव दृष्टदोषमिव अक्षत्रियमिव सुरापाने सक्तमिव स्वामिद्रोहे सज्जनमिव नीचोपसर्पणे मुक्तलज्जमिव व्यभिचारे अतिदुष्करे कर्म्मणि समादिष्टवान्। तदेतत्तावदनुरूपं यत् शौर्य्योन्मादमदिरोन्मत्तममलामलकमण्डलसमुद्रमथनमन्दरे तादृशि पितरि वृत्ते तपोवनं वा गम्यते वल्कलानि वा गृह्यन्ते तपांसि वा सेव्यन्ते। या तु मयि राज्याज्ञा सा दग्धेऽपि दाहकारिणी मयि अपर्य्यन्तकल्पिते धन्वनीवाङ्गारवृष्टिः। तदसदृशमिदमार्य्यस्य। यद्यपि च विधुरमभिमानः द्विजातिः अनेषणः मुनिररोषणः कपिरचपलः कविरमत्सरः वणिगतस्करः प्रियजानिरकुहनः साधुरदरिद्रः द्रविणवानखलः कीनाशोऽनभिगतः मृगयुरहिंस्रः पाराशरी ब्राह्मण्यः सेवकः सुखी कितवः कृतज्ञः परिव्राडबुभुक्षुः नृशंसः प्रियवाक् अमात्यः सत्यवादी राजसूनुरदुर्विनीतश्च जगति दुर्लभः तथापि ममार्य्य एवाचार्य्यः। को हि नाम तद्विधे निपतिते राजगन्धकुञ्जरे जनयितरि दूरस्थे च विफलीकृतविन्ध्याकाशलाभमभ्युदं भूभुजि भ्रातरि त्यक्तराज्ये आयसि नववयसि तपोवनं गच्छति सकललोकलोचनजलपातापवित्रं अर्द्धात्मकं वसुधाभिधानं धनमदखेलनिखिलखलमुखविकारलक्षणाध्यायमानजीवाधरया

ओर्धंशिकां सुभटकुटुम्बकर्म्मकुम्भदासीं चण्डालोऽपि कामयेत। कथमिव सम्भावितमत्यन्तमनुचितमिदमार्य्येण। किमुपलक्षितम् अनवद्यातमिदं मयि। किं वास्य चेतस्युत: सौमित्रि: विस्मृता वा वृकोदरप्रभृतय:। अनपेक्षितभक्तजना स्वार्थैक-निष्पादननिष्ठुरा नासीदियमार्य्यस्येदृशी प्रभविष्णुता। अपिचार्य्ये तपोवनं गते जिजीविषु: को हि नाम मही मनसापि ध्यायेत्। कुलिशशिखरखरनखरप्रचयप्रचण्डचपेटापाटितमत्तमातङ्गोत्तमाङ्ग-मदच्छटाच्छुरितचारुकेसरभारभास्वरमुखे केशरिणि वनविहा-राय विनिर्गते निवासं गिरिगुहां क: पाति पृष्ठत:। प्रताप-सहाया हि सत्त्ववन्त:। कश्चपलां लक्ष्मीं प्रत्यनुरोधोऽयमार्य्यस्य यदीयमपि न चीरान्तरितकुचा कुशकुसुमसमित्पलाशपूलिकां वहन्ती तत्रैव तपोवने वनमृगीव नीयते जराजालिनी। किंवा ममानेन वृथा बहुधा विकल्पितेन तूष्णीमेवार्य्यमनुगमिष्यामि। गुरुवचनातिक्रमकृतश्च किल्विषमेतत् तपोवने तप एवापास्यति। इत्यवधार्य्य मनसा प्रथमतरं गतस्तपोवनम् अधोमुखस्तूष्णी-मवातिष्ठत।

अत्रान्तरे पूर्व्वादिष्टेनैव रुदता वस्त्रकर्म्मान्तिकेन समुप-स्थापितेषु वल्कलेषु निर्द्दयकरतलताडनभियेव क्वापि गते हृदये रटति राजस्त्रैणे हारमग्राह्यमुद्धरदोष्णि विरुदति विप्रजने पादप्रणतिपरे फूत्कुर्व्वति पौरवृन्दे विद्राति विद्रुतचेतसि चिर-न्तने परिजने परिजनावलम्बिते वेपमानवपुषि पर्य्याकुलवाससि शोकगद्गदवचसि गलितनयनपयसि निवारणोद्यतमनसि वर्षीयसि विशति बन्धुवर्गे निराशेषु नखलिखितमणिकुट्टिमेष्ववाङ्मुखेषु निश्वसत्सु सामन्तेषु सबालवृद्धासु तपोवनाय प्रस्थितासु सर्व्वासु

प्रजास्तु सहसैव प्रविश्य शोकविह्वलः प्रचरितनयनसलिलो राज्यश्रियः परिचारकः संवादको नाम प्रख्याततमो विमुक्ताक्रन्दः सहसात्मानमपातयत् ।

अथ सम्भ्रान्तो भ्राता सह स्वयं देवो राज्यवर्द्धनस्तं पर्य्यपृच्छत् भद्र कथं कथं किमन्यद्व्यसनमवसादवर्द्धनमवहूर्तिः अवनिपतिमरणमुदितमतिः अहितकरमपरमधिकतरमितः समुपनयति विधिरिति । स कथं कथमप्यकथयत् देव पिशाचानामिव नीचात्मनां चरितानि छिद्रप्रहारीणि प्रायशो भवन्ति । यतो यस्मिन्नहन्यवनिपतिरुपरत इत्यभूद्वार्त्ता तस्मिन्नेव देवो ग्रहवर्म्मा दुरात्मना मालवराजेन जीवलोकमात्मनः सुकृतेन सह त्याजितः । भर्त्तृदारिकापि राज्यश्रीः कालायसनिगडयुगलचुम्बितचरणा चौराङ्गनेव संयता कान्यकुब्जे कारायां निक्षिप्ता । किंवदन्ती च यथा किलानायकं साधनं मत्वा जिघृक्षुः सुदुर्म्मतिरेतामपि भुवमाजिगमिषति । इति विज्ञापिते प्रभुः प्रभवतीति ।

ततश्च तादृशमनुपेक्षणीयमसम्भावितमाकस्मिकमपरं व्यतिकरमाकर्ण्याश्रुतपूर्वत्वात्परिभवस्य परपरिभवासहिष्णुतया च स्वभावस्य दर्पबहुलतया च नवयौवनस्य वीरजनसम्भवत्वाच्च जन्मनः कृपाभूमिभूतायाश्च स्वसुः स्नेहात् स तादृशोऽपि बहुमतोऽप्यत्यन्तगुरुः एकपद एवास्य ननाश शोकावेगः । विवेश च सहसा केसरीव गिरिगुहागर्भं गम्भीरं हृदयं भयङ्करः कोपावेगः । केशिनिषूदनशङ्खाकुलकालियकुलभङ्गुरभ्रूभङ्गतरङ्गिणी श्यामायमाना यमुनेव प्रथीयसि ललाटपट्टे भीषणा भ्रुकुटिरुदभिद्यत । दर्पात् परामृशन् नखकिरणसलिलनिर्झरैः समरभारसम्भावनाभिषेकमिव चकार दिङ्नागकुम्भकूटविकटस्य बाहुशिखरकोशस्य वामः पाणिपल्लवः ।

सङ्कलत्स्वेदसलिलपूरितोदरो निर्मूलं मालवोन्मूलनाय गृहीतकेश इव दुर्म्मदस्त्रीकचग्रहोत्कण्ठयेव च कम्पमान: पुनरपि समुत्ससर्प भीषणां कृपाणं पाणिरपर:। शस्त्रग्रहणमुदितराजलक्ष्मीक्रियमाणादिष्टहृष्टिविधुतसिन्दूरधूलिरिव कपिल: कपोलयोरदृश्यत रोषराग:। समासन्नसकलमहीपालचूडामणिचक्राक्रमणजाताहङ्कार इव च समारुरोह वाममूरुदण्डमुत्तानितश्चरणो दक्षिण:। निष्ठुराङ्गुष्ठकषणनिष्ठ्यूतधूमलेखो निर्व्वीरोर्व्वीकरणाय विमुक्तशिख इव लिलेख मणिकुट्टिममितर: पादपद्म:। दर्पस्फुटितसरसव्रणोच्छलितरुधिरच्छटावसेकै: शोकविषप्रसुप्तं प्रबोधयन्निव पराक्रमम् अनुजमवादीत् आयुष्मन् इदं राजकुलम् अमी बान्धवा: परिजनोऽयम् इयं भूमि: भूपतिभुजपरिघपालिताश्चैता: प्रजा: गतोऽहमद्यैव मालवराजकुलप्रलयाय। इदमेव तावत् वल्कलग्रहणम् इदमेव तप: शोकापगमोपायश्चायमेव यदत्यन्ताविनीतारिनिग्रह:। सोऽयं कुरङ्गकै: कचग्रह: केशरिण: भेकै: करपात: कालसर्पस्य वत्सकैर्ब्बन्दिग्रहो व्याघ्रस्य अलगर्द्दैर्गलग्रहो गरुड़स्य दारुभि: दाहादेशो दहनस्य तिमिरैस्तिरस्कारो रवे: यो मालवै: परिभव: पुष्पभूतिवंशस्य। अन्तरितस्तापो मे महीयसा मन्युना। तिष्ठन्तु सर्व्व एव राजान: करिणश्च त्वयैव सार्द्धम्। अयमेको भण्डिरयुतमात्रेण तुरङ्गमाणामनुयातु माम्। इत्यभिधाय चानन्तरमेव प्रयाणपटहमादिदेश।

तच्च तथा समादिशन्तमाकर्ण्य जामिजामातृहत्तान्तविज्ञानप्रकोपाधानदूयमाने मनसि निवर्त्तनादेशेन दूरप्ररूढ़प्रणयपीड़ इव प्रोवाच देवो हर्ष: कमिव दोषं पश्यत्यार्य्यो ममानुगमनेन। यदि बाल इति नितरां तर्हि न त्याज्योऽस्मि रक्षणीय इति भवद्-

भुजपञ्जरं रक्षास्थानम् अशक्त इति च परीक्षितोऽस्मि संवर्द्धनीय इति वियोगसहमूकरोति अक्लेशसह इति क्षीणपक्षे निक्षिप्तोऽस्मि सुखमनुभवत्विति त्वय्येव सह तत्प्रयाति महानध्वनः क्लेश इति विरहोऽविषह्यतरः कलत्रं रक्षत्विति श्रीस्ते निष्कम्पाऽधिवसति पृष्ठतस्तिष्ठत्विति तिष्ठत्येवं प्रतापः राजकमनधिष्ठितमिति तत् सुबद्धमार्य्यगुणैः न बाल्यः सहायो महत इति व्यतिरिक्तमिव मां गणयति प्रलघुपरिकरः प्रयामीति पादरजसि कोऽतिभारः द्वयोः गमनमसाम्प्रतमिति मामनुगृहाण गमनाज्ञया कातरो भ्रातृस्नेह इति सदृशो दोषः। का चेयमात्मम्भरिता भुजस्य ते यदेकाकी क्षीरोदफेनपटलपाण्डुरमखण्डितमिव यशः पिपासति। अवस्थितपूर्व्वोऽस्मि प्रसादेषु। तत्प्रसीदत्वार्य्यः नयतु मामपि इत्यभिधाय क्षितितलविनिहितमौलिः पादयोरपतत्।

तमुत्थाप्य पुनरग्रजो जगाद तात किमेवमतिमहारम्भपरिग्रहेण गरिमाणमारोप्यते बलादतिलघीयानप्यहितः। हरिणार्थमतिकृपणः सिंहसम्भारः। तृणानामुपरि कति कवचयन्त्याशुशुक्षणयः। अपिच तवाष्टादशद्वीपाष्टमङ्गलकमालिनी मेदिनी अस्त्येव विक्रमस्य विषयः। नहि कुलशैलनिपातपाटिनो वायवः सन्नह्यन्त्यतितरले तूलराशौ। न सुमेरुवप्रप्रणयप्रगल्भा वा दिक्करिणः परिणमन्त्यणीयसि वल्मीके। ग्रहीष्यसि सकलद्वीपपति-प्रलयोत्पातमहाधूमकेतुं मान्धातेव चापचामीकरपत्रलताङ्कारा-ङ्कार्यं कार्मुकं ककुभां विजये। मम तु दुर्निवारायामस्यां विपक्षक्षपणक्षुधि क्षुभितायां क्षम्यतामयमेकाकिनः कोपकवल एकः। तिष्ठतु भवान्। इत्यभिधाय च तस्मिन्नेव वासरे निर्जगामाभ्यमित्रम्।

अथ तथागते भ्रातरि उपरते च पितरि प्रोषितजीविते च जामातरि मृतायाञ्च मातरि संयतायाञ्च स्वसरि स्वयूथभ्रष्ट इव वन्यः करी देवो हर्षः कथं कथमप्येकाकी कालं तमनैषीत्। अतिक्रान्तेषु बहुषु वासरेषु कदाचित् तथैव भ्रातृगमनदुःखासिकया दत्तप्रजागरः त्रिभागशेषायां त्रियामायां यामिकेन गीयमानामिमामार्य्यां शुश्राव

द्वीपोपगीतगुणमपि समुपार्जितरत्नराशिसारमपि।
पोतं पवन इव विधिः पुरुषमकाण्डे निपातयति॥

ताञ्च श्रुत्वा सुतरामनित्यताभावनया दूयमानहृदयः प्रक्षीणभूयिष्ठायां क्षपाया क्षणमिव निद्रामलभत स्वप्ने चाभ्रंलिहं लोहस्तम्भं भज्यमानमपश्यत्। उत्कम्पमानहृदयश्च पुनः प्रत्यबुध्यत अचिन्तयच्च किं नु खलु मामेवममी सततमनुबध्नन्ति दुःस्वप्नाः। स्फुरति च दिवानिशमकल्याणाख्यानविचक्षणमदक्षिणमक्षि। सुदारुणाश्चाशुभक्षितिपक्षयमाचक्षाणाः क्षणमपि न शाम्यन्ति पुनरुत्पाताः। प्रत्यहं राहुरविकलकायबन्ध इव कबन्धवति व्रध्नविम्बे घटमानो विभाव्यते। तपःकरणकालकवलितानिव धूसरितसमग्रग्रहानुद्गिरन्ति धूमोद्गारान् सप्तर्षयः। दिने दिने दारुणा दिशां दाहा दृश्यन्ते। दिग्दाहभस्मकणनिकर इव निपतति नभस्तलात्तारागणः। तारापातशुचेव निष्प्रभः शशी। निशि निशि इतस्ततः प्रज्वलिताभिरुल्काभिरुग्रं ग्रहयुद्धमिव वियति विलोकयन्ति विलोलतारकाः ककुभः। राज्यसञ्चारसूचकः सञ्चारयतीव क्ष्मां क्वापि बहलहलरजःपटलकलिलशर्कराशकलसूत्कारी मारुतः। न कुशलमिव पश्यामि लग्नस्य। अक्षिण्णशस्त्रहंशे करिण इव करीरं कोमलमपि कलयतः कृतान्तस्य कः परिपन्थी।

सर्व्वथा स्वस्ति भवत्वार्य्याय । इति चिन्तयित्वा च अन्तर्भिन्न-भ्रातृस्नेहकातरं द्रवदिव हृदयं कथं कथमपि संस्तभ्य तत्काल-यथाक्रियमाणं क्रियाकलापमकरोत् ।

आस्थानगतश्च सहसैव प्रविशन्तम् अनुप्रविशता विषण्ण-वदनेन लोकेनानुगम्यमानम् असह्यदुःखोष्णनिश्वासधूमरक्तमलिनेनेव मलिनेन पटेन प्रावृतवपुषं जीवितधारणलज्जयेवावनत-मुखं नासावंशस्याग्रे ग्रथितदृष्टिं दुःखदूरप्ररूढरोम्णा अङ्गेनापि मुखेन स्वामिव्यसनमविच्छिन्नैरश्रुबिन्दुभिर्विज्ञापयन्तं कुन्तलं नाम बृहदश्ववारं राज्यवर्द्धनस्य प्रसादभूमिमभिमततमं ददर्श । दृष्ट्वा च जाताशङ्कः अन्तरपि सलिलेन मुखशायिनि श्वसितेन हृदये कृताग्रेण उत्सङ्गे भूत्वा दारुणाप्रियश्रवणसमये सममिव सर्व्वेष्वङ्गेषु अस्पृश्यत लोकपालैः । तस्मात् हेलानिर्जितमालवा-नीकमपि गौडाधिपेन मिथ्योपचारोपचितविश्वासं मुक्तशस्त्रम् एकाकिनं विस्रब्धं स्वभवन एव भ्रातरं व्यापादितमश्रौषीत् ।

श्रुत्वा च महातेजस्वी प्रचण्डकोपपावकप्रसरपरिपीयमान-शोकावेगः सहसैव प्रजज्वाल । ततश्चामर्षविधुतशिरःशीर्य्यमाण-शिखामणिशकलाङ्गारकितमिव रोषाग्निमुद्वमन् अनवरतस्फुरि-तेन पिबन्निव सर्व्वतेजस्विनामायूंषि रोषनिर्भुग्नेन दशन-च्छदेन लोहितायमानलोचनालोकविक्षेपैर्दिग्दाहानिव दर्शयन् रोषानलेनाप्यसह्यसहजशौर्य्योष्मदहनदह्यमानेनेव वितन्यमान-स्वेदसलिलशीकरासारदुर्द्दिनः स्वावयवैरप्यदृष्टपूर्व्वप्रकोपभीतैरिव कम्पमानैरुपेतः हर इव कृतभैरवाकारः हरिरिव प्रकटितनर-सिंहरूपः सूर्य्यकान्तशैल इव अपरतेजःप्रसरदर्शनप्रज्वलितः क्षयदिवस इवोदितद्वादशदिनकरदुर्निरीक्ष्यमूर्त्तिः महोत्पातमारुत

इव सकलभूभृत्कम्पकारी विन्ध्य इव विवर्द्धमानविग्रहोत्सेधः महाशीविष इव दुर्नरेन्द्राभिभवरोषितः पारीक्षित इव सर्व्वभोगि-दहनोद्यतः वृकोदर इव रिपुरुधिरतृषितः सुरगज इव प्रति-पक्षवारणप्रधावितः पूर्व्वागम इव पौरुषस्य उन्माद इव मदस्य आवेग इवावलेपस्य तारुण्यावतार इव तेजसः सर्व्वोद्योग इव दर्पस्य युगागम इव यौवनोष्मणः राज्याभिषेक इव रणरसस्य नीराजनदिवस इवासहिष्णुतायाः परां भीषणतामयासीत्

अवादीच्च गौड़ाधिपमपहाय कस्तादृशं महापुरुषं तत्क्षण एव निर्व्याजभुजवीर्य्यनिर्ज्जितसमस्तराजकं मुक्तशस्त्रं कलसयोनिमिव लक्षणवर्ज्जप्रसूतिः ईदृशेन सर्व्वलोकविगर्हितेन मृत्युना शमयेदार्य्यम्। अनार्य्यञ्च तं मुक्त्वा भागीरथीफेनपटलपाण्डुराः केषां मनःसु सरःसु राजहंसा इव परशुरामपराक्रमस्मृतिहृतो न कुर्य्युरार्य्य-शौर्य्यगुणाः पक्षपातम्। कथमिवास्यग्रस्यास्य आर्य्यजीवितहरणे निदाघरवेरिव कमलाकरसलिलशोषणेऽनपेक्षितप्रीतयः प्रवृत्ताः कराः। कां नु गतिं गमिष्यति कां वा योनिं प्रवेक्ष्यति कस्मिन् वा नरके निपतिष्यति। श्वपाकोऽपि क इदम् आचरेत्। नामापि गृह्णतोऽस्य पापकारिणः पापमलेन लिप्यत इव मे जिह्वा। किं वाङ्गीकृत्य कार्य्यम् आर्य्यलेन क्षुद्रेणानुप्रविश्य विगतघृणेन घुणेनेव सकलभुवनाह्लादनचतुरचन्दनस्तम्भः क्षयमुपनीतः। नूनं मानेन मूढेन मधुरसास्वादलुब्धेन मक्षिकार्य्यजीवितमाकर्षता भावी दृष्टः शिलीमुखसम्पातोपद्रवः। निजस्नेहदूषणं ज्ञानमार्गप्रदीपकेन कज्जलमिवातिमलिनं केवलमयशः सञ्चितं गौड़ाधमेन। मन्ताक्षेव अस्तमुपगतवत्यपि त्रिभुवनचूड़ामणौ सवितरि वेधसादिष्टः सत्पथ-प्रमोरन्धकारस्य निग्रहाय ग्रहपङ्क्तिविहारैकहरिणाधिपः शशी।

विनयविधायिनि भग्नेऽपि चाङ्कुशे विप्लुत एव लोकवारणस्य विनयाय सकलसमस्तमातङ्गकुम्भस्थलस्थिरशिरोभागभिदुरः खरतरः केसरिनखरः। तादृशाः कुवैकटिका इव तेजस्विरत्नविनाशकाः कस्य न वध्याः। क्वेदानीं यास्यति दुर्बुद्धिः।

इत्येतदभिदधत एवास्य पितुरपि मित्रं सेनापतिः समरविग्रहप्राग्रहरो हरितालशैलावदातदेहः परिणतप्रगुणशालप्रकाण्डप्रकाशः प्रांशुरतिगौरो गौरवेणेव परिपाकमागतो गतभूयिष्ठे वयसि वर्त्तमानो बहुशरशयनसुप्तोत्थितोऽपि भीष्ममिव शान्तनवम् अतिदीर्घेणायुषा दुरभिभवशरीरतया जरयापि भीतभीतयेव प्रकटितप्रकम्पया पराधृष्टः कथमपि सारमयेषु शिरोरुहेषु शशिकरनिकरसितसरलशिरोरुहसटालां सैंहीमिव निष्कपटपराक्रमरसरचितां संक्रान्तो जीवन्नेव जातिम् अपरस्वामिमुखदर्शनमहापातकपरिजिहीर्षयेव भ्रूयुगलेन वलितशिथिलप्रलम्बचर्म्मणा स्थगितदृष्टिः धवलस्थूलगुम्फापिच्छप्रच्छादितकपोलभागभास्वरेण यमस्येव विक्रमकालमकालेऽपि विकाशिकाशकाननविशदं शरदारम्भं भीमेन मुखेन वहन्नपि हृदयस्थितं स्वामिनमिव सितचामरेण वीजयन् नाभिलम्बेन कूर्चकलापेन परिणामेऽपि धौतासिधाराजलपानतृषितैरिव विवृतवदनैर्व्रणविवरैः विषमितविशालवक्षाः निशितशस्त्रटङ्ककोटिकुट्टितवक्षस्थलोपलाक्षरपङ्क्तिनिरन्तरतया च सकलसमरविजयपर्व्वगणनामिव कुर्व्वन् पूर्व्वपर्व्वत इव पादचारी विविधवीररसकथान्तरामृतजीवकेन महाभारतमपि लघयन्निव प्रतिपक्षक्षपणातिनिर्बन्धेन परशुराममपि शिक्षयन्निव अभ्युत्थानेनानादरमौनमाचर्य्यविभ्रमेण मन्दरमपि मन्दयन्निव वाहिनीनायकमर्य्यादानुवर्त्तनेनाम्भोधिमप्यभिभवन्निव

स्थैर्य्यकार्कश्येनद्रिभिरचलानपि क्षेपयन्निव सहजप्रचण्डतेजःप्रसर परिस्फुरणेन सवितारमपि तृणीकुर्व्वन्निव दुर्व्वहरभारोद्वहनघृष्ट-पृष्ठतया हरवृषभमपि हसन्निव अरणिरमर्षाग्नेः ऐश्वर्य्यं शौर्य्यस्य मदो मदस्य विसर्पो दर्पस्य हृदयं हठस्य जीवितं जिगीषुतायाः उच्छ्वसितमुत्साहस्य अङ्कुशो दुर्म्मदानां नागदमनो दुष्टभोगिनां विरामो वरमनुष्यतायाः कुलगुरुर्व्वीरगोष्ठीनां तुला शौर्य्यशालिनां सीमान्तदृश्वा शस्त्रग्रामस्य निर्व्वोढ़ा प्रौढ़वादानां संस्तम्भयिता भग्नानां पारगः प्रतिज्ञायाः मर्म्मज्ञो महाविग्रहाणाम् आघोषणा-पटहः समराथिना सन्निधावेव समुपविष्टः सिंहनादनामा स्वरेणैव दुन्दुभिघोषगम्भीरेण सुभटानां समररसमानयन् विज्ञापितवान्

देव न क्वचित् कृताश्रयया मलिनया मलिनतराः कोकिलया काका इव कापुरुषा हतलक्ष्म्या विप्रलभ्यमानमात्मानं न चेतयन्ते। श्रियो हि दोषान्धतादयः कामला विकाराः। छत्त्रच्छायान्तरित-रवयो विस्मरन्त्यन्यं तेजस्विनं जड़धियः। किं वा करोतु वराकः येनातिभीरुतया नित्यपराङ्मुखेन न तु दृष्टान्येव सर्व्वातिशायि-शौर्य्यातिशयश्वयथुकम्पितकपोलपुलकपल्लवितकोपानलानि कुपि-तानां तेजस्विना मुखानि। नासौ तपस्वी जानात्येवं यथाभिचारा इव विप्रकृताः सद्यः सकलकुलप्रलयमुपहरन्ति मनस्विनः। जलेऽपि ज्वलन्ति ताड़िताास्तेजस्विनः। सकलवीरगोष्ठीवाह्यस्य तस्यैवेदम् उचितमनुत्तारनिरयनिपातनिपुणं कर्म्म। मनस्विनां हि प्रधन-प्रधानधने धनुषि ध्रियमाणे सति च कमलाकलहंसीकेलिकुवलय-कानने कृपाणे कृपणोपायाः पयोधिमथनप्रभृतयोऽपि श्रीसमुत्था-नस्य किं पुनरीदृशाः। येषाञ्च धाता धरित्रीं त्रातुं नियुक्ताः स्वयम-समर्था इव कुलिशकर्कशभुजपरिघप्रहरणहेतोरवन्निरन्ति गिरयोऽपि

लोहानि ते कथमिव शङ्कशालिनो मनसापि विमलयशोबान्धवा ध्यायेयुरकार्य्यम्। सर्व्वग्रहाभिभवभास्वराणां हि सुभटकराणाम् अग्रतो दिग्ग्रहणे पल्लवः पतङ्गकराः। महामहिषमहत्तरशृङ्गभङ्ग-भङ्गुरभीषणान्तराला लोकप्रवादमात्रेण दक्षिणाशा परमार्थतो भटभ्रुकुटिरधिवासो यमस्य। पिबन्ति यदुन्मुक्तसिंहनादानां सहसा साहङ्कारसरोमाञ्चकण्टकनिकरेण सह न निर्व्वान्ति भटाः शूराणां रणेषु। इयमेव च चतुःसागरसम्भृतस्य भूतिसम्भारस्य भाजनं प्रतिपक्षदाहि दारुणं वडवामुखं वा महापुरुषहृदयं वा। तेजस्विनः सकलाननवाप्य पयोराशिमक्रमजस्य कुतो निर्वृतिः उष्मणः। वृथाविततविपुलफणाभारो भुजङ्गानां भर्त्ता बिभर्त्ति यो भोगेन क्षितिखण्डमेव केवलम्। अप्रतिहतशासनाकाम्युपभोगसुखरसन्तु रसाया दिक्कुञ्जरकरभारभास्वरप्रकोष्ठा वीरबाहव एव जानन्ति। रविरिवानुगुणपद्माकरगृहीतपादपल्लवः सुखेना-क्लिष्टतेजा दिवसान्नयति शूरः। कातरस्य तु शशिन इव हरिणहृदयस्य पाण्डुरपृष्ठस्य कुतो हिरात्नमपि निश्चला लक्ष्मीः। अपरिमितयशःप्रकरवर्षी विक्रमो वीररसः। पुरःप्रवृत्तप्रताप प्रहताः पन्थानः पौरुषस्य। शार्द्दविद्रुतार्हयन्ति भवन्ति द्वाराणि दर्पस्य। खड्गालोकप्रकाशिताः शून्या दिशः शौर्य्यस्य। रिपुरुधिर-शीकरासारेण भूरिव श्रीरप्यनुरज्यते। बलवन्नरपतिमकुटमणि-शिलाशाणकोणकषणेन चरणनखराजिरिव राजताप्युज्ज्वली-भवति। अनवरतशस्त्राभ्यासेन करतलानीव रिपुमुखानि श्यामी-भवन्ति। विविधव्रणबन्धपट्टकशतैः शरीरमिव यशोऽपि धवली-भवति। कवचिषु रिपूरःकवाटेषु पात्यमानाः पावकशिखामिव श्रियमपि वमन्ति निष्ठुरा निस्त्रिंशप्रहाराः। यथाश्रुततत्त्वज्ञानां

मनस्विजनो द्विषद्योषिदुरस्ताड़नेन कथयति हृदयदुःखम् पत्रशासि-लतानिपातपवनेनोच्छ्वसिति निरुच्छ्वसितशत्रुशरीरास्रधारा-पातेन रोदिति विपन्नवनिताचक्षुषा ददाति जलं स श्रेयान् नेतरः। न च स्वप्नदृष्टनष्टेष्विव क्षणिकेषु शरीरेषु निबध्नन्ति बन्धुबुद्धिं प्रबुद्धाः। स्थायिनि यशसि शरीरधीर्वीराणाम्। अनवरतप्रज्वलिततेजःप्रसरभास्वरस्वभावस्य मणिप्रदीपमिव कलुषः कज्जलमलो न स्पृशत्येव तेजस्विनं शोकः। स त्वं सत्त्ववताम् अग्रणीः प्राग्रहरः प्राज्ञानां प्रथमः समर्थानां प्रष्ठोऽभिजातानाम् अग्रेसरस्तेजस्विनाम् आदिरसहिष्णूनाम्। एताश्च सततसन्निहित-धूमायमानकोपाग्नयः सुलभासिधारातोयतृष्णयो विकटबाहुवन-च्छायोपगूढा धीरताया निवासशिशिरभूमयः स्वायत्ताः सुभ-टानामुरःकवाटभित्तयः। यतः किं गौड़ाधिपेनैकेन तथा कुरु यथा नान्योऽपि कश्चिदाचरत्येवं भूयः। सर्व्वोर्व्वीश्वराकामुकानाम् अलीकविजिगीषूणां सञ्चारय चामराण्यन्तःपुरपुरन्ध्रिनिश्वसितैः। उच्छिन्धि रुधिरगन्धान्धगृध्रमण्डलच्छादनैश्छत्रच्छायाव्यसनानि। अपाकुरु कटुष्णशोणितोदकस्वेदैः कुलक्ष्मीकुलटाकटाक्षचक्षूराग-रोगान्। उपशमय निशितशरशिरावेधैरकार्य्यशौर्य्यश्वयथून्। उन्मूलय लोहनिगड़ापीड़मालामलमहौषधैः पादपीठदोहदडु-र्ललितपादपटुमान्द्यानि। क्षपय तीक्ष्णाङ्कुशक्षारपातैर्जयशब्द-श्रवणकर्णकण्डूः। अपनय चरणनखमरीचिचन्दनचर्च्चाललाट-लेपैरनमितस्तिमितमस्तकस्तम्भविकारान्। उद्धर करदानसन्देश-सन्दंशैर्द्रविणदर्पोष्मायमाणदुःशीललीलाशल्यानि। भिन्धि मणि-पादपीठदीधितिप्रदीपिकाभिः शुष्कसुभटाटोपभ्रुकुटिबन्धान्ध-कारान्। अव चरणलङ्घनलाघवगलितशिरोगौरवारोग्यैर्मिथ्याभि-

मानमहागुरुविनिपातात्। अद्य सततमेवाञ्जलिमुकुलितकरसम्पुटो-ऽभिलिख्यस्व गुणकिणकाङ्कानि। येनैव ते गतः पिता पितामहः प्रपितामहो वा तेनैव मा हासीस्त्रिभुवनस्पृहणीयं पन्थानम्। अपहाय कुपुरुषोचिता शुचं प्रतिपद्यस्व कुलक्रमागतां केसरीव कुरङ्गीं राजलक्ष्मीम्। देवं देवभूयं गते नरेन्द्रे दुष्टगौडभुजङ्ग-जग्धजीविते च राज्यवर्द्धने वृत्तेऽस्मिन् महाप्रलये धरणी-धारणायाधुना त्वं शेषः। समाश्वासय अशरणाः प्रजाः। श्वापतीनां शिरस्सु शरत्सवितेव ललाटन्तपान् प्रयच्छ पाद-न्यासान्। अचिरतानामभिनवसेवादीक्षादुःखसन्तप्तश्वासधूम-मण्डलैर्मलिनैः प्रचलितचूडामणिचक्रवालबालातपैश्च आयाति कल्याणपादताम्। अपि च हते पितर्येकाकी तपस्वी भार्गः सह संवर्द्धितः सहजन्माभ्युदयमाहवकुमारमनाः हतनिश्चयचण्ड-चापवनाटनिटङ्कारनादनिर्भर्त्सितदिग्गजं गुणज्याजाल-जनितजगज्ज्वरं समरमुद्यतमेकविंशतिकृत्वः क्षत्रवंशमुत्खातवान् राजन्यकं परशुरामः किं पुनर्नैसर्गिककार्यकार्कश्यकलितायमान-मानसो मानिनां मूर्द्धन्यो देवः। तदद्यैव कृतप्रतिज्ञो दुष्टाश्व गौडाधमजीवितप्रशान्तये जीवितसङ्कुलनाकुलकालाकालदण्ड-यात्राभिषेकध्वजं धनुः। नष्टायमरातिरक्तचन्दनचर्चाशिशिरोप-चारमन्तरेण शाम्यति परिभवानलपच्यमानदेहस्य देवस्य दुःख-दाहज्वरः सुदारुणः। निकारसन्तापशान्त्युपायपरिचये चि-च्छिदिषांशुजनास्वादितमिव रिपुरुधिराचमनमन्तरोपायमपायि पवनाश्मनेन। आमरणेन च शाम्यन्त्यनुशिखिशिखासंस्पर्शरुचाव मानसान्यशीतलेषु अभिषवगतजलदेष्वपि। इत्युक्त्वा व्यरंसीत्।

देवस्तु एवं तं प्रत्यवादीत् करणीयमेवेदमभिहितं मान्येन।

इतरथा हि मे गृहीतभुवि भोगिनाथेऽपि दायादृष्टिरीर्ष्यालोः भुजस्य। उपरि गच्छतीच्छति निग्रहाय ग्रहगणेऽपि भ्रूलता चलितुम्। अनमत्सु शैलेष्वपि कचग्रहमभिलषति दातुं करः। तेजोदुर्विदग्धानर्ककरानपि चामराणि ग्राहयितुमीहते हृदयम्। राजशब्दरुषा मृगराजानामपि शिरांसि वाञ्छति पादः पादपीठीकर्त्तुम्। स्वच्छन्दलोकपालस्वेच्छागृहीतानामाक्षेपादेशाय दिशाम् अपि स्फुरत्यधरः, किं पुनरीदृशे दुर्जाते जाते जातामर्षनिर्भरे च मनसि नास्त्येवावकाशः शोकक्रियाकरणस्य। अपिच हृदयविषमशल्ये सुसल्ये जीवति जाल्मे जगद्विगर्हिते गौडाधिपाधमचण्डाले जिह्रेमि शुष्काधरपुटः पोटेव प्रतिकारशून्यं शुचा सूत्कर्त्तुम्। अक्षतरिपुबलाबलाविलोललोचनोदकदुर्दिनस्य मे कुतः करयुगलस्य जलाञ्जलिदानम्। अदृष्टगौडाधमचिताधूममण्डलस्य वा चक्षुषः स्वल्पमप्यश्रुसलिलम्। श्रूयतां मे प्रतिज्ञा शपामि आर्य्यस्यैव पादपांशुस्पर्शेन यदि परिगणितैरेव वासरैः सकलचापचापलदुर्ललितनरपतिचरणरणरणायमाननिगडां निर्गौडां न करोमि मेदिनीं ततस्तनूनपाति पीतसर्पिषि पतङ्ग इव पातकी पातयाम्यात्मानम्। इत्युक्त्वा च महासन्धिविग्रहाधिकृतमवन्तिमन्तिकस्थमादिदेश लिख्यताम् आ रविरथचक्रचीत्कारचकितचारणमिथुनमुक्तसानोरुदयाचलात् आ त्रिकूटकटककुट्टाकटङ्कलिखितकाकुत्स्थलङ्कालुण्ठनव्यतिकरात् सुवेलात् आ वारुणीमदस्खलितवरुणवरनारीनूपुररवमुखरकुहरकुक्षेरस्तगिरेः आ गुह्यकगेहिनीपरिमलसुगन्धिगन्धपाषाणवासितगुहागृहाच्च गन्धमादनात् सर्व्वेषां राज्ञां सज्जीक्रियन्तां कराः करदानाय शस्त्रग्रहणाय वा गृह्यन्तां दिशश्चामराणि वा नमन्तु शिरांसि धनूंषि वा कर्णपूरी-

क्रियन्तामाज्ञा मौर्व्यो वा खेचरीभवन्तु पादरजांसि शिरःस्वपि वा घटन्तामञ्जलयः करिघटाबन्धा वा मुच्यन्तां भूमय इयो वा समारोप्यन्तां वेत्रयष्टयः कुन्तयष्टयो वा सहस्रः क्रियतामाज्ञा मन्त्रस्थानेषु लपापदर्पणेषु वा। परागतोऽहम्। पङ्कोरिव मे कुतो निष्पत्तिस्तावत् यावच्च सर्वः सर्वद्वीपान्तरसञ्चारी सकलनरपति-मुकुटमणिशिलालोकमयः पादलेपः। इति कृतनिश्चयश्च मुक्ता-स्थानो विसर्जितराजलोकः स्नानारम्भाकाङ्क्षी सभामत्याक्षीत्। उत्थाय च स्वस्थवनिःश्रेषमाह्निकमकार्षीत्। अगलच्च दर्पमसर-इव श्रुतप्रतिज्ञस्य शाम्यदुग्रा दिवसश्रीभुवनस्य।

ततश्च निजाधिकारापहारभीत इव भगवत्यपि क्वापि गते गततेजस्यहिमभासि तामरसवनेष्वपि निगूढशिलीमुखाकोशेषु त्रासादिव सङ्कुचत्सु विहगगणेष्वपि समुपसंहृतनिजपक्षविक्षेप-निश्चलेषु श्रियेवाप्रकटीभवत्सु भुवनव्यापिनीं सन्ध्यां प्रतिपत्तिमिव मानयति नतशिरसि घटिताञ्जलिबन्धे जने सकले सपदद्युति-चकितदिक्पालदीयमानार्घ्येष्विव लोकप्राकारवलयाश्रिय ककुभ-तिमिरमालातिरोधीयमानासु दिक्षु प्रदोषास्थाने नातिचिरं तस्थौ। नभस्तूपलोकलोलांशुकपवनकम्पितशिखैर्दीपिकाचक्रवालैः अपि प्रज्वल्यमान इव प्राज्वलीयोलोकम् प्रतिबिम्बपरिजनप्रवेशश्च शयनगृहं प्राविशत्। उत्तानश्च सुमोचाङ्गानि शयनतले। दीप-द्वितीयश्च तमभिसर इव सन्ध्यावसरसा व्याहतो बभाव। जीवन्तमिव हृदये निमीलितलोचनो हर्षोऽभजम्। उपर्युपरि आत्मजीवितान्वेषिण इव प्रसस्रुः श्वासाः। पवनांशुकपटान्तेनेव चाञ्जनलवेन मुखमाच्छाद्य निःशब्दमतिचिरं रुरोद चचार च चेतसि कथं नाम चाक्रतेनाहत्या कृतः परिणामोऽस्मीहृदः। स्नु-

शिलासङ्घातकर्कशकायबन्धशातादचलादिव लोहधातुः कठिनतर आसीदार्य्यः। कथञ्चास्य मे हतहृदयस्यार्य्यविरहे सकृदपि युक्तम् उच्छ्वसितुम्। इयं सा प्रीतिर्भक्तिरनुवृत्तिर्वा। बालिशोऽपि कः सम्भावयेदार्य्यमरणे मज्जीवितम्। तस्याहमार्य्यमेकमेकपद एव क्वापि गतम्। अयत्नेनैव हतविधिना पृथक्कृतोऽस्मि। दग्धरोमान्तरित-शुचा सुचिरं रुदितमपि न मुक्तकण्ठं गतघृणेन मया। सर्व्वथा लूतातन्तुच्छटाच्छिद्रुरास्तुच्छाः प्रीतयः प्राणिनाम्। लोकयात्रा-मात्रनिबन्धना बान्धवता यतोऽहमपि नाम परं इवार्य्ये स्वर्गस्थे स्वस्थ इवासे। किञ्च दैवहतकेन फलमासादितमीदृशि परस्परप्रीति-बन्धनिर्वृतहृदये सुखभाजि भ्रातृमिथुने विघटिते। तथा चन्द्रमया इव जगदाह्लादिनो लोकान्तरीभूतस्य लग्नचिताग्नय इवार्य्यस्य त एव दहन्ति गुणाः। इत्येतानि चान्यानि च हृदयेन पर्य्यदेवत। प्रभातायाञ्च शर्व्वर्य्यां प्रातरेव प्रतीहारमादिश्य अशेषगजसाधनाधिकृतं स्कन्दगुप्तं द्रष्टुमिच्छामीति।

अथ युगपत् प्रधावितबहुपुरुषपरम्पराहूयमानः स्वमन्दिरात् अप्रतिपालितकरेणुश्चरणाभ्यामेव सम्भ्रान्तः ससम्भ्रमैर्दण्डिभिः उत्सार्य्यमाणजनपदः पदे पदे प्रणमतः प्रतिदिशमिभभिषग्वरान् वरवारणानां विभावरीवार्त्ताः पृच्छन् उच्छ्रितशिखिपिच्छलाञ्छित-वंशलतावनगहनमटवीतदिगाभोगैर्भिन्नबन्धनैरिव वारणबन्धविमर्द्दो-द्योगागतैः पुरःप्रधावद्भिरनावतमक्षदैरारोहणगणैश्च मरकत-हरितघासमुष्टीश्च दर्शयद्भिर्नवप्रश्नमवसरं प्रार्थयमानैश्च सर्वाभि-मतमतमातङ्गसुहितमानसैश्च कटूरकुञ्जरकथ वमस्यद्भिराक्षीबमातङ्ग-मदामर्षांश्च निवेदयद्भिः डिण्डिमाधिरोहणाय च विज्ञापयद्भिः प्रमादस्खलितापराधापहृतहिरण्डुःखातदीर्घबन्धुर्विरमतो गच्छद्भिः

अविनयोपहतैश्च कर्पटिभिर्वारबाणिलुण्ठनव्यग्रैश्च धावमानैः
गण्डिकाधिकारिभिश्चैश्चिरव्यग्रान्तरैर्वाञ्छितकरैः कर्णं स्वकरैश्चुका-
संकथनाकुलैर्वाहितसितपक्षपक्षिभिरक्षपालपङ्क्तिभिश्च निष्का-
शितनवग्रहणानभिवन्दनिवेदनोद्धताभिव्यक्तितत्तलोलवनाधिमर्दना-
मानयेटकैश्च प्रकटितकारिकर्णचर्मपुटैरभिनवगजसाधनसहस्र-
वार्तानिवेदनविसर्जितैश्च नागवनवीथीपालदूतवृन्दैः प्रतिदिनमपूर्व-
वेष्टितकरिकवलकूटैः कटभङ्गसंघट्टं ग्रामनगरनिगमेषु निवेदयमानैः
कटककदम्बकैः क्रियमाणकोलाहलः स्वामिप्रसादसम्भूतेन मदाधि-
काराविष्कारेण स्वाभाविकेन चावष्टम्भाभोगेनोदासीनोऽप्यादिम-
मिव असङ्कारकरिकर्णशङ्खसम्पत्सम्पादनाय समुद्रानाप्रपर्वणिव
शृङ्गारगैरिकपङ्काङ्गरागसंपादनाय गिरीन् सुधामिव दिग्गजा-
धिकारं ककुभामैरावतमिवापहरन् चरणैरुपदमसमभिनवकैलास-
गिरिगुरुभिः पादन्यासैर्गुरुभारभग्नभुजगमूर्धाः संचरन्निव गतिवश-
विलोलस्य कृष्णागुरुलम्बस्य गाढवक्षःस्थलस्य विक्षेपैराशानामशिला-
स्तम्भमालामिवोद्भवतो निघ्नन् दूरमुत्कृष्टकर्णमाधवरविम्बनापन-
रससादुना नवपल्लवकोमलेन वमनेनेव शीकरैश्चुका पिबोभवन्
निकुञ्जपर्यङ्कशायीवं नासावंशं दधानः अतिस्निग्धमधुरमन्दविलास-
तया पीतक्षीरोदेनेव पिबन्नीलवपुष्मायामेन हिमाचलायामम्
मेरुतटादपि विकटविपुलाभोगः सततमविच्छिन्नमदजलस्रावा-
प्रकृतिवर्णादिव नितान्तावदातनीलकोमलवर्णविलक्षणेन स्वभावसमु-
द्रेण कुन्तलकलापमञ्जरीवेल्लितविलासिना कुम्भभित्तिव कुम्भाभोगमवं-
करान् कण्ठेनैव परिपक्वपरिणतपरित्यक्तकार्मुककर्णापि सकल
हिमवत्कूटमाकारगुरुगुणभूमिः आजन्मसमरसमयसमावर्जितोऽपि
अपटो महेन भूतिमानपि लोकमयः पार्थिवोऽपि गुणमयः

करिणामिव दानवतामुपरि स्थित: स्वामितामिव स्पृहणीयां भृत्यतामप्यपरिभूतामुद्वहन्, एकभर्तृभक्तिनिश्चलां कुलाङ्गनामिवानन्यगम्यां प्रभुप्रसादभूमिमारूढो निष्कारणबान्धवो विदग्धानाम् अभृतभृत्यो भजताम् अक्रीतदासो विदुषां स्कन्दगुप्तो विवेश राजकुलम् । दूरादेव चोभयकरकमलावलम्बितं स्पृशन् मौलिना महीतलं नमस्कारमकरोत् ।

उपविष्टं नातिनिकटे तं तदा जगाद देवो हर्ष: श्रुतो विस्तर एवास्याव्यतिकरस्य अस्मच्चिकीर्षितस्य च । अत: शीघ्रं प्रवेश्यन्तां प्रचारनिर्गतानि गजसाधनानि । न चास्यत्यतिस्वल्पम् अप्यार्थपरिभवपीड़ापावक: प्रयाणविलम्बम् । इत्येवमभिहितश्च प्रणम्य व्यज्ञापयत् श्रुतमवधारयतु स्वामी समादिष्टं किन्तु स्वल्पं विज्ञाप्यमस्ति भर्तृभक्त:। तदाकर्णयतु देव: । देवेन हि पुष्यभूतिवंशसम्भूतस्याजात्यस्य सहजस्य तेजसो दिवाकरप्रलम्बस्य बाहुयुगलस्यासाधारणस्य च सोदरस्नेहस्य सर्व्वं सदृशमुपक्रान्तम् । काकोदराभिधाना: क्षपणा: क्षमया:ऽपि न लभ्यन्ति विकारं किमुत भवादृशास्तेजसां राशय: । केवलं देवराज्यवर्द्धनोदन्तेन कियदपि दृष्टमेव देवेन दुर्जनदौरात्म्यम् । ईदृशा: खलु लोकस्वभावा: प्रतिग्रामं प्रतिनगरं प्रतिदेशं प्रतिद्वीपं प्रतिदिशं च भिन्ना वेशाश्च आकाराश्च आहाराश्च व्यवहाराश्च जनपदानाम्। तदियम् आत्मदेशाचारोचिता स्वभावसरलहृदयजा त्यज्यतां सर्व्वविश्वासिता । प्रमाददोषाभिषङ्गेषु श्रुतबहुवार्त्त एव प्रतिदिनं देव: । यथा नागकुलजन्मन: सारिकाश्रावितमन्त्रस्यासीन्नाशो नागसेनस्य पद्मावत्याम् । शुकश्रुतरहस्यस्य च श्रीरशीर्य्यत श्रुतवर्म्मण: श्रावस्त्याम् । स्वप्नायमानस्य च मन्त्रभेदोऽभून्मृत्यवे वर्त्तिकावत्यां

स्वर्णचूडस्य। चूडामणिविलग्नलेखप्रतिबिम्बवार्तिताधरा च चारु-चामीकरचामरग्राहिणी यमतां ययौ यवनेश्वरस्य। लोभबहुलं च बहुलनिशि निधानमुत्खननमुत्खातखड्गप्रमाथिनी ममन्थ माथुरं बृहद्रथं विदूरथवरूथिनी। नागवनविहारशीलञ्च मायामातङ्गाङ्गात् निर्गता महासेनसैनिका वत्सपतिं न्ययंसिषुः। अतिदयितलास्यस्य च शैलूषमध्यमध्यास्य मूर्धानमसिलतया मृणालमिवालुनादग्निमित्रात्मजस्य सुमित्रस्य मित्रदेवः। प्रियतन्त्रीवाद्यस्य चालावुवीणाभ्यन्तरसुषिरनिहितनिशिततरवारयो गान्धर्वच्छात्रच्छद्मानः चिच्छिदुरश्मकेश्वरस्य शरभस्य शिरो रिपुपुरुषाः। प्रज्ञादुर्बलं च बलदर्शनव्यपदेशदर्शिताशेषसैन्यः सेनानीरनार्यो मौर्यं बृहद्रथं पिपेष पुष्यमित्रः स्वामिनम्। आश्चर्यकुतूहली च चण्डीपतिः दण्डोपनतयवननिर्मितेन नभस्तलयायिना यन्त्रयानेनानीयत क्वापि। काकवर्णः शैशुनागिश्च नगरोपकण्ठे कण्ठे निचकृते निस्त्रिंशेन। अतिस्त्रीसङ्गरतमनङ्गपरवशं शुङ्गममात्यो वसुदेवो देवभूतिदासीदुहित्रा देवीव्यञ्जनया वीतजीवितमकारयत्। क्षुरविवरप्रसविनं चापजङ्करपरिमितरमणीमणिनूपुरझण-झणाङ्कारदव्यया मागधं गोधनगिरिसुरङ्गया स्वविषयं मेखला-धिपमनिन्युः। महाकालमहे च महामांसविक्रयवादवातूलं वेतालः तालजङ्घो जघान जघन्यजं प्रद्योतस्य पौत्रिकं कुमारं कुमार-सेनम्। रसायनरसाभिनिवेशिनश्च वैद्यव्यञ्जनाः सुवर्णपुरुषान्तर-प्रकाशितौषधगुणा गणपतेर्विदेहराजसुतस्य राजयक्ष्माणमजन-यन्। स्त्रीविश्वासिनश्च महादेवीगृहगूढभित्तिभाक् भ्राता मद्र-सेनस्याभवन्मृत्यवे काशिकस्य वीरसेनः। मातृशयनीयतूलिका-तलनिषण्णश्च तनयोऽन्यं तनयमभिषेक्तुकामस्य दमस्य करूषाधिपतेः

अभवन्मृत्यवे। उत्थारकश्चिच्च रहसि सचिवमेव दूरीचकार चकोरनाथं शूद्रकदूतश्चन्द्रकेतुं जीवितात्। जगयासक्तस्य च मथ्नतो गण्डकान् उद्दण्डनड्‌वलवननिलीनाश्च चम्पाधिपचम्-चरभटाश्चामुण्डीपतेराचेमुः प्राणान् पुष्करस्य। वन्दिरागपरश्च परप्रयुक्ता जयशब्दमुखरमुखा मल्ला मौखरिं क्षत्रवर्म्माणमुत्-खनन्। अरिपुरे च परकलत्रकामुकं कामिनीवेशगुप्तश्च चन्द्रगुप्तः शकपतिमशातयदिति। प्रमत्तानां प्रमदाकृताः प्रमादाः श्रुति-विषयमागता एव देवस्य। यथा मधुमोदितं मधुरकसंलिप्तैर्लाजैः सुप्रभा पुत्त्रराज्यार्थं महासेनं काशिराजं जघान। व्याजजनित-कन्दर्पदर्पा च दर्पणेन क्षुरधारापर्य्यन्तेनायोध्याधिपतिं परन्तपं रत्नवती जारूथम् विषचूर्णचुम्बितमकरन्देन च कर्णेन्दीवरेण देवकी देवरानुरक्ता देवसेनं सौह्मम् योगपरागविरसवर्णिणा च मणिनूपुरेण वल्लभा सपत्नीकृता वैरन्त्यं रन्तिदेवम् वेणीनिगूढेन च शस्त्रेण विन्दुमती वृष्णिं विदूरथम् रसदिग्धमध्येन च मेखला-मणिना हंसवती सौवीरं वीरसेनम् अदृश्यागदलिप्तवदना च विषवारुणीगण्डूषपायनेन पौरवी पौरवेश्वरं सोमकम्। इत्युक्त्वा विरराम स्वाम्यादेशसम्पादनाय च निर्जगाम।

देवोऽपि हर्षः सकलराज्यस्थितीश्चकार। ततश्च तथा कृत-प्रतिज्ञे भयाणां विजयाय दिशां समादिशति देवे हर्षे गतायुषां प्रति-सामन्तानामुदवसितेषु बहुरूपाण्युपलिङ्गानि वितेनिरे। तथाहि अविप्रकृष्टाः कालदूतहृदय इव दूतसततचेष्टचटुलाः कृष्णसारश्रेणयः। प्रचलितकाञ्चीनूपुरप्रणादप्रतिमा मधुरघोषझङ्कारा अङ्गा-दिरेऽजिरे। विवृतविकृतवदनविवरविसृतवह्निविसरा वासरेऽपि विरसं विरेसुश्चिरमशिवार्थमशिवाः शिवाः। शवपिशितकर्दमप्रचया

इव कपिपोतकपोलकपिलपक्षतयः काननकपोताः पेतुः। आमन्त्रयमाणा इव मधुरकालकुसुमानि समसुमनतरवः। तरलकरतलप्रहारभग्नपयोधरा रुरुदुः प्रसभं सभाशालभञ्जिकाः। ददृशुः आसन्नकचग्रहभयोद्भ्रान्तोत्तमाङ्गमिवात्मानं कबन्धमादर्शोदरेषु योधाः। चूडामणिषु चंक्रमांकुशकमललक्षणाः प्रादुरभवन् पादन्यासा राजमहिषीणाम्। चेटीचामरग्राहककरादधावन्त पाणि-पल्लवात्। प्रणयकलहेऽपि दत्तपृष्ठाश्चिरमभवन् भटाः पराङ्मुखा मानिनीनाम्। करिकपोलेषु व्यघटन्त मधुलिहां मधुमदिरापानगोष्ठ्यः। समाघ्रातयममहिषगन्धा इव ताम्यन्तः शष्पकवलम् अपि हरयो हरितं नवयवसं न चेरुः। चलवलयावलीवाचालबालिकातालिकातोद्यलालिता अपि न ननृतुर्मन्दा मन्दिरमयूराः। निशि निशि रजनिकरहरिणनिहितनयन इवोन्मुखः तारमुपतोरणमकारणम् अक्रोशीत् कौलेयकगणः। गणयन्तीव गतायुषस्तर्जनतरलया तर्जन्या दिवसमाट घाटेषु कोटवी। कुट्टिमेषु कुटिलहरिणखुरवेगोत्तरङ्गितः शष्पराजयोऽजायन्त। अनितवेणीबन्धानि निरञ्जनरोचनारोचींषि चषकमधूनि मुखकमलप्रतिबिम्बान्यदृश्यन्त भटीनाम्। समासन्नापचारचकिता इव चकम्पिरे भूमयः। बध्नाकङ्काररणचन्दनरसच्छटा इवासज्यन्त नूपुरायां पतिताः शरीरेषु विकसितबन्धूककुसुमशोणितशोचिषः शोणितवृष्टयः। पर्यस्तीकुर्वाणा इव विमर्शं चिरम् अविरलस्फुरदुल्काविस्फाराङ्गारोद्गारदग्धतारागणा नभसः पतन्तः प्रचलन्तो न सरंसिषुरुल्कादण्डाः। प्रथममेव प्रतीहारीवापचरन्ती प्रतिभवनं चामरातपत्रध्वजानि पवना बभ्राम वात्येति।

इति श्रीबाणभट्टकृते हर्षचरिते षष्ठ उच्छ्वासः।

सप्तम उच्छ्वासः ।

अङ्गनवेदी वसुधा कुल्या जलधिः स्थली च पातालम् ।
वल्मीकश्च सुमेरुः कृतप्रतिज्ञस्य वीरस्य ॥
श्रुतधनुषि बाहुशालिनि शैला न नमन्ति यत्तदाश्चर्य्यम् ।
रिपुसंज्ञकेषु गणना कैव वराकेषु काकेषु ॥

अथ व्यतीतेषु च केषुचिद्दिवसेषु मौहूर्त्तिकमण्डलेन गणकैः सुगणिते सुप्रशस्तेऽहनि दत्ते चतसृणामपि दिशां विजययोग्ये दण्डयात्रालग्ने सलिलमोक्षविशारदैः शारदैरिवाम्भोधरैः कालधौतैः शातकुम्भैश्च कुम्भैः स्नात्वा विरचय्य परमया भक्त्या भगवतो नीललोहितस्यार्चाम् उदर्च्चिषं हुत्वा प्रदक्षिणावर्त्तशिखाकलापमाशुशुक्षणिं दत्त्वा द्विजेभ्यो रत्नवन्ति राजतानि जातरूपमयानि च सहस्रशस्तिलपात्राणि कनकपत्रलतालङ्कृतशफशृङ्गशिखरा गाश्चार्बुदशः समुपविश्य विततव्याघ्रचर्म्मणि भद्रासने विलिप्य प्रथमविलिप्तायुधो निजयशोधवलेनाचरणचन्दनेन शरीरं परिधाय राजहंसमिथुनलक्ष्मणी सदृशे दुकूले परमेश्वरचिह्नभूतां शशिकलामिव कल्पयित्वा सितकुसुममुण्डमालिकां शिरसि नीत्वा कर्णाभरणमरकतमयूखमिव कर्णगोचरतां गोरोचनाच्छुरितमभिनवं दूर्व्वापल्लवं विन्यस्य सह शासनवलयेन गमनमङ्गलप्रतिसरं प्रकोष्ठे परिपूजितप्रहृष्टपुरोहितकरप्रकीर्य्यमाणशान्तिसलिलसीकरनिकराभ्युक्षितशिराः संप्रेष्य महार्हाणि वाहनानि वहलरत्नालोकलिप्तककुम्भि च भूषणानि भूभुजां संविभज्य

क्लिष्टकार्पटिककुलपुत्रलोकपोषितैः प्रसाददानैश्च विसृज्य सत्त्व-नानि नियुज्य तत्कालकरणीयकरणेन कथितात्मानमिव चाटभट-द्वीपचेतव्याधिकारे दक्षिणं भुजमात्मनम् अचमचमिकवा सेवकैरिव सुनिमित्तैरपि समग्रैरग्रतो भवद्भिः प्रमुदितप्रजाजन्यमानजयशब्द-कोलाहलो हिरण्यगर्भ इव ब्रह्माण्डात् कृतयुगकरणाय भवनात् निर्जगाम ।

नातिदूरे च नगरादुपसरस्वति निर्मिते महति तृणमये समुत्तम्भिततुङ्गतोरणे वेदीविनिर्मितपल्लवमालाहेमकलशे बहुवन-मालादामिनि धवलध्वजमालिनि भ्रमच्छत्रवासवि पठद्द्विजन्मनि मन्दिरे प्रस्थानमकरोत् । तत्रस्थस्य चास्य ग्रामाक्षपटलिकः सकलकरणिपरिकरः करोतु देवो दिवसग्रहणमद्यैवाक्षय्यशासनः शासनानाम् इत्यभिधाय वृषाङ्कामभिनवघटितां हाटकमयीं मुद्रामुपनिन्ये जग्राह च तां राजा । समुपस्थापिते च प्रथमत एव क्षितिपिण्डे परिभ्रष्टा करकमलादधोमुखी महीतले पपात मुद्रा । मन्दाक्षमानपङ्कपटले मृदुमृदि सरस्वतीतीरे स्फुटं व्यराजन्त राजयो वर्णानाम् । अमङ्गलाशङ्किनि च विषीदति परिजने नरपतिः अकरोन्मनस्येतत् अतत्त्वदर्शिनो हि भवन्त्यविदग्धानां धियः । तथापि एकग्रासनमुद्राङ्का भूर्भवतो भविष्यतीति निवेदितमपि निमित्तेन अन्यथा गृह्णन्ति ग्राम्याः । इत्यभिनन्द्य मनसा महा-निमित्तं तत् सौरभचन्दनाञ्चितसीम्नां ग्रामाणां शतमदात् द्विजेभ्यः निनाय च तत्र तं दिवसम् । प्रतिपन्नायां शर्वर्यां सम्मानितसर्व-राजलोकः सुष्वाप ।

अथ गलति तृतीये यामे सुप्तसमस्तप्राणिनिःशब्दे दिक्कुञ्जर-जृम्भमाणगम्भीरध्वनिरताड्यत प्रयाणपटहः । अग्रतः स्थित्वा च

मुहूर्त्तमिव पुनः प्रयाणकोशसङ्ख्यापकाः स्पष्टमष्टावदीयन्त प्रहाराः पटहे पटीयांसः।

ततो रटत्पटहे मन्दमान्दीके गुञ्जत्कुञ्जे कूजत्काहले शब्दायमानशङ्खे क्रमोपचीयमानकटककलकले परिजनोत्थापनव्यापृतव्यवहारिणि द्रुतद्रुघनघातघञ्चमानकोणिकाकीलकोलाहलकलितककुभि बलाधिकृतबध्यमानपाटीपतिपेटके जनज्वलितोल्कासहस्रालोकलुप्यमानत्रियामातमसि यामचेटीचरणचलनोत्थाप्यमानकामिमिथुने कटुककटुकनिर्दृशनश्वन्निद्रोन्मिषन्निषादिनि प्रबुद्धहास्तिकसूत्कारौक्रियमाणशब्याट्टहे सुप्तोत्थितास्त्रीयविधूयमानसटे रटत्कटकमुखरखलिनखन्यमानघोणीपाशे समुत्कील्यमानकीलशिञ्जानहिञ्जीरे उपनीयमाननिगड़तालकलरवोत्तालतुरङ्गतरङ्ग्यमाणखुरपुटे लेशिकमुच्यमानमदस्यन्दिदन्तिसन्दानशृङ्खलाखनखननिनादनिर्भरभरितदशदिशि घासपूलकप्रहारप्रहृष्टपांसुलकरिपृष्ठप्रसार्य्यमाणप्रस्फोटितचर्म्मणि गृहचिन्तकचेटकसंवेष्ट्यमानपटकुटीकाण्डपटमण्डपपरिवस्त्रावितानके कीलकलापापूर्य्यमाणचिपिटचर्म्मपुटे संभाण्डायमानभाण्डागारिणि भाण्डागारवहनवाह्यमानबड़वलीवाहिके निषादिनिश्चलानेकानेकपारोप्यमाणकोशकलसपीड़ापीड़सङ्कटायमानसामन्तौकसि दूरगतदण्डदाशेरकक्षिप्रप्रक्षिप्यमाणोपकरणसम्भारभ्रियमाणदुष्टदन्तिनि तिर्य्यगानमज्जाघनिकभरक्रकचाकृष्टलम्बमानपरतन्त्र तुन्दिलवृन्दौजनजनितजनहासे पीड्यमानशारशारिवरत्रागुणग्रन्थितगात्रविहारदं हस्तहृष्टहृदुन्मदकरिणि करिघटाघटमानघण्टाटाङ्कारक्रियमाणकर्ण्णज्वरे पृष्ठप्रतिष्ठाप्यमानकण्ठालककर्दर्थितकूजत्करभे अभिजातराजपुत्रप्रेष्यमाणकुप्रयुक्ताकुलकुलीनकुलपुत्त्रकलत्रवाहने गमनवेलाविप्रलब्ध-

वारणाधोरणारभ्यमाणनवसेवके प्रसादविसर्जितनीयमाननर-
पतिवल्लभवरवाजिनि चाटचारभटसैन्यस्यमाननासीरमण्डला-
डम्बरस्थूलस्थासके स्थानपालप्रार्थ्यमाणलवणकलापीकिङ्किणी
नालीसनाथसङ्कलिततलसारके कुण्डलीकृतावरणिश्रीवालजटिल
वल्लभपालाश्वघटानिवेश्यमानंमन्याश्वावगे परिवर्त्मकाल्यमाणार्द्ध-
अग्धप्राभातिकवोग्यायनप्रारोहके व्याकोशीकृष्यमाणाशासिकघोष
गमनसम्भ्रमभ्रमद्गुण्डतरुणतुरङ्गमतन्यमानानेकमन्दुराविमर्द
सङ्कीर्णकरेणुकारोहणमान सत्वर सुन्दरीदीयमान मुखालेपनं
चलितमातङ्गतुरङ्गप्रधावितप्राकृतप्रातिवेश्यकलोकलुण्ठ्यमान-
निर्घोषघस्मसमये सम्भ्रमस्खलच्चक्राकान्तचक्रीवति चक्रचीत्कारि-
गन्त्रीगणागृह्यमाणप्रहतवर्त्मनि चक्रोड्डीयमानभाण्डभरितान
डुहि निकटवासलाभलुभ्यत्स्वमानप्रथमप्रसार्यमाणसारसौरभेये
प्रमुखप्रवर्त्यमानमहासामन्तमहानसे पुरःप्रधावद्भुजवारिणि प्रिय
ग्रतोपलभ्यमानासङ्कटकुटीरकान्तरालनिष्क्रमणे करिचरणदलित
मठिकोज्झितलोककलाटहन्यमानमेण्ठक्रियमाणासमसारिणि संघट्ट-
विघट्टमानश्वाप्रपक्षोपलायमानक्षुद्रकुटुम्बके कलकलोपद्रवद्रुतबहु-
द्रविणवलीवर्दविद्राणवणिजि पुरस्सरदीपिकालोकविरलायमान-
लोकोत्पीडप्रस्थितान्तःपुरकरिणीकदम्बके व्यारोहाश्रयमान-
लम्बितध्वजि सरभसचरणनिपतननिश्चलगमनमुह्यमानचक्रकूट-
कूयमानतुङ्गतुरङ्गगुल्मे खरवेसरविसंष्ठुलमोदहारिप्रयात्यमार्दिनि
रजोजग्धंजगति प्रयाणसमये प्रतिदिशमागच्छद्भिर्गजवधूसमारूढैः
आधोरणैरुद्ध्रियमाणहेमपत्रभङ्गारयाङ्कैः चमरासनासीना-
न्तरङ्गटहीतासिभिः ताम्बूलिकविधूयमानचामरपल्लवैः पञ्चिमा
सनिकापितभङ्गाभरणाभिन्द्रपालपलिकैः पत्रसनाकुटिमकलधौत-

नलकपल्लवितपर्य्याणैः पर्य्याणपल्लकपरिक्षेपपट्टिकाबन्धनिश्चलपट्टोपधानस्थिरावधानैः प्रचलपादफलिकास्फालनस्फायमानपदबन्धमणिशिलाशब्दैः उच्चितनेत्रसुकुमारस्थगनस्थगितजङ्घाकाण्डैश्च कार्द्दमिकपटकल्माषितपिशङ्गपिङ्गैः अलिनीलमसृणसतुलासमुत्पादितसितसमायोगपरभागैश्च अवदातदेहविराजमानराजावर्त्तमेचकैः कञ्चुकैश्चोपचितचीनचोलकैश्च तारमुक्तास्तवकितस्तवरकवारबाणैश्च नानाकषायकर्व्वुरकूर्पासकैश्च शुकपिच्छच्छायाच्छादनकैश्च व्यायामोल्लुप्तपार्श्वप्रदेशप्रविष्टचारुशस्त्रैश्च गतिवशवेल्लितहारलतागलल्लोलकुण्डलोन्मोचनप्रधावितपरिजनैः चामीकरपत्राङ्कुरकर्णापूरकविघट्टमानवाचालबालपाशैश्च उष्णीषपट्टावष्टब्धकर्णोत्पलनालैश्च कुङ्कुमरागकोमलोत्तरीयान्तरितोत्तमाङ्गैश्च चूडामणिखण्डखचितचौमचोलैश्च मायूरपत्रायमाणशेखरषट्पदपटलैश्च मार्गागतशारिकाशारिवाक्यवेगदण्डैः पुरश्चञ्चच्चामरकिर्म्मीरकार्द्दरङ्गचर्म्ममण्डलमण्डनोड्डीयमानचटुलडामरचारभटभरितभुवनान्तरैः आस्कन्दत्काम्बोजवाजिशतशिञ्जानजातरूपायानरवमुखरितदिङ्मुखैश्च निर्द्दयप्रहतलम्बापटहशतपटुरवबधिरीकृतश्रवणविवरैः उद्घोष्यमाणनामभिः उन्मुखपादातप्रतिपाल्यमानाश्वापातैः राजभिरापुपूरे राजद्वारम् ।

उदिते च भगवति दिनकृति राज्ञः समायोगग्रहणसमयशंसी सस्वान संख्याशङ्खो मुहुर्मुहुः। अथ नचिरादिव प्रथमप्रयाण एव दिग्विजयाय दिग्गजसमागममिव गमनविलोलकर्णतालदोलाविलासैः कुर्व्वाणया करेणुकया उह्यमानो वैदूर्य्यदण्डविकटेन उपरि प्रत्युप्तपद्मरागखण्डखचिततया सूर्य्योदयदर्शनकोपादिव लोहितायतया ध्रियमाणेन मङ्गलातपत्रेण कदलीगर्भाभ्यधिक-

अहिना भवनेननिर्मितेन द्वितीय इव भोगिनामधिपतिरङ्गलग्नेन कञ्चुकेन अचलमथनदिवस इव क्षीरोदफेनपटलधवलाम्बरधारी बाल एव पारिजातपादप इवाचलतलभूमिमारूढो विधूयमान-चामरमरुदुद्धूतकर्णपूरकुसुमकिञ्जल्करजसा सकलभुवनवशीकरण-चूर्णेनेव दिग्भ्रमुरयन् अभिमुखचूडामणिघटमानपाटलप्रतिबिम्बम् उदयमानं सवितारमपि पिबन्निव तेजसा अरुणताम्बूलसिन्दूर-स्फुरितया विलम्बमान इव द्वीपान्तराण्योष्ठमुद्रया अनुरागस्य स्फुरदच्छहारमरीचिचक्रवालानि चामराणीव दिशोऽपि पाययन् राजकेभ्योऽत्युत्सृतविभागया सौनपि लोकान् करदानायाज्ञापयन् इव सविभ्रमं भ्रूलतया द्राघीयसा बाहुप्राकारेण परिक्षिपन्निव रिरक्षया समापि सागरमहाख्यातान् अखिलमिव क्षीरोदमाधुर्यम् आदायोन्नतया लक्ष्म्या समुपगूढो गाढम् अचलमथ इव पीयमानः कुतूहलोत्तानकटकलोकलोचनसहस्रैः क्षेत्राङ्गेषु राज्ञां हृदयेषु गुणगौरवेण मज्जन्निव लिम्पन्निव सौभाग्यद्रवेण द्रष्टॄणाम् अमर-पतिरिवाग्रजवधकलङ्कप्रक्षालनाकुलः पृथुरिव पृथिवीपरिसाधना-बाधानसङ्कुलितसकलमहीभृत्समुत्सारणः पुरःसरैरालोककारकैः सहस्रसङ्ख्यैरर्क इव किरणैः अधिकारचातुर्यचञ्चलचरणैर्वध्या-स्थापननिष्ठुरैः भयपलायमानलोकोत्पीडान्तरिता इवापि दिशो गाहयद्भिरिव चलितकदलिकासम्पातपीतप्रचारं पवनमपि विनये स्थापयद्भिरिव द्रुतचरणोद्भूतधूलिपटलावधूतान् दिनकरकिरणान् अपुरःसरयद्भिरिव कनकवेत्रलताऽऽलोकविक्षिप्यमाणं दिनमपि दूरी-कुर्वद्भिरिव दण्डिभिरितस्ततः समुत्सार्यमाणजनसमूहो निर्जगाम नरपतिः ।

अवनमति च विनयनमितवपुषि भयचकितमनसि सकल-

शिथिलमणिकनकमुकुटकिरणनिकररुचिरशिरसि विलुलितकुसुमशेखररजसि राजचक्रे प्रभामुचां चूडामणीनाम् अवाञ्चः तिर्य्यञ्च उदञ्चश्च चञ्चन्तो मरीचयः चामराशय इव सुशकुनसम्पादनाय चेलुः मेघायमानरेणुमेदुरं मन्दिरशिखण्डिन इव खमुड्डीयमानाः कोमलकल्पपादपपल्लवचन्दनमालाकलापा इवाबध्यन्त दिग्द्वारेषु दिक्पालैः प्रणम्यमानश्च नेत्रत्रिभागैश्च कटाक्षैश्च समग्रेक्षितैः भ्रूवल्गितैश्चार्द्धस्मितैश्च परिहासैश्च छेकालापैश्च कुशलप्रश्नैश्च प्रतिप्रणामैश्च उन्मत्तभ्रूवीक्षितैश्च आज्ञादानैश्च आकीर्णन्निव मानमयान् प्राणान् प्रणयदानैः प्रवीराणां वीरो यथानुरूपं विबभाज राजकम् (१)।

अथ प्रस्थिते राजनि कलकलत्रस्तदिङ्नागमूत्कारख इव द्रुतस्ततस्तार तारतरतूर्य्याणां प्रतिध्वनिराशातटेषु। दिग्गजेभ्यः प्रकुपितानां विप्रसृतानां करिणां मदप्रस्रवणवीथीभिरलिकुलकालीभिः कालिन्दीवेणिकासहस्राणीव सस्यन्दिरे। सिन्दूररेणुराशिभिररुणायमानविश्वे रवावस्तमयसमयं शशङ्किरे शकुनयः। करिणां षट्पदकोलाहलमांसलैः कर्णतालनिस्वनैस्तिरोदधिरे दुन्दुभिध्वनयः। दोधूयमानश्च सचराचरमाचचाम चामरसङ्घातो विश्वम्। अश्वीयश्वासनिक्षिप्तैः शिशिञ्जे सिन्धुवारदामशुचिभिर्निरन्तरमन्तरिक्षं फेनपिण्डैः। पिण्डीभूततगरस्तवकपाण्डुराणि वपुरिव परस्परसंघट्टनष्टाष्टदिशं दिवसमुन्नचामीकरदण्डान्यातपत्रवनानि। रजोरजनीनिमीलितो मुकुटमणिशिलावलीबालातपेन विचकास वासरः। राजतैर्हिरण्मयैश्च मण्डनकभाण्डमण्डलैः क्रीदमानैर्हरितीकृताः परिक्राद्य हरितो बधिरतां

(१) राजलोकम्। २।

दधुः। अरिप्रतापानलनिर्मूलनायेव मदाम्बुशीकरैः शिशिरीकरिष्यन्तः ककुभां चक्रम्। अनुयामुख्येन मुकुटमुकुलडिम्बखण्डानि चूड़ामणीनामर्चींषि। स्वयमपि विसिस्मिये बलानां भूपालः सर्व्वतो विक्षिप्तचक्षुश्चाक्राक्षीदावासस्थानसकाशात् प्रतिष्ठमानं स्कन्धावारम् अधोक्षजकुक्षेरिव युगादौ निष्पतन्तं जीवलोकम् अम्भोनिधिमिव कुम्भभुवो वदनात् प्रापितभुवनमुद्वमन्तम् अर्ज्जुनबाहुदण्डसहस्रसम्पिण्डितोन्मुक्तमिव सहस्रधा प्रवर्त्तमानं प्रवाहम् नर्म्मदायाः। प्रसर तात भाव किं विलम्बसे खञ्जति तुरङ्गमः अङ्ग भग्नचरण इव सञ्चरसि यावदमी पुरस्सराः सरभसमुपरि पतन्ति वाहयसि किमुष्ट्रं न पश्यसि निर्दय निःशूकशिशुं शयानं वत्स रामिल रजसि यथा न नश्यसि नो पश्यसि गलति शक्तुप्रसेवकः किमेवमित्वर त्वरसे सौरभेय सरणिमपहाय इयमध्वं धावसि धीवरि विशसि गन्तुकामा मातङ्गि मातङ्गमार्गम् अङ्ग गलति तिरश्चीना अणकगोणी गणयसि न मामारटन्तम् अवटमतटेन अवतरसि सुखमास्व स्वैरिणि सौवीरक कम्भो भग्नो मन्थरक खादिष्यसि गतः सक्तुकम् उष्ट्राणां प्रमादय कियच्चिरं चिरेऽपि चेट वदराणि दूरं गन्तव्यं किमद्यैव विद्रासि द्राणक द्राघीयसी दण्डयात्रा विनैकेन निष्ठुरकेण निष्कृयमस्माकम् अग्रतः पन्थाः खपुटक स्थापक यथा न भनक्ति फाणितस्थालीं गरीयान् गण्डकतण्डुलभारको न निर्व्वहति दुष्टो दामक मा पीनाहरसुतः द्राग् दात्रेण मुद्गघासपूलकं लुनीहि को जानाति यवसगतं गतानाम् ध्रुव वारय बलीवर्दान् वाडीकरक्षितं क्षेत्रमिदं कक्षिता शकटी शाकरं धुरन्धरं धुरि अवलं नियुङ्क्ष्व अद्यापालित प्रमदाः पिनष्टि अक्षिणी किं ते स्फुटिते हत हस्तिपक रे

दीव्यसि करिकरदण्डे समद संमर्द्द कर्द्दमे स्खलसि भ्रातर्भीव विधुरबन्धो उत्तर मञ्चादनड्वाहम् इत एहि माणवक मनेभघटासंघट्टसङ्कटे नास्ति निस्तरणम् इत्येवमादिप्रवर्त्तमानानेकसंलापं क्वचित् स्वेच्छाच्छदितोद्दामसस्यग्रासविग्रसस्थसम्पन्नाच्छपुष्टैः कैकिकलैः किलकिलायमानैः मेण्ठवण्ठचण्ठरलम्बनलेखिकलुण्ठकचेटचाटचण्डालमण्डलैराखण्डैः स्तूयमानं क्वचिदसद्भावैः क्लेशार्जित कुग्राम कुटुम्बि सम्पादित सौदर्यौरभेयशम्बल संवाहनायासावेगागतसंयोगैः स्वयं गृहीतगृहोपस्करणैः इयमेका कथञ्चित् दण्डयात्रा यातु यातु पातालतलं तृष्णाभूनैरभवनिर्भवतु शिवं सेवा करोतु स्वस्ति सर्व्वदुःखकूटाय कटकाय इति दुर्विधकुलपुत्रकैर्निन्द्यमानम् क्वचिदतितीक्ष्णसलिलस्रोतःपातिनौगतैः इव ग्रथितैरिव पङ्क्तिभूतैर्जनैरतिद्रुतं द्रवद्भिः कृष्णकठिनस्कन्धगुग्गलगुडैः गृहीतसौवर्णपादपीठीकरङ्कलशपतद्ग्राहावगाहैः प्रत्यासन्नपार्थिवोपकरणग्रहणगर्व्वदुर्व्वारैः सर्व्वमेव बहिः कारयद्भिः भूपतिभृतकभारिकैर्म्महानसोपकरणवाहिभिश्च बद्धवराहवर्ध्रवार्धीणसैः लम्बमानहरिणचटुकचटकजूटजटिलैः शिग्रुशग्रकशाकपत्रवेलाग्रसंग्रहसंग्राहिभिः शुक्लकर्पटमाहतमुखैकदेशदत्ताद्र्र्मुद्राणुस्नगोरसभाण्डैः तलकतापकतापिकाहस्तकताम्रचरुकटाहसङ्कटपिटकभारिकैः समुत्सार्य्यमाणपुरोवर्त्तिजनं क्वचित् क्लेशोऽस्माकं फलकाले अन्य एव विटाः समुपस्थास्यन्त इति मुखरैः पदे पदे पततां दुर्ब्बलबलीवर्द्दानां नियुक्तैः खेटने खेटचेटकैः खेद्यमानासंविभक्तकुलपुत्रलोकं क्वचिन्नरपतिदर्शनकुतूहलादुभयतः प्रजविप्रधावितग्रामेयकजनपदं मार्गग्रामनिर्गतैराग्रहारिकजाल्मैः पुरःसरजरन्महत्तरोत्तम्भिताम्भःकुम्भैः उपायनीकृतदधिगुडखण्डकुसुम-

करण्डैर्घटितपेटकैः सरभसं समुत्पतद्भिः प्रकुपितप्रचलद्वरविहविका-
सनविद्रुतैः दूरगतैरपि स्खलद्भिरपि पतद्भिरपि नरेन्द्रनिचिताहि-
भिः प्रसृतोऽपि पूर्वभोगपतितदोषानुस्मारयद्भिः पतिकान्तानुज्ञात-
मतानि च शंसद्भिश्चिरन्तनचाटापराधाशाभिदधानैश्चूर्णमानधूलि-
पटलं क्वचिदेकान्तप्रदत्तांशुवांसलचलच्चर्य्यमाणागामिनीरविभ्रम-
माणसस्वसंरक्षणम् अपरैरादिष्टपरिपालकपुरुषपरिवृतैः अन्यैः
प्रत्यक्षो देव इति स्तुतौ गातव्यद्भिः अपरैर्लुठमाननिष्प्रभस्व-
प्रकटितविषादैः सेवयुवा सकुटम्बैरेव निर्गतैः प्रकम्पमानाच्छेदैः
परितापत्याजितभयैः क्व राजा कुत्र राजा कोऽसौ वा राजेति
प्रारब्धमरनाथमिन्द्रं प्रयकैश्च पदे पदे प्रजविप्रचलहलदण्डपाणि-
पेटकानुबद्धैर्गिरिगुडकैरिव भ्रम्यमाणैरितस्ततः सञ्चरद्भिः अपरैः
युगपत्परापतितमत्तगजनपसीसिलयो विलम्ब्यमानैरनेकजन्तुजङ्का-
न्तरालनिःसरणकृपलिभिः कुटिलिकाभ्यंगितसार्द्धवद्धुमभिः
पतल्लोटलगुडकोणकुठारकीलकुद्दालखनित्रदात्रयष्टिभिरपि निः-
सरद्भिरायुधो बलात् हतबालकाम् अन्यत्र सञ्चयो धार्मिकैः
बुसधूलिधूसरितधासजालआलक्षितजघनैश्च पुराणपर्णाणि च देश-
टोलायमानदालैश्च शीर्णोर्णाशकलग्रथितचर्मलिम्पमालकुथैश्च प्रम
प्रसादीकृतपाटितपटश्चरचलल्लोलकधारिभिश्च धावमानैश्चूर्यमाण-
धूलिपटलं क्वचिदेकान्तप्रदत्ताश्ववारचलच्चर्य्यमाणागामिनीर
विग्रहं क्वचित् पङ्किलप्रदेशपूरणादेशाकुलसकलोकलूयमान-
टक्षपूलकं क्वचित् तलवर्तिवेत्रिवेत्रविताड्यमानग्रामिकाश्वरमत-
विक्रोशद्भिवाद्भिराग्रो क्वचित् कुलपुत्रकपादविवेष्यमाणग्रामीण-
ग्रामाहृतकौलेयकं क्वचिदन्योन्यविवदमानैर्बुद्धराजपुरुषामाण-
वाजिपङ्कमग्निलतमनेकदन्तान्ततया कौतुकजनं प्रवयवक्षपितम्

इव जगद्ग्रासग्रहणाय प्रवृत्तं पातालमिव महाभोगिनां गुप्तये समुत्पादितं कैलासमिव परमेश्वरवसतये सृष्टं हृष्यमाणसकल-प्राणिपर्य्यायं चतुर्युगसर्गकोशमिव प्रजापतीनां क्लेशबहुलमपि तपःकरणमिव क्रमकारिणां कल्याणानाम् एवञ्च वीक्षमाणः कटकं जगाम ।

आसन्नवर्त्तिनाञ्च तत्रभवतां मान्धाता प्रवर्त्तिताः पन्थानो दिग्विजयाय । अप्रतिहतरथरंहसा रघुणा लघुनैव कालेनाकारि ककुभां प्रसादनम् । शरासनद्वितीयः करदीचकार चक्रं क्रमागत-भुजबलाभिजनधनमदावलिप्तानां भूभुजां पाण्डुः । पाण्डवः सव्य-साची चीनविषयमतिक्रम्य राजसूयसम्पदे क्रुध्यन्नर्ज्जुनधनुष्कोटि-टाङ्कारकूजितकुञ्जं हेमकूटपर्व्वतं पराजैष्ट । सङ्कल्पान्तरितो विजयस्तरस्विनाम् । सहिमहिमवदवस्थितोऽप्युवाह बाहुबलव्यति-करकातरः करं कौरवेश्वरस्य किङ्कर इवाशक्तो द्रुमः । नाति-जिगीषवः खलु पूर्व्वे येनास्मिन्नेव भूभागे भूयांसो भगदत्तदन्त-वक्रक्राथकर्णकौरवशिशुपालसाल्वजरासन्धसिन्धुराजप्रभृतयोऽभवन् भूपतयः । सन्तुष्टो राजा युधिष्ठिरो यो व्यसहत समीप एव धनञ्जयजयजनितजगत्कम्पः किम्पुरुषाणां राज्यम् । चलसत्त्वक्षुब्ध-कोषो यो न प्राविशत् स्त्रीं जित्वा स्त्रीराज्यम् । कुसीय एवान्तरं तुषारगिरिगन्धमादनयोः । उत्साहिनः कियन्तु तुरुष्कविषयाः । प्रादेशः पारसीकदेशः । शशपदं शकस्थानम् । अप्रतिहतमानप्रति-प्रहारे पारियात्रे वालैव शिखिश्रेणी । शौर्य्यशुल्कः सुलभो दक्षिणापथः । दक्षिणार्णवकल्लोलानिलवलितचन्दनलतासौरभ-सुन्दरीकृतदरीमन्दिरादर्दुरादद्रेर्नेदीयसि मलयो मलयवन एव च महेन्द्रः । इत्येवंभावानुयोगेन द्योतकानामालापान् पार्थिवकुमाराणां

गाढमालिलिङ्ग हस्तेनैवावलम्ब्यावासम् । मन्दिरद्वारि चोपगतः सबहुमानं भूलताभ्यां विसर्जितराजलोकः प्रविश्य चावततार बाह्यास्थानमण्डपस्थापितमासनमाचक्राम अपाकृतसमायोगश्च क्षणमासिष्ट ।

अथ तत्र प्रतीहारः पृथ्वीपृष्ठप्रतिष्ठापितपाणिपल्लवो विज्ञापितवान् देव प्राग्ज्योतिषेश्वरेण कुमारेण प्रहितो हंसवेगनामा दूतोऽन्तरङ्गस्तोरणमध्यास्त इति । राजा तु तमाशु प्रवेशयेति सादरमादिदेश । अथ दक्षतया क्षितिपालादराच्च प्रतीहारः स्वयमेव निरगात् । अनन्तरञ्च हंसवेगः सविनयमादायैव नयनानन्दसम्पादनसुभगाभोगमङ्गुवा समुद्गकमनणुगुणगर्भिणा प्रभूतप्राभृतभृता पुरुषाणां सङ्घेन महतानुगम्यमानः प्रविवेश राजमन्दिरम् । आरादेव पञ्चाङ्गालिङ्गिताङ्गनः प्रणाममकरोत् । एह्येहीति सबहुमानमाहूतश्च प्रधावितोऽग्रतः पादपीठलुठित-ललाटलेखो व्यवहृतः पृष्ठे पार्थिवेन उपन्यस्य भुवां नमश्चक्रे । स्निग्धनरेन्द्रदृष्ट्या निर्दिष्टमविप्रकृष्टं स प्रदेशमध्यास्त । ततो राजा तिरश्चीं तनुमीषदिव दधानश्चामरग्राहिणीमन्तराल-वर्तिनीं समुत्सार्य सम्मुखीनस्सं सप्रश्रयं पप्रच्छ हंसवेग श्रीमान् कच्चित् कुशली कुमार इति । स तमब्रवीत् अद्य कुशली येनैवं स्नेहार्पितया लीलार्द्रदृष्ट्या सगौरवं गिरा पृच्छति देव इति ।

स्थित्वा च मुहूर्त्तमिव पुनः स चतुरमुवाच चतुरम्भोधिभोग-भूतिभाजनभूतस्य देवस्य सद्भावगर्भमपहाय हृदयमेकम् अन्यत् अनुरूपं प्राभृतमेव दुर्लभं लोके तथाप्यस्मत्स्वामिना सन्देशम् अनुभवता नवता पूर्वजोपार्जितं वारुणातपत्रमाभोगाख्यमनुरूप-

स्थानन्यासेन कृतार्थीकृतमेतत्। अस्य च कुतूहलकृन्ति बहूनि आश्चर्याणि दृश्यन्ते। प्रतिदिवसं प्रविशति शैत्यहेतोश्छायायाः किरणसहस्रादेकैकः सोमस्य रश्मिरस्मिन्। अस्मिन् प्रविष्टे प्रध्यानानन्तरं स्रावयो दन्तवीणोपदेशाचार्याश्च्योतन्ति चन्द्रभासामम्भसां मणिशलाकाभ्यो यावदिच्छमच्छा धाराः। प्रचेता इव यश्चतुर्णामर्णवानामधिपतिर्भूतो भावी वा तमनुगृह्णाति छायया नेतरम्। दूरस्थं न समार्चिर्दहति न दृषदस्त्रो हरति नोदकमार्द्रयति न रजांसि मलिनयन्ति न जरा जर्जरयति। एतत् तावदनुगृह्णातु दृशा देवः सन्देशमपि विश्रब्धं श्रोष्यति। इत्येवमभिधाय विहत्यात्मीयं पुरुषमभ्यधात् उत्तिष्ठ दर्शय देवस्येति।

स वचनानन्तरमुत्थाय पुमान् ऊर्ध्वीचकार तत् धौतदुकूलकल्पिताच्च निचोलकात् अकोषीत्। आकृष्यमाण एव च यस्मिन्नतिसितमहसि सरभसम् अहासीव हरेण रसातलात् उदलासीव शेषफणिफणाफलकमण्डलेन अस्थायीव चक्रीभूय अन्तरिक्षे क्षीरोदेन अघटीव गगनाङ्गने गोष्ठीबन्धः शारदेन बलाहकव्यूहेन विश्रान्तमिव विततपक्षतिना वियति पितामहविमानहंसयूथेन अक्षिनेत्रनिर्गतस्य धवलधाममण्डलमनोहरो दृष्ट इव जनेन जन्मदिवसः कुमुदबन्धोः प्रत्यक्षीकृत इवोन्मनक्षणो नारायणनाभिपुण्डरीकस्य आहितेव कौमुदीप्रदोषदर्शनानन्दमभिरक्षाम् उदमाङ्क्षीदिव मन्दाकिनीपुलिनमण्डलं महत्सरोदरे परिवर्त्तित इव दिवसः पौर्णमासीनिशया मन्दमन्दमिन्दूदयसन्देहह्रवमानमानसैर्विघटितं घटमानचञ्चुच्युतपद्मालकोटिभिरासन्नकमलिनीचक्रवाकमिथुनैः शरदम्बधरपटला-

मङ्गलसङ्कोचितकेकारवमुकमुखपुटैः पराङ्मुखीभूतं मयूरमण्डलैः मन्दमन्दायमानचन्द्रानन्दोद्दामोहलहलपुटाङ्कुरामविरतं कुमुदवनैः।

चिरावमानापेताश्च सराजको राजा दण्डानुसाराधिरोपितदृष्टया सादरमैक्षिष्ट तं चिलकमिव त्रिभुवनस्य शेषवमृ इव श्वेतद्वीपस्य अंशावतारमिव शरदिन्दोः हृदयमिव धर्मस्य निर्वेशमिव शशिलोकस्य हंसमण्डलधवलं मुखमिव चक्रवर्तिनस्य मौक्तिकजालपरिकरसितं सीमन्तचक्रमिव दिवः चन्द्रज्योत्स्ना शुक्लोदरमैन्दवमिव परिवेशवलयं शौक्लाग्रसितशङ्कमौकं श्रवणमण्डलमिव निश्चलता गतमैरावतस्य श्वेतगङ्गावर्त्तपाण्डुरं पदमिव त्रिभुवनवन्दनीयं त्रिविक्रमस्य प्रचेतसश्चूडामणिममरीचिशिखाभिः इव शिष्टाभिर्मानसविसतन्तुमयीभिश्चामरिकावलीभिर्विरचितपरिवेशम् उपरि चक्रवर्त्तिलक्ष्मीनूपुरस्वनश्रवणोत्कण्ठानिश्चलेनेव लक्ष्यया विततपत्रेण हंसेन समाधीकृतशिखरं स्पर्शवता च प्रभावलम्बितेन मन्दाकिनीमृणालेन मुकुलितफणेन वासुकिनेव नीतेन दण्डतां द्योतमानं धवलिम्ना क्षालयदिव नभस्तलं प्रभाप्रवाहप्रथिम्ना प्राहृत्यदिव दिवसं समुच्छ्रायेणाधः कुर्वदिव दिवम् उपरिस्थितमिव सर्व्वमङ्गलानां श्वेतमण्डपमिव श्रियः लावकमिव ब्रह्मस्तम्बस्य नाभिमण्डलमिव ब्यास्नाया: विवर्द्धहासमिव कीर्त्तेः फेनराशिमिव खड्गधाराजलानां यशःपटलमिव शौर्य्यशालिताया: त्रैलोक्याद्भुतं महत् छत्रम्।

दृष्टे च तस्मिन् राज्ञा प्रथमे शेषमपि प्राभृतं प्रकाशयाम्बभूवुः क्रमेण कार्य्याः तद्यथा परार्घ्यरत्नांशुशोभितीकृतदिग्भागान् अनन्तप्रभृतिख्यातपार्थिवपरामतानाहतवद्यानसहारान् प्रभा-

लेपिनाञ्च चूडामणीनां समुत्कर्षान् क्षीरोदधेर्धवलताहेतूनिव हारान् अनेकरागरुचिरवेत्रकरण्डकुण्डलीकृतानि शरच्चन्द्र-मरीचिरुञ्चि शौचक्षमाणि क्षौमाणि कुशलशिल्पिलोकोल्लिखिता-नाञ्च शुक्तिशङ्खगल्वर्कप्रमुखानां पानभाजनानां निचयान् विचो-लकरचितरचाञ्च रुचिरकाञ्चनपत्रभङ्गभङ्गुराणामतिबन्धुरपरि-वेशानां कार्दरङ्गचर्मणां सम्भारान् भूर्जत्वक्कोमलाः स्पर्शवती: जातिपट्टिका: चित्रपटानाञ्च म्रदीयसां समूरकोपधानादीन् विकारान् प्रियङ्गुप्रसवपिङ्गलत्विञ्चि चासनानि वेत्रमयानि अगुरु-वल्कलकल्पितसञ्चयानि च सुभाषितभाञ्जि पुस्तकानि परिणत-पाटलपटोलत्विंषि च तरुणहारीतहरिन्ति क्षीरक्षारीणि च पूगानां पल्लवलम्बीनि सरसानि फलानि सहकारलतारसानाञ्च कृष्णागुरुतैलस्य च कुपितकपिकपोलकपिलकापोतिकापलाशकोशी-कवचिताङ्गी: स्थवीयसीर्वैणवीर्नाडीश्च पट्टसूत्रप्रसेवकार्पितांश्च भिन्नाञ्जनकृष्णस्य (२) कृष्णागुरुणः गुरुपरितापमुषश्च गोशीर्ष-चन्दनस्य तुषारशिलाशकलशिशिरस्वच्छसितस्य च कर्पूरस्य कस्तूरिकाकोशकानाञ्च पक्वफलजूटजटिलानाञ्च कक्कोलपल्लवानां लवङ्गपुष्पमञ्जरीणां जातीफलस्तवकानाञ्च राशीन् अतिमधुरमधु-रसामोदनिर्झरिणीश्च चल्लकलशी: सितासितस्य च चामरजातस्य निचयान् अवलम्बमानवर्त्तिकालाबुकांश्च लिखितानालेख्यफलक-सम्पुटान् कुलकलहन्ति कनकशृङ्खलानियमितग्रीवाणां किन्नराणाञ्च वनमानुषाणाञ्च जीवञ्जीवकानाञ्च जलमानुषाणाञ्च मिथुनानि परिमलामोदितककुभश्च कस्तूरिकाकुरङ्गान् गेहपरिसरण-परिचिताश्च चमरी: चामीकररसचित्रवेत्रपञ्जरान्तर्गतांश्च शुकशा-

(२) भिन्नाञ्जनवर्णस्य । २ । २ ।

सुभाषितजल्पाकजिह्वांश्च शुकसारिकाप्रभृतीन् पक्षिणः प्रवाल-पञ्जरगतांश्च चकोरान् जलहस्तिनामुदयकुम्भमुक्ताफलदामदन्तु-राशिं च दन्तकाण्डकुण्डलानि ।

राजा तु छत्रदर्शनात् प्रहृष्टहृदयः प्रथमप्रयाणे शोभन-निमित्तमिति मनसा जग्राह हंसवेगञ्च प्रीयमाणो बभाषे भद्र सकलरत्नधाम्नः परमेश्वरशिरोधारणार्हस्यास्य महातपत्रस्य महार्णवादिव कुमुदबान्धवस्य कुमाराल्लाभो न विस्मयाय । बाल-विद्याः खलु महतामुपलब्धय इति । अपनीते च तस्मात्प्रदेशात् प्राभृतसम्भारे क्षणमिव स्थित्वा हंसवेग विश्रम्यतामिति प्रतीहार-भवनं विसर्जयाम्बभूव । स्वयमप्युत्थाय स्नात्वा मङ्गलकाङ्क्षी प्राङ्मुखः प्राविशदाभोगस्य छायाम् ।

अथ विशत एवास्य छायाजन्मना जडिम्ना चूडामणिनामनीय-तेव शशिबिम्बम् अम्बुबिन्दूनुच्चचुम्बुरिव चन्द्रकान्तमणयो ललाट-तटं कर्पूररेणव इव व्यलीयन्त लोचनयुगले गलत्तुहिनकणनिकर-स्तनमीहारा हारा इवाबध्यन्त हरिचन्दनरसासारेणेव अपाति सन्ततमुरसि कुमुदमयमिव हृदयमभवदतिशिशिरम् अवकीर्ण-हिमशिलेव विलीयमाना व्यतिस्यन्दताङ्गानि । जातविस्मयश्चाकरोत् मनसि एकमजय्यं सत्कृतमपहाय काप्यन्या प्रतिवीर्यशिकेति । आहारकाले च हंसवेगाय धवलकर्पटप्रावृतधौतमाणिक्यपरि-गृहीतं विलेपनीयं चन्दनमङ्कपूटे च वाससी शरत्तारकाकार-तारमुक्ताफलखचितपदं परिवेषं नाम कटिसूत्रम् अतिमहार्ह-पद्मरागालोकलोहितीकृतदिवसं च तरङ्गकं नाम कर्णाभरणं प्रभूतञ्च भोज्यजातं प्राहिणोत् । एवंप्रायेण च क्रमेण जगाम दिवसः ।

ततः कटकस्थबलबहलधूलिधूसरितवपुरंशुमाली मलीमसम् अङ्गमिव क्षालयितुमपरजलनिधिमवातरत्। आभोगातपत्रप्रदानवार्त्तामिव निवेदयितुं वरुणाय वारुणीं दिशमयासीत्। मुकुलायमानसकलकमलवना प्रमुख एव बद्धसेवाञ्जलिपुटेव सद्दीपा भूरभूत् भूपतेः। नृपानुरागमय इव निखिलजीवलोकलोकाञ्जलिबन्धबन्धुर्जगज्जग्राह सन्ध्यारागः। गौडापराधशङ्किनीव श्यामतां प्रपेदे दिक् प्राची। प्रचिततिमिरनिवहा निर्व्वाणान्यनृपप्रतापानलकलापेव कालिमानमतानीत् मेदिनी। मेदिनीशप्रदोषास्थानपुष्पनिकरमिव विकचतगररुचिरम् अवचकरुडुनिकरम् अविरलं ककुभः। स्कन्धावारगन्धगजमदामोदधावितस्येव मार्गो वियति विरराज रजःपाण्डुरैरावतस्य। कुपितनृपव्याघ्राघ्राताम् उपसृष्टामिव पौरुहूतीं विहाय विहायस्तलमारुरोह रोहिणीरमणः। प्रयाणवार्त्ता इव मानिनीनां हृदयभेदिन्यो ययुरिन्दुदीधितयो दश दिशः। नवनृपदण्डयात्रात्रासातुरा इव तरलितसत्त्वदन्तयस्तुस्तुभुः पतयो वाहिनीनाम्। चिन्तेव भूभृतां हृदयानि विवेश गुहाविवराणि विमुक्तसर्व्वोर्व्वीतिमिरसन्ततिः। प्रतिसामन्तचक्षुषामिव ननाश निद्रा कुमुदवनानाम्।

अस्याञ्च वेलायां विततवितानतलवर्त्ती नरेन्द्रो यात तावत् इति विसर्ज्यानुजीविनो हंसवेगमादिष्टवान् कथय सन्देशमिति। प्रणम्य स कथयितुं प्रास्तावीत् देव पुरा वराहसम्पर्कसम्भूतगर्भया भगवत्या भुवा नरको नाम सूनुरसावि रसातले। वीरस्य यस्याभवन् बाल्य एव पादप्रणामप्रणयिनश्चूडामणयो लोकपालानाम्। यस्य च त्रिभुवनभुजो भुजशौण्डस्य भवनकमलिनीचक्रवाकीकोपकुटिलकटाक्षेक्षितोऽपि भयचकितारुणपरिवर्त्तितरथो नाभवत्

विना रविरस्तमयासीत्। यस्य यशस्य बहिर्भूतिं छत्रम् इदम् आतपत्रमधार्षीत्। महात्मनस्तस्यान्वये भगदत्तपुष्पदत्तवज्रदत्त-प्रभृतिषु व्यतीतेषु बहुषु मेरुसमेषु महत्सु महीपालेषु प्रपौत्रो महा-राजभूतिवर्म्मणः पौत्रश्चन्द्रमुखवर्म्मणः पुत्रो देवस्य कैलासस्थिर-स्थितेः स्थितिवर्म्मणः सुस्थिरवर्म्मा नाम महाराजाधिराजो जज्ञे तेजसां राशिः मृगाङ्क इति यं जना जगुः। सोऽयमजेनवाजायत सर्व्वैवाहङ्कारेण। यस्य बाल एव प्रीत्या द्विजातीन् अप्रीत्या च अरातीन् समग्रान् प्रतिग्रहानग्राहयत्। यस्य चातिदुर्लभं लवणा-लयसम्भूतायाः परं माधुर्य्यमभूल्लक्ष्म्याः। तथाच यो वाग्मिनी-मायाना ग्रहान् जहार न रत्नानि पृथिव्याः; कोषं जग्राह न करम्; अवनिभृतां गौरवमादत्त न नैष्ठुर्य्यम्। तस्य च सुगृहीत-नाम्नो देवस्य देव्यां श्यामादेव्यां भास्करद्युतिर्भास्करवर्म्मापरनामा तनयः शन्तनोर्भागीरथ्यां भीष्म इव कुमारः समभवत्। अयमस्य च शैशवादारभ्य सङ्कल्पः स्थेयान् स्थाणुपादारविन्दद्वयादृते नाहम् अन्यं नमस्कुर्य्यामिति। ईदृशश्चायं मनोरथस्त्रिभुवनदुर्लभस्त्रयाणाम् अन्यतमेन सम्पद्यते सकलभुवनविजयेन वा मृत्युना वा यदि वा प्रचण्डप्रतापज्वलनदिग्दाहेन जगत्येकवीरेण देवोपमेन मित्रेण। मैत्री च प्रायः कार्य्यव्यपेक्षिणी(२) क्षोणीभृताम्। कार्य्यञ्च कीदृशं नाम तद्भवेत् यदुपन्यस्यमानमुपनयेद्विलक्षतां देवम्। देवस्य हि यशांसि सञ्जीवतो बहिरङ्गभूतानि धनानि। बाहावेव च केवले निवसतः शेषावयवानामपि साहायकसम्पादनमनोरथो निरव-काशः किमुत बाह्यजनस्य। चतुःसागरग्रामपञ्चपत्तनस्य पृथि-व्येकदेशदानोपन्यासेनापि का तुष्टिः। अभिरूपकन्याविश्राणन-

(२) कर्त्तव्यतापेक्षिणी । १ ।

विलोभनमपि लक्ष्मीमुखारविन्ददर्शनदुर्ललितदृष्टेरकिञ्चित्करम्। एवमघटमानसकलोपायसम्पादितपदार्थेऽस्मिन् प्रार्थनामात्रमेव केवलमनुबध्यमानः शृणोतु देवः। प्राग्ज्योतिषेश्वरो हि देवेनैकपिङ्ग इवानङ्गद्विषा दशरथ इव गोत्रभिदा धनञ्जय इव पुष्कराक्षेण वैकर्त्तन इव दुर्य्योधनेन मलयानिल इव माधवेन अजर्य्यं सङ्गतम् इच्छति। यदि च देवस्यापि मैत्री यतिहृदयमवगाहति च पर्य्यायान्तरितं दास्यमनुतिष्ठन्ति सुहृद इति ततः किमास्यते समाज्ञाप्यताम् अनुभवतु विष्णोर्मन्दरगिरिरिव विकटकेयूरकोटिमणिविघट्टनकणितकटकमणिशिलाशकलानि गाढोपगूढानि देवस्य कामरूपाधिपतिः। अस्मिन्नात्मनेरनवरतविमललावण्यसौभाग्यसुधानिर्झरिणि मुखशशिनि चिराच्चक्षुषी लालयतु प्राग्ज्योतिषेश्वरश्रीः। नाभिनन्दति चेद्देवः प्रणयम् आज्ञापयतु किं कथनीयं मया स्वामिन इति।

विरतवचसि तस्मिन् भूपालः पूर्व्वोपलब्धैरेव गुरुभिर्गुणैः आरोपितबहुमानः कुमारे सुदूरमाभोगातपत्रव्यतिकरेण तु परां कोटिमारोपिते प्रेम्णि लज्जमान इव सादरं जगाद हंसवेग कथमिव तादृशि महात्मनि महाभिजने पुण्यराशौ गुणिनां प्राग्रहरे परोक्षसुहृदि स्थिते मद्विधस्यान्यथा स्वप्नेऽपि प्रवर्त्तेत मनः। सकलजगदुत्तापनपटवोऽपि शिशिरायन्ते त्रिभुवननयनानन्दकरे कमलाकरे कराःतिग्मतेजसः। सुवङ्गगुणगणक्रीताश्च के वयं सत्त्वस्य। सज्जनमाधुर्य्याणामकृतदासो दश दिशः। एकान्तावदातोत्तानस्वभावसम्भृतसादृश्यस्य कुमुदस्य कृते केनाभिहितः शिशिररश्मिः। श्रेयांश्च संकल्पः कुमारस्य। स्वबाहुशाली मयि च समालम्बितशरासने सुहृदि कराहते कमव्यं मम-

स्यति। संवर्द्धिता मे प्रीतिरमुना संवत्सरेण। अचलेष्वपि यथावपि
केषुचिदिव वर्द्धमानो हृदयस्य किं पुनः सुहृदि। तत्तथा यतेथाः
यथा न चिरमिव मामस्मात् क्लेशयति कुमारदर्शनोत्कण्ठेति।

हंसवेगस्तु विज्ञापयाम्बभूव देव किमपरमिदानीं क्लेशयति
अभिजातमभिहितं देवेन। शिवाभीरवो हि सन्तः तथापि विशेषेण
प्रथमकल्पारम्भणो वैष्णवो वंशः। आस्तां तावदस्मत्स्वामिवंशः
पश्यतु देवः पुरुषस्य हि सेवा प्रति दुर्जनमन्येवातिहतया दुर्गत्या
वाभिमुखीक्रियमाणस्य कुटुम्बिन्येवासन्तुष्टया तृष्णया वा प्रेर्य-
माणस्य दुरपत्यैरिव यौवनजनितैर्नानाभिलाषैरसम्बद्धैर्वा
आकुलीक्रियमाणस्य अरक्तकुमारीमिव परमार्गणयोग्यामतिक्रान्तां
वा वयस्यां पश्यतः स्वगृहे दुर्बन्धुभिरिव दुःस्थितैः समर्पणैर्वा
ग्रास्यमानस्याभियोगम् पुरातनैरतिदुस्त्यजैरर्थैरिव मलिनैः
कर्मभिर्वा अनुवर्त्यमानस्य सकलशरीरसन्तापकरं करीषाग्निमिव
दुष्कृतिनः हतचित्तस्य संप्रवेष्टुं राजकुलम् उपहतसकलेन्द्रिय-
शक्तेरिव मिथ्यैव हृदयगतविषयग्रामग्रहणाभिलाषस्य प्रथममेव
तोरणतले वन्दनमालाकिसलयस्येव शुष्यता द्वाररक्षिभिर्निबद्धस्य
पीडितस्य प्रविशतो द्वारे चरिणस्येवापरैर्बध्यमानस्य करेणुकाचर्म-
पुटस्येव मुहुर्मुहुः प्रतिहारमण्डलकरप्रहारैर्निरस्यमानस्य निषि-
पादपप्ररोहस्येव दुर्विद्याभिलाषादधोमुखीभवतो दूरममार्गणस्या-
प्यतिविप्रकृष्टविरक्तविसर्जितस्योद्वेगं व्रजतः अकण्टकस्यापि चरण-
तलकमलस्यालक्ष्य नृपैः क्षिप्यमाणस्य अमकरकेतोरप्यकालकोप-
संपर्कप्रकुपितेश्वरदृष्टिदग्धस्य प्रलयमुपगच्छतः कोपैरिव कोपनिर्भ-
र्त्सितस्यापि अभिनवमुखरागस्य प्रदीप्त इव प्रतिदिवसवन्दनोद्घृष्ट-
शिरःकपालस्य स्वयंरचितस्याशुभकर्मणोऽपि निर्भर्त्सतः त्रिपथगेरिव

उभयलोकभ्रष्टस्य नक्तन्दिनमर्घ्याक्शिरसस्तिष्ठतः वाजिन इव कवलवशेन सुखवाह्यमात्मानं विदधानस्य अनशनशायिन इव हृदय-स्थापितजीवनाशस्य शरीरं क्षपयतः शुन इव निजदारपराङ्मुखस्य जघन्यकर्म्मलग्नमात्मानं ताड़यतः प्रेतस्येवाशुचितभूमिदीयमानान्न-पिण्डस्य बलिभुज इव जिह्वालौल्योपयुक्तपुरुषवर्च्चसो वृथा विहिता-युषो जीवतः श्मशानपादपानिव पिशाचस्य दग्धभूत्या परुषीकृतान् राजवल्लभानुपसर्पतः विपरीतजिह्वाजनितमाधुर्य्यैरोष्ठमात्रप्रकटित-रागै राजशुकालापैः शिशोरिव मुग्धविलोभ्यमानस्य वेतालस्येव नरेन्द्रप्रभावाविष्टस्य न किञ्चिन्नाचरतः चित्रधनुष इवालीकगुणा-ध्यारोपणैकक्रियानित्यनम्रस्य निर्व्वाणतेजसः सम्मार्जनीसमुपा-र्जितरजसोऽवकरकूटस्येव निर्म्माल्यवाहिनः कफविकारिण इव दिने दिने कटुकैरुद्वेज्यमानस्य सौगतस्येवार्थशून्यविज्ञप्तिजनितवैराग्यस्य काषायाण्यभिलषतः निशास्वपि मातृबलिपिण्डस्येव दिक्षु विक्षिप्य-माणस्य अशौचगतस्येव कुशयनजनितसमधिकतरदुःखवृत्तेः तुला-यन्त्रस्येव पश्चात् कृतगौरवस्य तोयार्थमपि नमतः अतिकृपणस्य शिरसा केवलेनासन्तुष्टस्य वचसापि पादौ स्पृशतः निर्दयवेत्रिवेत्र-ताड़नत्रस्तयेव त्रपया त्यक्तस्य दैन्यसङ्कोचितहृदयकृतावकाशयेव आहोपुरुषिकया परिवर्जितस्य कुत्सितकर्म्माङ्गीकरणकुपितयेव उन्नत्या वियुक्तस्य धनश्रद्धया क्लेशानुपार्जयतः स्वदृष्टिसुखावमानं वर्द्धयतो मूढ़स्य सत्यपि विविधकुसुमाधिवाससुरभिणि वने तृष्णा-ञ्जलिमुपरचयतः कुलपुत्रस्यापि कृतागस इव भीतभीतस्य समीपम् उपसर्पतः दर्शनीयस्याप्यालेख्यकुसुमस्येव निष्फलजन्मनः विदुषोऽपि वैधेयस्येवापशब्दमुखस्य शक्तिमतोऽपि श्विलिख इव सङ्कोचितकर-चरणस्य समसमुत्कर्षेषु निरभिपद्यमानस्य नीचसमीकरणेषु

निरुच्छ्वासं म्रियमाणस्य परिभवैस्तृणीकृतस्य दुःखानिलेनाभिहतेः भजतो भक्तस्याप्यभक्तस्य निरुद्यमः सन्तापयतो बन्धून् विनाशस्य पथ्यमतिकस्य च्युतगौरवस्याप्यधस्तात्पततः निःसत्त्वस्यापि महामांसविक्रयं कुर्वतः निर्मदस्यास्वतन्त्रवृत्तेः प्रयोगिणो ज्ञानवतोऽज्ञातात्मनः शय्योत्थायं प्रणमतो दग्धमुण्डस्य गोत्रविदूषकस्य नक्तन्दिनं नृत्यतो मनस्विजनं त्रासयतः कुलाङ्गारस्य वंशं दहतः शपथोः त्वयोऽपि लब्धे कन्धरामवनमयतः जठरपरिपूरणमात्रप्रयोजनजन्मनो मांसपिण्डस्य गर्भरोगस्य मातुरपुण्यानां कर्मणाम् आचरणात् भृतकस्य किं प्रायश्चित्तं का प्रतिपत्तिक्रिया क गतस्य शान्तिः कीदृशं जीवितं कः पुरुषाभिमानः किन्नामानो विलासाः कीदृशी भोगश्रद्धा प्रबलपङ्क इव सर्वमधस्तान्नयति दारुणो दासशब्दः। धिक् तदुच्छ्वसितम् उपयातु तन्नूनं निधनम् अभयनिर्भृतः अस्तु तस्याः नमो भगवद्भ्यस्तेभ्यः सुखेभ्यः तस्यायमञ्जलिरैश्वर्यस्य तिष्ठतु दूर एव सा श्रीः शिवं स परिच्छदः करातु यदयमुक्तमाङ्गं गा गमिष्यति सुखप्रियरतः क्लीबः अप्रतिमासमयः शनिः अगण्यमानो मरकः पादरजोधूसरोत्तमाङ्गः अङ्गमः पाठपीठः पुंस्कोकिलः काकुकथितेषु शिखी सुखकरकेकासु स्थूलकर्णः कोलकथेषु श्वा नीचचाटुकरणेषु वेणुर्मूर्च्छनासु वेश्याकायः करणबन्धकेशेषु पलालं सत्त्वशालिषु शकलासः शिरोविलम्बनासु बालकभावसङ्कोचनेषु प्रतिपादकः पादसंवाहनासु चटकः करतलताडनेषु वीणादण्डः कोणाभिघातेषु वराकः सेवकोऽपि सर्वस्मै राजिलोऽपि वा भोगी पुलाकोऽपि वा कलमः वरं सर्वमपि कृता मानवता मानवता न मता समतयैकोऽप्याधिराज्योपभोगोऽपि मनस्विनः। तदेवमभिनन्दितास्मदीयप्रणयो देवोऽपि दिवसैः

कतिपयैरेव परागतः प्राग्ज्योतिषेश्वर इति करोतु चेतसीत्युक्त्वा तूष्णीमभूत् अचिराच्च नमस्कृत्य निर्जगाम।

राजापि रजनीं तां कुमारदर्शनौत्सुक्यस्रोतस्तहृदयः समनैषीत्। आत्मार्पणं हि महतामखलमन्त्रमयं वशीकरणम्। प्रभाते च प्रभूतं प्रतिप्राभृतं प्रधानप्रतिदूताधिष्ठितं दत्त्वा हंसवेगं प्राहिणोत्। आत्मनापि ततः प्रभृति प्रयाणकैरनवरतैरभ्यमित्रं प्रावर्त्तत। कदाचित्तु राज्यवर्द्धनभुजबलोपार्जितमशेषं मालवराजसाधनमादायागतं समीप एवावासितं लेखहारकात् भण्डिम् अशृणोत्। श्रुत्वा चाभिनवीभूतभ्रातृशोकक्षततायनः कातरहृदयो बभूव मूर्च्छान्धकारमिव विवेश अतिष्ठच्च समुत्सृष्टसकलव्यापारः प्रतीहारनिवारणनिभृतनिःशब्दपरिजने निजमन्दिरे सराजकपरिवारस्तदागमनमुदीक्षमाणो मुहूर्त्तम्।

अथ भण्डिरेकेनैव वाजिना कतिपयकुलपुत्त्रपरिवृतो मलिनवासा रिपुशरशल्यपूरितेन निखातवज्रलोहकीलकपरिकररचितस्फुटनेनेव हृदयेन हृदयलग्नैः स्वामिसत्कृतैरिव शस्त्रभिः शुचं समुपदर्शयन् दूरीकृतव्यायामशिथिलभुजदण्डदोलायमानमङ्गलवलयैकशेषालङ्कृतिः अनादरोपयुक्तताम्बूलविरलरागेण शोकदहनदह्यमानस्य हृदयस्याङ्गारेणेव दीर्घनिश्वासवेगनिर्गतेनाधरेण शुष्यता स्वामिविरहविधृतजीवितापराधवैलक्ष्यादिव बाष्पवारिपटलेन पटेनेव प्रावृतवदनः विशन्निव दुर्ब्बलीभूतैः स्वाङ्गमपत्रपया अङ्गैः वमन्निव च व्यर्थीभूतभुजोष्माणमायतैर्निश्वसितैः पातकीव अपराधीव द्रोहीव मुषित इव छलित इव यूथपतिपतनविषण्ण इव वेमदण्डवारणः सूर्य्यास्तमयनिःश्रीक इव कमलाकरः दुर्य्योधननिधनदुर्मना इव द्रौणिः अपहृतरत्न इव सागरो राजद्वारम्

आजगाम। अवतीर्य्य च तुरङ्गमादवनतमुखो विवेश राज-मन्दिरम्। दूरादेव च विमुक्ताक्रन्दः पपात पादयोः।

अवनिपतिरपि दृष्ट्वा तमुत्थाय विरलैः पदैः प्रत्युद्गम्योत्थाप्य च गाढ़मुपगूह्य कण्ठे करुणमतिचिरं रुरोद। शिथिलीभूतमन्युवेगश्च पुरैव पुनरागत्य निजासने निषसाद। प्रथमप्रक्षालितमुखे च भण्डौ मुखमक्षालयत्। समतिक्रान्ते च कियत्यपि काले भ्रातृ-मरणवृत्तान्तमप्राक्षीत्। अथाकथयच्च यथावृत्तमखिलं भण्डिः। अथ नरपतिस्तमुवाच राज्यश्रीव्यतिकरः क इति। स पुन-रवादीत् देव देवभूयं गते देवे राज्यवर्द्धने गुप्तनाम्ना च गृहीते कुशस्थले देवी राज्यश्रीः परिभ्रश्य बन्धनात् विन्ध्याटवीं सपरि-वारा प्रविष्टेति लोकतो वार्त्तामशृणवम्। अन्वेष्टारस्तु तां प्रति प्रभूताः प्रहिता जना नाद्यापि निवर्त्तन्त इति। तच्छ्रुत्वा च भूपतिरब्रवीत् किमन्यैरनुपदिभिः यत्र सा तत्र परित्यक्तान्यकृत्यः स्वयमहं यास्यामि। भवानपि कटकमादाय प्रवर्त्ततां गौडाभि-मुखम्। इत्युक्त्वा चोत्थाय स्नानभवमगात्। कारितशोकमन्यु-वपनकर्म्मणा च प्रतीहारभवनभ्रात्रेण शारीरकवसनकुसुमाङ्ग-रागालङ्कारप्रेषणप्रकटितप्रसादेन भण्डिना सार्द्धमभुङ्क्त निनाय च तेनैव सह वासरम्।

अथापरेद्युरुपस्येव भण्डिर्भूपालमुपगत्य व्यज्ञापयत् पश्यतु देवः श्रीराज्यवर्द्धनभुजबलार्जितं साधनं सपरिबर्हं मालवराज-स्येति। नरपतिना स एवं क्रियतामित्यभ्यनुज्ञातो दर्शयाञ्चकार तद्यथा . अनवरतगलितमदमदिरामोदमुखरमधुकरकूटकटिक-करटपट्टपल्लविकगण्डान् गन्धशैलानिव जङ्गमान् गम्भीरगर्जित-रवान् जलधरानिव महीमवतीर्णान् उत्फुल्लकमलकदम्बामोदमुचः

शरद्दिवसानिव पुञ्जीभूतान् अनेकसहस्रसङ्ख्यान् करिणः चारु-चामीकरचित्रचामरमण्डलमनोहरांश्च हरिणरंहसो हरीन् बालातपविसरवर्षिणाश्च किरणैरनेकेन्द्रायुधीकृतदशदिशामलङ्का-राणां विशेषान् विस्मयकृतः स्मरोन्मादितमालवीकुचपरिमल-दुर्ललितांश्च निजज्योत्स्नापूरप्लावितदिगन्तानपि तारान् हारान् उडुपतिपादसञ्चयशुचीनि निजयशांसीव बालव्यजनानि जात-रूपमयनालञ्च निवासपुण्डरीकमिव श्रियः श्वेतातपत्रम् अप्सरस इव बहुसमररससाहसानुरागावतीर्णा वारविलासिनीः सिंहा-सनशयनासन्दीप्रभृतीनि राज्योपकरणानि कालायसनिगड-निश्चलीकृतचरणयुगलञ्च सकलं मालवराजलोकम् अशेषांश्च ससङ्ख्यालेख्यपत्रान् सालङ्कारापीडपीडान् कोषकलशान् । अथा-लोक्य तत्सर्वमवनिपालः स्वीकर्तुं यथाधिकारमादिदेशाध्यक्षान् । अन्यस्मिंश्चाहनि हयैः स्कन्धावारमन्विष्टमुच्चचाल विन्ध्याटवीमवाप च परिमितैरेव प्रयाणकैस्ताम् ।

अथ प्रविशन् दूरादेव दह्यमानषष्टिकबुसविसरविसारि-विभावसूनां वन्यधान्यबीजधानीनां धूमेन धूसरिमाणमादधानैः शुष्कशाखासञ्चयरचितगोवाटवेष्टितविकटवटैः व्यापादितवत्सरूपक-रोषरचितव्याघ्रयन्त्रैः यन्त्रितवनपालहठक्रियमाणपरग्रामीण-काष्ठिककुठारैः गहनतरुषण्डनिर्म्मितचामुण्डामण्डपैर्वनप्रदेशैः प्रकाशमानम् अटवीप्रायप्रान्ततया कुटुम्बभरणाकुलैः कुद्दालप्राय-कृषिभिः कृषीवलैरबलवद्भिर्बहुभागभाषितेन भज्यमानभूरि-शालिखलखेत्रखण्डलकम् अल्पावकाशैश्च कापिलैः कालायसैरिव लशुनच्छत्रिकाकठिनैः स्थानस्थानस्थापितस्थाणूत्थितस्थूलपल्लवैः दुरुपगमश्यामाकप्ररूढ़िभिरलम्बुसवङ्कुलैः अविरहितकोकिलाक्ष-

क्षुण्णैर्विरलविरलैः केदारैः लब्धलब्धमार्षैर्गोतिप्रभूतप्रहतगता-
गताप्रहतभुवम् उपवनमुपरचितैर्वृक्षैर्मण्डलैश्च लूयमानव्यापदोप-
द्रवं दिशि दिशि च प्रतिमार्गद्रुमलतानां शबरपादपस्फोटन-
धूलिधूसरैर्नवपल्लवैर्लाञ्छितच्छायानाम् अटवीमुखभवालकुसुम-
स्तबकाञ्चितनवप्रशालकृपिकोपकण्ठप्रतिष्ठितनागस्फुटानामच्छिन्नकूट-
कल्पितकुटीरकाणां कुटिलकीटश्रेणीवेश्यमानशल्कपारपरावबल्ली-
श्रितानामध्वगजनजग्धजम्बूफलास्थिशबलसमीपभुवामुत्कूलितधूली-
कदम्बस्तबकप्रकरपुलकिनीनां कण्टकितकर्करीचक्राक्रान्तकाष्ठ-
मञ्चिकामुषितत्वषां निस्यन्तलशीतलधिकतिलकलशीशमितश्रमाणा-
माध्मानशैवलश्यामलितालिञ्जरजायमानजलजडिम्नासुरकुम्भाहट-
पाटलशर्कराशकलशिशिरीकृतदिशां घटमुखघटितकटकारपाटल-
पुष्पपुटानां शीकरपुलकितपल्लवपूलीपाल्यमानशोष्यसरसशिशुसह-
कारफलजूटीजटिलस्थाणूनां विश्राम्यत्कार्पटिकपेटकपरिपाटी-
पीयमानपयसामटवीप्रवेशप्रपाणां शैत्येन त्याजयन्तीमिव प्रेमाणम्
उष्णाणां क्वचिदन्यत्र ग्राहयन्तीमिवाङ्गारीयदावसंपच्छोभिः
व्योकारैः खर्वनस प्रातिवेश्यविषयवासिना समासन्नपामरस्व-
स्थापितस्थविरपरिपाल्यमानपाथेयस्थगितेन क्षतदावदावव्यायाम-
योग्याक्लाभ्यङ्गेन स्कन्धाध्यासितकठोरकुठारकण्ठलम्बमानप्रात-
राशपुटेन पाटच्चरप्रत्यवायप्रतिपन्नपटच्चरेण कालायसकलितगुण
व्रततिवलयपाशग्रथितग्रीवाग्रथितैः पत्रवीटावृतमुखैः पीतकटैरुद-
वारिणा पुरःसरबलद्वलीवर्दयुगसरेण नैकटिककुटुम्बिकलोकेन
काष्ठसंग्रहार्थमटवीं प्रविशता श्वापदवधनव्यवधानवल्लीसमा-
रोपितकुटीलतकूटपाशैश्च गृहीतवगतन्तुतन्त्रीजालवलयवागुरैः
बडिशजीवैर्विचरद्भिरंशावसक्तवीतंसकालम्बमानवालपाशिकैश्च सं-

गृहीतग्राहककङ्ककरकपिञ्जलादिपञ्जरकैः शाकुनिकैः सञ्चरद्भिश्चुरत-लासकलेशलिप्तलताबधूलट्वालम्पटानां चपेटकैः पाशकशिशूनाम् चटद्भिः तृणस्तम्बान्तरिततित्तिरितरलायमानकौलेयककुलचाटु-कारैश्च विहङ्गमृगयां मृगयुयुवभिः क्रीडद्भिः परिणतचक्रवाककण्ठ-कषायत्वचां शोधव्यानां वल्कलानां कलापान् नातिचिरोद्धृतानाञ्च धातुत्विषां धातकीकुसुमानां गोणीरगणिताः पिचव्यानां चातसी-शणपट्टमूलकानां पुष्कलान् सम्भारान भारांश्च मधुनो माक्षिकस्य मयूराङ्गजस्याक्लिष्टमधूच्छिष्टचक्रमालाना लम्बमानलामज्जकजूट-जटानामपत्वचा खदिरकाष्ठानां कुष्ठस्य कठोरकेशरिसटाभार-बभ्रुणश्च रोध्रस्य भूयसो भारकान् लोकेनादाय व्रजता प्रवि-चितविविधवनफलपूरितपिटकमस्तकाभिश्चाभ्यर्णग्रामगत्वरीभिस्त्वर-माणाभिर्विक्रयचिन्ताव्यग्राभिर्ग्रामेयिकाभिर्व्याप्तदिगन्तरमितस्ततश्च युक्तम्भूरशकुरशाकराणां पुराणपांसूत्करकरीषकूटवाहिनीनां घूर्णतधूलिधूसरसैरिभसरोषस्वरसार्य्यमाणानां संक्रीडच्चटुलचक्र-चीत्कारिणीनां शकटश्रेणीनां सम्पातैः सम्पाद्यमानदुर्ब्बलोर्व्वी-विकृष्टक्षेत्रसंस्कारम् आरचक्षिप्तदान्तवाहकदण्डोड्डीयमानहरिण-हेलालङ्घिततुङ्गवैणवहृतिभिश्च निखातगौरकरङ्कशङ्कशङ्कितशशक-शकलिततृणशुङ्गैः प्रयत्नप्रभृतविशङ्कटविटपैर्वाटैरैश्ववैर्वङ्कभिः श्यामायमानोपकण्ठम् अतिविप्रकृष्टान्तरैश्चारकर्तस्निग्धस्नुहावाट-वेष्टितैः कार्मुककर्म्मण्यवंशविटपसङ्कटैः कण्टकितकरञ्जराजि-दुष्प्रवेश्यैः उरुबूकवचावङ्ककण्ठरसस्तूरणशिग्रुग्रन्थिपर्णगवेधुकागर्मुदू-गुच्छगहनगृहवाटिकैः निखातोच्चकाष्ठारोपितकाष्ठालुकलता-प्रतानविहितच्छायैः परिमण्डलवदरीमण्डपकतलनिखातखादिर-कीलकबद्धवत्सरूपैः कथमपि कुक्कुटरटितानुमीयमानसन्निवेशैरङ्गना-

घटितसृण्मतलविरचितक्षिप्रपूपिकावापिकैर्विकीर्यबदर पाटल पटलैः वेणुपोटदलनशरमयूरतिविक्षिप्तभित्तिभिः किंशुकरोचनारचितमण्डलमण्डपवलजमहाङ्गारराशिभिः शाल्मलिफलतूलसञ्चयकुञ्जैः सञ्चितनलशालिशालूककमलकन्दकुमुदबीजवेणुतण्डुलैः संतानीतमालतीकैः भस्ममलमल्लानकाश्मर्यकूटथ्याश्वतक्रटैराम्रानगाजा-दनमदनफलस्फीतैर्मधूकासवमद्यप्रायैः कुसुम्भकुम्भगलकुचफलैर्विरचितराजमाषतुषकर्कटिकाकूष्माण्डालाबुबीजैः पोष्यमाणवनविडालमालुधाननकुलशारिजातजातकादिभिरटवीकुटुम्बिना-टचैरुपेतं वनग्रामकं ददर्श तत्रैव चावसदिति ।

इति श्रीबाणभट्टकृते हर्षचरिते सप्तम उच्छ्वासः ।

अष्टम उच्छ्वासः।

सहसा सम्पादयता मनोरथप्रार्थितानि वस्तूनि।
दैवेनापि क्रियते भव्यानां पूर्व्वसेवेव॥
विद्वज्जनसम्पर्को नष्टेष्टज्ञातिदर्शनाभ्युदयः।
कस्य न सुखाय भवने भवति महारत्नलाभश्च॥

अथापरेद्युरुत्थाय पार्थिवस्तस्मात् ग्रामकात् निर्गत्य विवेश विन्ध्याटवीम्। आट च तस्यामितस्ततश्च सुबह्वन् दिवसान्। एकदा तु भूपतेर्भ्रमत एवाटविकसामन्तशरभकेतोः सूनुर्व्याघ्रकेतुः नाम कुतोऽपि कज्जलश्यामलश्यामलतावलयेनाधिललाटमुच्चैःकृत-मौलिबन्धम् अन्धकारिणीमकारणभवा भ्रुकुटिभङ्गेन त्रिशाखेन त्रियामामिव साहससहचारिणीं ललाटस्थलीं सदा समुद्वहन्तम् अवतंसितैकशुकपक्षकप्रभाहरितायमानेन पिनद्धकाचरकाचमणि-कर्णिकेन श्रवणेन शोभमानं किञ्चिन्मुक्तस्य प्रविरलपक्ष्मणश्चक्षुषः सहजेन रागरोचिषा रसायनरसोपयुक्तं तारुण्यं चतजमिव क्षरन्तम् अवनाटनासिकं चिपिटाधरं चिक्किनचिबुकम् अहीन-हनूत्कटकपोलकूटास्थिपर्य्यन्तम् ईषदवाग्रग्रीवाबन्धं स्कन्धस्कन्धार्द्ध-भागम् अनवरतकोदण्डकुण्डलीकरणकर्कशव्यायामविस्तारितेन अंसलेनोरसा हसन्तमिव तटशिलाप्रथिमानं विन्ध्यगिरेः अजगर-गरीयसा च भुजयुगलेन लघयन्तं तुहिनशैलशालद्रुमाणां द्राघि-माणं वराहबालवलितबन्धनाभिर्नागदमनजूटिकाभिर्जटिलीकृतपृष्ठे प्रकोष्ठे प्रतिष्ठां गतं गोदन्तमणिचित्रं त्रापुषं वलयं बिभ्राणम्

अतुन्दिलमपि तुन्दिभम् अचीरिणा चर्म्मनिर्म्मितपट्टिकयोपचितचित्रकत्वक्तारकितपरिवारया शंकुजालिगजालकितया खड्गमयमसृणमुष्टिभागभास्वरया पारदरसलेपलिप्तसमस्तमस्तकया कृपाण्या करालितविसङ्कटकटिप्रदेशं प्रथमयौवनोल्लिख्यमानमध्यभागभ्रष्टमांसभरिताविव स्थवीयसावूरुदण्डौ दधतम् अच्छभल्लचर्म्ममयेन भल्लीप्रायप्रभूतशरभृता शबलशार्दूलचर्म्मपटपीडितेनालिकुलकालकम्बललोम्ना पृष्ठभागभाजा भस्त्राभरणेन पल्लवितमिव कार्ष्ण्यमुपदर्शयन्तम् उत्तरविभागांसस्थितचापपिच्छपाशापरे खदिरजटानिर्म्माणे खरप्राणे प्रचुरमयूरपित्तपत्रलताचित्रितनाभि त्वचि सारगुरुणि वामस्कन्धाध्यासितधनुषि दीर्घं लम्बमानेनावाक्शिरसा शितशरशल्यैकनलकविवरप्रवेशितेतरजङ्घाजनितस्वस्तिकबन्धेन बन्धूकलोहितरुधिरराजिरञ्जितभागपर्व्वणा वपुर्विवर्त्तितमृगविभाव्यमानकोमलक्रोडरोमशुक्लिम्ना शशेन शिताटनीशिखापग्रथितग्रीवेण चापाहतचञ्चूत्तानताम्रतालुना तित्तिरिणा वर्णकमुष्टिमिव मृगयाया दर्शयन्तं विषमविषदूषितवदनेन च विवर्णेन कृष्णाहिनेव मूलगृहीतेन व्यग्रदक्षिणकराग्रं अश्ममिव गिरितटतमालपादपं यन्त्रोल्लिखितमश्मसारस्तम्भमिव भ्रमन्तम् अञ्जनशिलाच्छेदमिव चलन्तम् अयःसारमिव गिरेर्विन्ध्यस्य गलन्तं पाकलं करिकुलानां कालपाशं कुरङ्गयूथानां धूमकेतुं मृगराजचक्राणां महानवमीमहं महिषमण्डलानां हृदयमिव हिंसायाः फलमिव पापस्य कारणमिव कलिकालस्य कामुकमिव कालरात्रेः शबरयुवानमासयाजगाम। दूरे च स्थापयित्वा विज्ञापयाम्बभूव देव सर्व्वस्यास्य विन्ध्यस्य स्वामी सर्व्वपल्लीपतीनां प्राग्रहरः शबरसेनापतिर्भूकम्पो नाम। तस्यायं निर्घातनामा स्वस्रीयः सकलस्यास्य

विन्ध्यकान्तारारण्यस्य पर्णानामप्यभिज्ञः किमुत प्रदेशानाम्। एवं इच्छतु देवः योग्योऽयमाज्ञां कर्त्तुम्। इति कथिते च निर्घातस्तु क्षितितलनिहितमौलिः प्रणाममकरोत् उपनिन्ये च तित्तिरिणा सह शशोपायनम्। अवनिपतिस्तु सम्मानयन् स्वयमेव तमप्राक्षीत् अङ्ग अभिज्ञा यूयमस्य सर्व्वस्योद्देशस्य। विहारशीलाश्च दिवसेष्वेतेषु भवन्तः। सेनापतेर्व्वान्यस्य वा तदनुजीविनः कस्यचित् उदाररूपा नारी आगता भवेद्दर्शनगोचरमिति।

निर्घातस्तु भूपालालापनप्रसादेनात्मानं बहुमन्यमानः प्रणाम दर्शितादरश्च व्यज्ञापयत् देव प्रायेणात्र हरिणोऽपि नापरिगताः सञ्चरन्ति सेनापतेः कुत एव नार्य्यो नाप्येवंरूपा काचिदबला। तथापि देवादेशादिदानीमन्वेषणं प्रति प्रतिदिनमनन्यकृत्यैः क्रियते यत्नः। इतश्चार्द्धगव्यूतिमात्र एव मुनिमहिते महति महीधरमालामूलवर्त्ति महीरुहां षण्डे पिण्डपाती प्रभूतान्तेवासि-परिवृतः पराशरी दिवाकरमित्रनामा गिरिनदीमाश्रित्य प्रति-वसति स यदि विन्देद्वार्त्तामिति। तत् श्रुत्वा नरपतिरचिन्तयत् श्रूयते हि तत्रभवतः सुगृहीतनाम्नः स्वर्गतस्य ग्रहवर्म्मणो बाल-मित्रं मैत्रायणीयस्त्रयीं विहाय ब्राह्मणायनो विद्यानुत्पन्नसमाधिः सौगते मते युवैव काषायाणि गृहीतवानिति। प्रायशश्च जनस्य जनयति सुहृदपि दृष्टो भृशमाश्वासम्। अभिगमनीयाश्च गुणाः सर्व्वस्य। कस्य न प्रतीक्ष्यो मुनिभावः। भगवती बौधेयेऽपि धर्म्मारूढ़िणी गरिमाणमापादयति प्रव्रज्या किं पुनः सकलजन-मनोमुषि विदुषि जने। यतो नः कुतूहलि हृदयमभूत्-सततमस्य दर्शनं प्रति प्रासङ्गिकमेवेदमापतितमतिकल्याणं पश्यामः प्रयत्न-प्रार्थितदर्शनं जनमिति। प्रकाशञ्चाब्रवीत् अङ्ग समुपदिश तमुद्देशं

यत्रास्ते स पिण्डपातीति। एवमुक्त्वा च तेनैवोपदिश्यमानवर्त्मा प्रावर्त्तत गन्तुम्।

अथ क्रमेण गच्छत एव तस्य चमत्कारिणः कुसुमित-कर्णिकाराः प्रचुरचम्पकाः स्फीतफलेग्रहयः फलभरभरितमरिचः नीलदलमलदनारिकेलनिकराः करिकेसरसरलपरिकराः कोरक-निकुरम्बरोमाञ्चितकुरवकराजयः रक्ताशोकपल्लवलावण्यलिप्यमान-दशदिशः प्रविकसितकेसररजोविसरवध्यमानवाचूर्णमालाः स्वरजःसिकतिलतिलकतलाः प्रविचलितशिंशपाः प्रचुरपूगफलाः प्रसवपूगपिङ्गप्रियङ्गवः परागपिञ्जरितमञ्जरीपुञ्जभ्रमाणमधुपमञ्जु शिञ्जाजनितजनमुदः मदमलमेचकितमुचुकुन्दस्कन्धकाणकण्य-मानमिःशङ्ककरिकटकण्डूतयः उड्डीयमाननिःशङ्कचटुलचाषाग्र-ग्रावसकलशाद्वलसुभगभूमयः तमःकालतमतमालमालामीलिता-तपाः स्तवकदन्तुरितदेवदारवः तरलताम्बूलीलम्बमालाकलितजम्बू-जम्बीरवीथयः कुसुमरजोधवलधूलीकदम्बचकचुम्बितव्योमानः वचन मधुमोक्षोच्चिर्तावतयः परिमलघटितप्राचारतरवः कतिपयदिवसप्रसूत कुक्कुटीकुटीकृतकुटजकोटराः चटकासच्यमानवाचाटचाटकेर-क्रियमाणचाटवः सहचरीचारणचतुरचकोरचक्रवः निर्भयभूरि-भूरुहभज्यमानपाककपिलपीलवः सदाफलकटफलफलविग्रसन-निःशूकशुकशकुन्तशालितशलाटवः शैलेयसुकुमारशिलातलसुख-शयितशशशिशवः शेफालिकाशिफाविवरविश्रब्धविवर्त्तमानगोधेर-राशयः निरातङ्करङ्कवः निराकुलनकुलकुलयः कलकोकिलकुल-कवलितकलिकोद्गमाः सहकारारामरोमन्थायमानचमरयूथाः यथासुखनिषण्णनीलाण्डजमण्डलाः निर्विकारदकविलोक्यमान-पोतपीतगवयधेनवः अवश्यायारिसमीडगिरिनितम्बनिर्झरनिनाद-

निद्रानन्दमन्दायमानकरिकुलकर्णतालदुन्दुभयः समासन्नकिन्नरीगीतरवरसमानरुरवः प्रमुदिततरतरक्षवः हतहरितहरिद्राद्रवरज्यमाननववराहपोतपोतवलयः गुञ्जाकुञ्जगुञ्जज्जाहकाः जातीफलकसुप्तशालिजातकवलयः दशनकुपितकपिपोतपेटकपाटितपाटलकीटपुटकाः लकुचलम्पटगोलाङ्गूललक्ष्मभल्लवलयः बहुबालुकालवालवलयाः कुटिलकुटावलिवलितवेगगिरिनदिकास्रोतसः निविडशाखाकाण्डलम्बमानकमण्डलवः सुवर्णशिक्यासक्तरिक्तभिक्षाकपालपल्लवितलतामण्डपाः निकटकुटीकृतपाटलमुद्राचैत्यकमूर्त्तयः चीवराम्बररागकषायोदकदूषितोद्देशाः मेषमया इव कृतशिखण्डिकुलकोलाहलाः वेदमया इवापरिमितशाखाभेदगहनाः माणिक्यमया इव महानीलतनवः तिमिरमया इव सकलजननयनमुषः यामुना इवोर्ज्जीकृतमहाह्रदाः मरकतमणिश्यामलाः क्रीड़ापर्व्वतका इव वसन्तस्य अञ्जनाचला इव पल्लविताः तनया इवाटवीजाता विन्ध्यस्य पातालान्धकारराशय इव भित्त्वा भुवमुत्थिताः प्रतिवेशिका इव वर्षावासराणाम् अंशावतारा इव कृष्णरात्रीणाम् इन्द्रनीलमयाः प्रासादा इव वनदेवतानाम् पुरस्ताद्दर्शनपथमवतेरुस्तरवः।

ततो नरपतेरभवन्मनसि अदूरवर्त्तिना खलु भवितव्यं भदन्तेनेति। अवतीर्य्य च गिरिसरिति समुपस्पृश्य युगपद्विश्रामसमयसमुन्मुक्तहेषाघोषवधिरीकृताटवीगहनामस्मिन्नेव प्रदेशे स्थापयित्वा वाजिसेनाम् अवलम्ब्य च तपस्विजनदर्शनोचितं विनयं हृदयेन दक्षिणेन च हस्तेन माधवगुप्तमंसे विरलैरेव राजभिरनुगम्यमानश्चरणाभ्यामेव प्रावर्त्तत गन्तुम्।

अथ तेषां तरूणां मध्ये नानादेशीयैः स्थानस्थानेषु स्थाणून्

श्रितैः शिलातलेषूपविष्टैः लतामण्डपान्यध्यावसद्भिः अरण्यानी-
निकुञ्जेषु निलीनैः विटपच्छायासु निषण्णैः तरुमूलानि निषेवमाणैः
वीतरागैः आर्हतैः मस्करिभिः श्वेतपटैः पाण्डुरिभिक्षुभिर्भागवतैः
वर्णिभिः केशलुञ्चकैः कापिलैः जैनैः लोकायतिकैः काणादैः
औपनिषदैः ऐश्वरकारणिकैः कारन्धमिभिः धर्म्मशास्त्रिभिः
पौराणिकैः साप्ततन्तवैः शाब्दैः पाञ्चरात्रिकैः अन्यैश्च स्वान् स्वान्
सिद्धान्तान् शृण्वद्भिः अभियुक्तैः चिन्तयद्भिश्च प्रत्युच्चरद्भिश्च
संशयानैश्च निश्चिन्वद्भिश्च व्युत्पादयद्भिश्च विवदमानैश्च अभ्यस्यद्भिश्च
व्याचक्षाणैश्च शिष्यता प्रतिपन्नैर्दूरादेवावेक्ष्यमाणम् अतिविनीतैः
कपिभिरपि चैत्यकर्म्म कुर्व्वाणैः त्रिशरणपरैः परमोपासकैः शुकैरपि
शाक्यशासनकुशलैः कोषं समुपदिशद्भिः शिक्षापदोपदेशोपशम-
शालिनीभिः शारिकाभिरपि धर्म्मदेशना दर्शयन्तीभिः अनवरत-
श्रवणगृहीतालोकैः कौशिकैरपि बोधिसत्त्वजातकानि जपद्भिः आत्म-
सौगतशीलशीतलस्वभावैः शार्दूलैरप्यमांसाशिभिरुपास्यमानम्
आसन्नोपान्तोपविष्टविस्रब्धानेककेसरिशावकतया मुनिपरमेश्वरम्
अचलम इव सिंहासने निषण्णम् उपशममिव पिबद्भिर्वनचरैः
विशाललताभिरुपलिह्यमानपादपल्लवं वामकरतलनिविष्टेन नीवारम्
अश्नता पारावतपोतेन कर्णोत्पलेनेव प्रिया मैत्रीं प्रसादयन्तम्
इतरकरकिसलयनखमयूखलेखाभिर्जनितजलभ्रामोदम् कलग्रीवं
मयूरं मरकतमणिकरकमिव वारिधाराभिः पूरयन्तम् इतस्ततः
पिपीलिकाश्रेणीनां श्यामाकतण्डुलकणान् स्वयमेव किरन्तम् अरुणेन
चीवरपटलेन मृदीयसा संवीतं बालबालातपानुलिप्तमिव पौरन्दरं
दिग्भागम् उद्भिद्यमानपद्मरागप्रभाप्रतिमया रक्तावदातया देहप्रभया
पाटलीकृतानां काषायग्रहणमिव दिशामप्युपदिशन्तम् [illegible]

अधोमुखेन मन्दमुकुलितकुमुदाकरेण स्निग्धधवलप्रसन्नेन चक्षुषा जनचक्षुरदृश्यजन्तुजीवनार्थममृतमिव वर्षन्तम् सर्व्वशास्त्राक्षरपरमाणुभिरिव निर्म्मितं परमसौगतमप्यवलोकितेश्वरम् अस्खलितम् अपि तपसि लग्नम् आलोकमिव यथावस्थितसकलपदार्थप्रकाशकं दर्शनार्थिनां सुगतस्याप्यभिगमनीयमिव धर्म्मस्याप्याराधनीयमिव प्रसादस्यापि प्रसादनीयमिव मानस्यापि माननीयमिव वन्द्यत्वस्यापि वन्दनीयमिव जन्म यमस्य नेमिं नियमस्य तत्त्वं तपसः शरीरं शौचस्य कोशं कुशलस्य वेश्म विश्वासस्य सद्वृत्तं सद्वृत्ततायाः सर्व्वस्वं सर्व्वज्ञतायाः दाक्ष्यं दाक्षिण्यस्य पारं परानुकम्पाया निर्वृतिं सुखस्य मध्यमे वयसि वर्त्तमानं दिवाकरमित्रमद्राक्षीत्। अतिप्रशान्तगम्भीराकारारोपितबहुमानश्च सादरं दूरादेव शिरसा मनसा वचसा च ववन्दे।

दिवाकरमित्रस्तु मैत्रीमयः प्रकृत्या विशेषतस्तेनापरेणादृष्टपूर्व्वेणामानुषलोकोचितेन सर्व्वाभिभाविना महानुभावाभोगभाजा भ्राजिष्णुना भूपतेराकृतेनाकारविशेषेण तेन चाभिजात्यप्रकाशकेन गरीयसा प्रश्रयेण चाह्लादितः चक्षुषि च चेतसि च युगपत् अग्रहीत्। धीरस्वभावोऽपि च सम्पादितससम्भ्रमाभ्युत्थानः सङ्कल्प्य किञ्चिदुन्नमनकेन विलोलं विलम्बमानं वामांसाच्चीवरपटान्तमुत्क्षिप्यानेकाभयदानदीक्षादक्षिणो दक्षिणं महापुरुषलक्षणलेखाप्रशस्तं स्निग्धमधुरया वाचा सगौरवमारोग्यदानेन राजानमभ्यग्रहीत् अभ्यनन्दच्च स्वागतगिरा गुरुमिव अभ्यागतं बहु मन्यमानः स्वेनासनेन चाक्रमत्विति निमन्त्रयाञ्चकार पार्श्वे स्थितञ्च शिष्यमब्रवीत् आयुष्मन् उपानय कमण्डलुना पादोदकमिति। राजा त्वचिन्तयत् अहोऽ खलु संयमनपाशः सौजन्यम् अभि-

आत्मानम् । स्थाने खलु तत्रभवान् गुणानुरागी प्रणयवान् वक्षसो वर्धितवानस्य गुणानिति । प्रकामश्रावभावे भवान् दर्शन-पुण्यानुगृहीतस्य मम पुनरस्य दूरावमार्जप्रसुप्तः प्रतिभात्युपचारः । बहुमानप्रसादस्वीकृतस्य च परकरणमिवासनादिदानोपचार-चेष्टितम् । अतिभूमिरेव भवादृशां पुरः सम्भावनावनताभि-षेकप्रक्षालितसकलपुण्यस्य मे प्रदेशवृत्तिः । पाद्यमप्यर्घकम् । आस्यतां भवन्तो यथासुखम् । आसीनोऽयम् इत्यभिधाय क्षितौ एवोपाविशत् ।

अलङ्कारो हि परमार्थतः प्रभवतां प्रश्रयातिशयो रत्नादिकस्तु शिलाभार इत्याकलय्य पुनः पुनरभ्यर्थ्यमानोऽपि यदा न प्रत्यपद्यत पार्थिवो वचनं तदा स्वमेवासनं पुनरपि भेजे भदन्तः भूपतिमुख-नलिननिर्गलितनिश्चलनयनयुगलनिगडनिश्चलीकृतहृदयश्च स्थित्वा काञ्चित् कालकलां कलिकाकलकलप्रकाशनमिव सान्द्रयन्ननेकाभिः दन्तमयूखमालाभिः मूलफलाभ्यवहारसम्भवमुखमलमिव च परि-मलसुभगं विकचकुसुमपटलपाण्डुरं वितानमभाषीत् महाराज न केवलमयमनिन्द्यो वन्द्योऽपि प्रकाशितसञ्चारः संसारः । किं नाम नालोक्यते जीवद्भिरद्भुतं येन रूपमर्थितोपनतमिदं दृक्पथ-मुपगतम् । एवंविधैरनुमीयन्ते जन्मान्तरार्जितपुण्यानि पुरुषो-त्तमैः । इहापि जन्मनि ह्रस्वमेवाल्पकमनुना तपःक्लेशेन फलम् असुलभदर्शनं दर्शयता देवानां प्रियम् । आ जन्मनः पीतममृतम् दृष्टवानहम् । जातं निष्कण्टकं मानसं निर्वृतिसुखस्य । भवद्भिः पुण्यैर्विना न विश्राम्यन्ति सज्जने मादृशि दृशः । सुदिवसः स कश्चित् जातोऽस्ति । सा सुजाता जननी या सकलजीवलोक-जीवितजनकमजननयदानुपमम् । पुण्यवन्ति पुण्यान्यपि तानि

येषामसि परिणामः। सुकृततपसस्ते परमाणवः ये तव परिगृहीतसर्व्वावयवाः। तत्सुभगं सौभाग्यम् आश्रितोऽसि येन। भव्यः स पुरुषभावो भवत्यवस्थितो यः। यत्सत्यं मुमुक्षोरपि मे पुण्यभाजम् आलोक्य पुनः श्रद्धा जाता मनुजजन्मनि। नेच्छद्भिः अप्यस्माभिर्दृष्टः कुसुमायुधः। कृतार्थमद्य चक्षुर्वनदेवतानाम् अद्य सफलं जन्म पादपानाम् येषामसि गतो गोचरम्। अमृतमयस्य भवतो वचसां माधुर्य्यं कार्य्यमेव। अस्य त्वीदृशे शैशवे विनयस्योपाध्यायं ध्यायन्नपि न सम्भावयामि भुवि। सर्व्वथा शून्य आसीदजाते दीर्घायुषि गुणग्रामः। धन्यः स भूभृत् यस्य वंशे मणिरिव मुक्तामयः सम्भूतोऽसि। एवंविधस्य च पुण्यवतः कथञ्चित् प्राप्तस्य केन प्रियं समाचराम इति पारिप्लवं चेतो नः। सकलवनचरसार्थसाधारणस्य कन्दमूलफलस्य गिरिसरिदम्भसो वा के वयम्। अपरोपकरणीकृतस्तु कायकलिरयमस्माकम्। सर्व्वस्वम् अवशिष्टमिष्टातिथ्याय। स्वायत्ताश्च विद्यन्ते विद्याबिन्दवः कतिचित्। उपयोगन्तु न प्रीतिर्विचारयति। यदि च नोपरुणद्धि कश्चित् कार्य्यलवम् अरक्षणीयाक्षरं वा कथनीयं तत् कथयतु भवान् श्रोतुमभिलषति हृदयं सर्व्वमिदं नः। केन कृत्यातिभारेण भव्यो भूषितवान् भूमिमेतामभ्रमणयोग्याम्। कियदवधिर् वा शून्याटवीपर्य्यटनक्लेशः कल्याणराशेः। कस्माच्च सन्तप्तकर्प्पेव ते तनुरियमसन्तापार्हा विभाव्यत इति।

राजा तु सादरतरमब्रवीत् आर्य्य दर्शितसम्भ्रमेणानेन मधुरसविसरमवतमिव हृदयङ्गतिकरमनवरतं वर्षता वचसैव ते सर्व्वम् अनुष्ठितम्। धन्योऽस्मि यद्देवमभ्यर्हितमनुपचरणीयमपि मान्यो मन्यते माम्। अस्य च महावनभ्रमणपरिक्लेशस्य कारणमव-

धारयतु मतिमान्। मम हि विनष्टनिखिलेष्टबन्धोर्जीविताशु-बन्धस्य निबन्धनम् एकैव यवीयसी स्वसावशेषा। सापि भर्तुः वियोगाद्वैरिपरिभवभयात् भ्रमन्ती कथमपि विन्ध्यवनमिदम् अशुभशबरबलबहुलम् अगणितगजकुलकलिलम् अपरिमित-मृगपतिशरभभयम् उदग्रमहिषमुषितपथिकगमनम् अतिनिचित-शरकुशपरुषम् अवटशतविषममाविशत्। अतस्तामन्वेष्टुं वयमिमां निशि निशि च सततमिमामटवीमटामः। भवन्तमाश्रयामः। कथयतु च गुरुः अपि यदि कदाचित् कुतश्चिद्वनचरतः श्रुतिपथम् उपगता तद्वार्त्तेति।

अथ तत् श्रुत्वा जातोद्वेग इव भदन्तः पुनरब्रवीत् सौम्य न खलु कश्चिदेवंरूपो वृत्तान्तोऽस्मानभ्युपगतवान्। अभाजनं हि वयमीदृशानां प्रियाख्यानोपायनानां भवताम्। इत्येवं भाषमाण एव तस्मिन् एकस्मादागत्यापरः श्रमिणि वयसि वर्त्तमानः सब्रह्मचा-रूप इव पुरस्तादुपरचिताञ्जलिर्जातकरुणः प्रत्यरितवत्तुर्भिक्षुरभा-षत भगवन् भदन्त महत् करुणं वर्त्तते। बालैव बलवद्व्यसनाभि-भूता भूतपूर्व्वापि कल्याणरूपा स्त्री शोकावेशविवशा वैश्वानरं विशति। सम्भावयतु तामप्रोषितप्राणां भगवान्। अभ्युपपद्यतां समुचितैः समाश्वासनैः। अनुपरतपूर्व्वं कृमिकीटमपि दुःखितं दयाराशेरायस्य गोचरगतमिति।

राजा तु जातानुशयङ्कः सोदर्य्याक्लेशशङ्कान्तर्द्दुत इव दुःखेन दोदूयमानहृदयः कथमपि गद्गदिकास्फीतकण्ठो विकलवाग् वाष्पायमाणदृष्टिः पप्रच्छ पाराशरिन् कियद्दूरे सा योषिदेवं-जातीया जीवेद्वा कालमेतावन्तमिति। दृष्टा वा त्वया काचि कस्यासि कुतोऽसि किमर्थं वनमिदमभ्युपगतासि विशसि च किं

निमित्तमनलमिति आदितः प्रभृति कार्त्स्न्येन कथ्यमानमिच्छामि श्रोतुम् कथमार्य्यस्य गता गोचरम् आकारतो वा कीदृशीति।

तथाभिहितस्तु भूभुजा भिक्षुराचचक्षे महाभाग श्रूयताम् अहं हि प्रत्यूषस्येवाद्य वन्दित्वा भगवन्तम् अनेनैव नदीरोधसा सैकत-सुकुमारेण यदृच्छया विहृतवानतिदूरम्। एकस्मिंश्च वनलता-गहने गिरिनदीसमीपभाजि भ्रमरीणामिव हिमहतकमलाकर-कातराणां रसितं सार्य्यमाणानामतितारतानवर्त्तिनीनां वीणा-तन्त्रीणामिव झाङ्कारमेकतानं नारीणां रुदितमश्रुतिकरमति-करुणमाकर्णितवानस्मि। समुपजातकृपश्च गतोऽस्मि तं प्रदेशम्। दृष्टवानस्मि च दृषत्खण्डखण्डिताङ्गुलिगलल्लोहितेन च पार्ष्णिप्र-विष्टशरशलाकाशल्यशूलसङ्कोचितचक्षुषा च अध्वनीनश्रमश्वयथुनिः-स्थलचरणेन च स्थाणवव्रणव्यथितगुल्फबद्धभूर्जत्वचा च वातखुड्-खेदखञ्जजङ्घाजातज्वरेण च पांसुपाण्डुरपिण्डिकेन च खर्जूरजूट-जटाजर्ज्जरितजानुना च शतावरीविदारितोरुणा च विदारी-दारिततनुदुकूलपल्लवेन च उत्कटवंशविटपकण्टककोटिपाटित-कञ्चुककर्पटेन च फललोभालम्बितानम्रबदरीलताजालकैरुत्कण्टकैः उल्लिखितसुकुमारकरोदरेण च कुरङ्गशृङ्गोत्खातैः कन्दमूलफलैः कदर्थितबाहुना च ताम्बूलविरहविरसमुखखण्डितकोमलामलकी-फलेन च कुशकुसुमाहतिलोहितानां श्वयतामक्ष्णां लेपीकृतमनः-शिलेन च कण्टकिलतालूनालकलेशेन च केनचित् किसलयोप-पादितातपत्रकृत्येन केनचित् कदलीदलव्यजनवाहिना केनचित् कमलिनीपलाशपुटस्पृहीताम्भसा केनचित् पाथेयीकृतमृणाल-पूलिकेन केनचित् चीनांशुकदशाशिक्यनिहितनालिकेरकोश-कलशीकलितरसालतैलेन कतिपयावशेषशोकविकलमूकमूककुब्जवामन-

र्धिरवर्ष्मराविरलेन अबलानां चक्रवालेन परिवृताम् आपत्काले ऽपि कुलोन्नतेनेवामुच्यमानां प्रभालेपिना लावण्येन प्रतिबिम्बितैः आसन्नवनलताकिसलयैः सरसैर्दुःखक्षतैरिवान्तःपटलीमिवमाव-कायां कठोरदर्भाङ्कुरक्षतचारिणा क्षतजेनानुसरणालक्तकेनेव रक्तचरणाम् उत्तालेनाभ्यन्तरतारोपितेनारविन्दिनीदलेन कृत-च्छायमपि निच्छायं मुखमुद्वहन्तीम् आकायमपि शून्यताति-शयानां अश्ममयीमिव निश्चेतनतया मरुन्मयीमिव निश्वाससम्पदा पावकमयीमिव सन्तापसन्तानेन सलिलमयीमिवाश्रुप्रस्रवणेन वियन्मयीमिव निरवलम्बनतया तडिन्मयीमिव पारिप्लवतया शब्द-मयीमिव परिदेवितवाणीबाहुल्येन मुक्तमुक्तांशुकरत्नकुसुमकनक-पत्राभरणां कल्पलतामिव महावने पतितां परमेश्वरोत्तमाङ्ग पातदुर्ललिताङ्गीं गङ्गामिव गाङ्गता वनकुसुमधूलिधूसरितपाद-पल्लवां प्रभातचन्द्रमूर्त्तिमिव लोकान्तरमभिलषन्तीं निजजलमोक्ष-कदर्थितदर्शितधवलायतनेत्रशोभां मन्दाकिनीमृणालिनीमिव परि-म्लायमानां दुःसहरविकिरणसंस्पर्शखेदनिमीलितां कुमुदिनीमिव दुःखेन दिवसं नयन्तीं दग्धदशाविसंवादितां मङ्गलप्रदीपशिखाम् इव क्षामक्षामां पाण्डुवपुषं पार्श्ववर्त्तिवारणाभियोगरक्ष्यमाणां वनकरिणीमिव महापङ्के निमग्नां प्रविष्टां वनगहनं ध्यानस्य स्थितां तरुतले मरणे च पतितां धातुरत्ने महानर्थे च दूरीकृतां भर्त्रा सुखेन च विरेचितां अशनेनाशया च आकुलां केशकलापेन मरणोपायेन च विवर्त्तितामश्रुधूलिभिरङ्गवेदनाभिव दग्धां चण्डातपेन वैधव्येन च हृतमुखीं पाणिना मौनेन च स्पृष्टां प्रियसखीजनेन मन्युना च तयाच घटैरश्रुभिर्भिन्नाशेव मुखेन नयनयुगलेनात्मना च परित्यक्तैर्भूषणैः कर्मारम्भैश्च मन्मथैश्चतयैः

मनोरथैश्च चरणलग्नाभिः परिचारिकाभिः दर्भाङ्कुरसूचीभिश्च हृदयविनिर्विष्टेन चक्षुषा प्रियेण च दीर्घैः शोकश्वसितैः केशैश्च क्षीणेन वपुषा पुण्येन च पादयोः पतन्तीभिर्दृग्भिरश्रुधाराभिश्च स्वल्पावशेषेण परिजनेन जीवितेन च अलसामुन्मेषे दृशामश्रुमोक्षे सन्ततां चिन्तासु विच्छिन्नामाशासु कृशां काये स्थूलां श्वसिते पूरितां दुःखेन रिक्तां सत्त्वेन अध्यासितामायासेन शून्यां हृदयेन निश्चलां निश्चयेन चलितां धैर्य्यात् अपिच वसतिं व्यसनानाम् आधानमाधीनाम् अवस्थानमनवस्थानाम् आधारम् आपतीनाम् आवासमवसादानाम् आस्पदमापदाम् अभियोगम् अभाग्यानाम् उद्वेगमुद्वेगानां कारणं करुणायाः पारं परायत्ततायां योषितम् । चिन्तितवानस्मि च चित्तमोहशोमप्याकृतिमुपतापाः स्पृशन्तीति ।

सा तु समीपगते मयि तदवस्थापि सबहुमानमानतमौलिः प्रणतवती । अहन्तु प्रबलकरुणाप्रेर्य्यमाणस्तामालपितुकामः पुनः कृतवान् मनसि कथमिव महानुभावामेनामामन्त्रये वत्से इत्यतिप्रणयः मातरिति चाटु भगिनीत्यात्मसम्भावना देवीति परिजनालापः राजपुत्त्रीत्यस्फुटम् उपासिके इति मनोरथः स्वामिनीति भृत्यभावाभ्युपगमः भद्रे इति इतरस्त्रीसमुचितम् आयुष्मतीत्यवस्थायामप्रियं कल्याणिनीति दशायां विरुद्धं चन्द्रमुखीत्यसुनिमतम् बाले इत्यगौरवोपेतम् आर्य्ये इति जरारोपणम् पुत्त्रवतीति फलविपरीतम् भवतीति सर्व्वसाधारणम् अपिच कासीत्यनभिज्ञातम् किमर्थं रोदिषीति दुःखकारणस्मरणकारि मा रोदीरिति शोकहेतुमनपनीय न शोभते समाश्वसिहीति किमाश्रित्य स्वागतमिति यातयामं सुखमास्यते इति मिथ्या ।

इत्येवं चिन्तयत्येव मयि तस्मात् क्षणादुत्थाय अन्यतरा योषित् आर्य्यरूपेव शोकविक्लवा समुपसृत्य कतिपयपलितशारं शिरो नीत्वा महीतलम् अतुलहृदयसन्तापप्लुतकैरश्रुबिन्दुभिश्चरणयुगलं दहन्ती ममातिकृपणोरक्षरैश्च हृदयम् अभिहितवती भगवन् सर्व्वसत्त्वानुकम्पिनी प्रायः प्रव्रज्या। प्रतिपन्नदुःखलपणदीक्षादक्षाश्च भवन्ति सौगताः। करुणाकुलगृहञ्च भगवतः शाक्यमुनेः शासनम्। सकलजनोपकारसज्जा सज्जनता जैनी; परलोकसाधनञ्च धर्म्मो मुनीनाम्। प्राणरक्षणाच्च न परं पुण्यजातं जगति गीयते जनेन। अनुकम्पाभूमयः प्रकृत्यैव युवतयः किं पुनर्विपदभिभूताः। साधुजनस्य सिद्धक्षेत्रमार्त्तेव वसाम्। यत इयं नः स्वामिनी मरणेन पितुः अभावेन भर्त्तुः प्रवासेन च भ्रातुः भ्रंशेन च शेषस्य बान्धववर्गस्य अतिदृढ़हृदयतया अनपत्यतया च निरवलम्बना परिभवेन च नीचारातिकृतेन प्रकृतिमनस्विनी अमुना च महाटवीपर्य्यटनक्लेशेन कदर्थितसौकुमार्य्या दग्धदैवदत्तैरेवंविधैर्बहुभिरपर्य्यपरिव्यसनैः विक्लवीकृतहृदया दारुणं दुःखमपारयन्ती सोढुं निवारयन्तम् अनतिक्रान्तपूर्व्वं स्वप्नेऽप्यवगणय्य गुरुजनम् अनुनयन्तीः अखण्डितप्रणाया नर्म्मस्वपि समवधीर्य्य प्रियसखीः विज्ञापयन्तम् अशरुणमश्रुव्याकुलनयनमपरिभूतपूर्व्वं मनसापि परिभूय भृत्यवर्गम् अग्निं प्रविशति परित्रायताम्। आर्य्योऽपि तावदस्याश्शोकापनयनोपायोपदेशनिपुणां व्यापारयतु वाणीमस्यामिति च अतिकृपणं व्याहरन्तीम् अहमुत्थाप्योद्विग्नतरः शनैरभिहितवान् आर्य्ये यथा कथयसि तथा। अस्मद्विरामगोचरोऽयमस्याः पुण्यागतायाः शोकः। शक्यते चेन्मुहूर्त्तमात्रमपि त्रातुम् उपरिष्टाच्च व्यर्थयम् अभ्यर्थना भविष्यति। मम हि गुरुरपर इव भगवान् सुगतः

समीपगत एव। कथिते मयास्मिन्वृत्तान्ते नियतमागमिष्यति परमदयालुः। दुःखान्धकारपटलभिद्भिश्च सौगतैः सुभाषितैः स्वैश्च दर्शितनिदर्शनैर्नानागमगृह्भिर्गिरां कौशलैः कुशलशीलामेनां प्रबोधपदवीमारोपयिष्यतीति। तच्च श्रुत्वा त्वरतामार्य्य इत्यभिदधाना सा पुनरपि पादयोः पतितवती। सोऽहमुपगत्य त्वरमाणो व्यतिकरमिममद्भुतिकरम् अशरणाक्षपणाबद्धयुवतिमरणम् अतिकरुणमत्रभवते गुरवे निवेदितवानिति।

अथ भूभृत् भैक्षवं समवधार्य्य तद्भाषितमश्रुमिश्रितम् अश्रुतेऽपि स्वसुर्नाम्नि निमीलितमना मन्युना सर्व्वाकारसंवादिन्या दशयैव दूरीकृतसन्देहो दग्ध इव सोदर्य्यावस्थाश्रवणेन श्रवणयोः श्रमणाचार्य्यमुवाच आर्य्य नियतं सैवेयमनार्य्यस्यास्य जनस्यातिकठिनहृदयस्यातिनृशंसस्य मन्दभाग्यस्य भगिनी भागधेयैरेताम् अवस्थां नीता निष्कारणवैरिभिर्वराकी विदीर्य्यमाणं मे हृदयमेवं निवेदयति इत्युक्त्वा तमपि श्रमणमभ्यधात् आर्य्य उत्तिष्ठ दर्शय क्वासौ यतः सुप्रभूतप्राणपरित्राणपुण्योपार्जनाय यामः यदि कथञ्चित् जीवन्तीं सम्भावयामः। इति भाषमाण एवोत्तस्थौ।

अथ समग्रशिष्यवर्गानुगतेनाचार्य्येण तुरगेभ्यश्चावतीर्य्य समस्तेन सामन्तलोकेन पश्चादारुध्यमाणात्मीयेन अनुगम्यमानः पुरस्ताच्च तेन शाक्यपुत्त्रीयेण प्रदिश्यमानवर्त्मा पद्भ्यामेव तं प्रदेशं प्रविरलैः पदैः पिबन्निव प्रावर्त्तत। क्रमेण च समुपगतः शुश्राव लतावनान्तरितस्य मुमूर्षोर्म्मूर्छतः स्त्रैणस्य तत्कालोचितानेकप्रकारान् आलापान्—

भगवन् धर्म्म धाव शीघ्रम्। क्वासि कुलदेवते। देवि धरणि धीरयसि न दुःखितां दुहितरम। क्व नु खलु प्रोषिता पुष्पभूति-

कुटुम्बिनी लक्ष्मीः। अनाथां नाथ सुचरितैश्च विविधाधिविधुरां वधूं विधवां विबोधयसि किमिति नेमाम्। भगवन् भक्तजने संस्मरिष्यसि सुगत सुप्तोऽसि। राजधर्म्म पुष्पभूतिभवनपक्षपातिन् उदासीनीभूतोऽसि कथम्। त्वय्यपि विपन्नात्मन्येव विन्ध्य बन्धोऽयमञ्जलिबन्धः। मातर्महाटवि अटन्तीं न श्रृणोषीमामापत्पतिताम्। पतङ्ग प्रसीद पाहि पतिव्रतामशरणाम्। प्रयत्नरक्षित कृतघ्न चारित्रचण्डाल न रक्षसि राजपुत्रीम्। किमवधूतं लक्षणैः। हा देवि दुहितृस्नेहमयि यशोवति मुषितासि दग्धदैवदस्युना। देव दुहितरि दह्यमानायां नापतसि प्रतापशील शिथिलीभूतमपत्यप्रेम। महाराज राज्यवर्द्धन न धावसि मन्दीभूता भगिनीप्रीतिः। अहो निष्ठुरः प्रेतभावः। व्यपेहि पाप पावक स्त्रीघातनिर्घृण ज्वलन्न लज्जसे। भ्रातर्वात दासी तवास्मि संवादय द्रुतं देवीदाहं देवाय दुःखितजनार्त्तिहराय हर्षाय। नितान्तनिःस्नेह शोकश्वपाक सकामोऽसि। दुःखदायिन् वियोगराक्षस तुष्टोऽसि। विजने वने कमाक्रन्दामि कस्मै कथयामि कमुपयामि शरणं कां दिशं प्रतिपद्ये करोमि किमभागधेया। गान्धारि गृहीतोऽयं लतापाशः। पिशाचि मोचनिके मुञ्च शाखाग्रहणकलहम्। कलहंसि हंसि किमतःपरमुन्मादम्। मङ्गलिके मुक्तागलं किमद्यापि रुद्यते। सुन्दरि दूरीभवति सखीसार्थः। श्वसिष्यसि कथमिव अग्निशेखरे शर्वरिके। सुतनु तनूनपाति पतिष्यसि त्वमपि। मृणालकोमले मालावति म्लानासि। मातर्मातङ्गिके अङ्गीकृतस्त्वयापि मृत्युः। वत्से वत्सिके वत्स्यसि कथमनभिप्रेते प्रेतनगरे। नागरिके गरिमाणम् आगतासि अनया स्वामिभक्त्या। विराजिके विराजितासि

राजपुत्रीविपदि जीवितव्ययव्यवसायेन । भृगुपतनाभ्युद्यममागामिन्ने भृङ्गारधारिणि धन्यासि । केतकि कुतः पुनरीदृशी स्वप्नेऽपि सुस्वामिनी । मेनके जन्मनि जन्मनि देवीदास्यमेव ददातु देवो देहं दहन् दहनः । विजये वीजय शयानाम् । सानुमति नमतीन्दीवरिका दिवं गन्तुकामा । कामदासि देहि दहनप्रदक्षिणावकाशम् । विचरिके विरचय वह्निम् । विकिर किरातिके कुसुमप्रकरम् । कुररिके कुरु कुरुवककोरकार्चितां चिताम् । चामरं चामरग्राहिणि गृहाण । पुनरपि कण्ठे मर्षयितव्यानि नर्मदे नर्मनिर्मितानि निर्मर्यादहसितानि । भद्रे सुभद्रे भद्रमस्तु ते परलोकगमनम् । अग्राम्यगुणानुरागिणि ग्रामेयिके गच्छ सुगतिम् । वसन्तिकेऽन्तरं प्रयच्छ । आपृच्छते छत्रधारी देवि देहि दृष्टिम् । दृष्टा तव जहाति जीवितं विजयसेना । सेयं मुक्तिका मुक्तकण्ठमारटति निकटे नाटकसूत्रधारी । पादयोः पतति ते ताम्बूलवाहिनी बहुमता राजपुत्रि पत्रलता । कलिङ्गसेने अयं पश्चिमः परिष्वङ्गः पीडय निर्भरमुरसा माम् । असवः प्रवसन्ति वसन्तसेने । मञ्जुलिके मार्जयसि कतिकृत्वः सुदुःसहदुःखसहस्राश्रुदिग्धं चक्षुरिदं रोदिषि कियदाश्लिष्य च माम् । निर्माणमीदृशं प्रायशो यशोधने । धीरयस्यद्यापि किं मा माधविके । केयमवस्था संस्थापनानाम् । गतः कालः कालिन्दि सखीजनानुनयाञ्जलीनाम् । उन्मत्तिके मत्तपालिके कृताः पृष्ठतः प्रणयिनीप्रणिपातानुरोधाः । शिथिलय चकोरवति चरणग्रहणं ग्रहिणि । कमलिनि किमनेन पुनः पुनः देवोपालम्भेन । न प्राप्तं चिरं सखीजनसङ्गमसुखम् । आर्ये महत्तरिके तरङ्गसेने नमस्कारः । सखि सौदामिनि दृष्टासि ।

समुपनय हव्यवाहनार्च्चनकुसुमानि कुमुदिके। देहि चिता-रोहणाय रोहिणि हस्तावलम्बनम्। अम्ब धात्रि धीरा भव। भवन्त्येवंविधा एव कर्म्मणा विपाकाः पापकारिणीनाम्। आश्च-र्य्याणामयमञ्जलिः। परः परलोकप्रयाणप्रणामोऽयम् मातः। मरणसमये कस्मात्प्रवलिके हलहलको बलीयानानन्दमयो हृदयस्य मे। हृष्यन्त्युत्तरोमाञ्चमुञ्चि किमङ्गीकृत्याङ्गानि। वामनिके वामेन मे स्फुरितमक्ष्णा। वृथा विरमसि वयस्य वायस वृक्षे क्षीरिणि क्षणे क्षणे क्षीणपुण्यायाः पुरः। हरिणि हेषितमिव हयानामुत्तरतः। कस्येदमातपत्रमुन्नमत् पादपान्तरेण प्रभावति विभाव्यते। कुरङ्गिके केन सुगृहीतनाम्नो नाम गृहीतमद्यतमयम् आर्य्यस्य। देवि दिष्ट्या वर्द्धसे देवस्य हर्षस्य आगमनमहोत्सवेन।

इत्येतच्च श्रुत्वा सत्वरमुपससर्प ददर्श च मुह्यन्तीमग्निप्रवेशाय उद्यतां राजा राज्यश्रियम् आललम्बे च मूर्च्छामीलितलोच-नाया ललाटं हस्तेन तस्याः ससम्भ्रमम्।

अथ तेन भ्रातुः प्रेयसः प्रकोष्ठबद्धानामोषधीना रसविसरमिव प्रत्युज्जीवनक्षमं क्षरता वमतेव पारिहार्य्यमणीनामचिन्त्यं प्रभावम् अमृतमिव नखचन्द्ररश्मिभिरुद्गिरता बध्नतेव चन्द्रोदयच्युतशिशिर-शीकरं चन्द्रकान्तचूडामणिं मूर्द्धनि मृणालमयाङ्गुलिनेव अति-शीतलेन निर्व्वापयता दह्यमानं हृदयं प्रत्यानयतेव कुतोऽपि जीवितमाह्लादकेन हस्तसंस्पर्शेन सहसैव समुन्मिमील राज्यश्रीः। तथाचासम्भावितागमनस्याचिन्तितदर्शनस्य सहसा प्राप्तस्य भ्रातुः सुप्रहृष्टदर्शनस्येव कण्ठे समाश्लिष्य तत्कालाविर्भावनिर्भरेण अभि-भूतसर्व्वात्मना दुःखसम्भारेण निर्दयं नदीमुखप्रणालाभ्यामिव मुक्ताभ्यां स्थूलप्रवाहमुत्सृजन्ती वाष्पवारि विलोचनाभ्यां हा तात

हा अम्ब हा सख्य इति व्याहरन्ती मुहुर्मुहुरुच्चैस्तराश्च समुद्भूतभगिनीस्नेहसद्भावभारभावितमन्युना मुक्तकण्ठमतिचिरं विक्रुश्य वत्से स्थिरा भव त्वमिति भ्राता करस्थगितमुखी समाश्वास्यमानापि कल्याणिनि कुरु वचनमग्रजस्य गुरोरित्याचार्य्येण याच्यमानापि देवि न पश्यसि देवस्यावस्थाम् अलमतिरुदितेनेति राजलोकेन अभ्यर्थ्यमानापि स्वामिनि भ्रातरमवेक्षस्वेति परिजनेन विज्ञाप्यमानापि दुहितर्विश्रम्य पुनरारटितव्यमिति निवार्य्यमाणापि बान्धववृद्धाभिः प्रियसखि कियद्रोदिषि तूष्णीमास्व दृढं दूयते देव इति सखीभिरनुनीयमानापि चिरसम्भावितानेकदुःसहदुःखनिवहनिर्व्वहणवाष्पोत्पीडपीड्यमानकण्ठभागा प्रभूतमन्युभारभरितान्तःकरणा करुणकाहलेन स्वरेण कतिचित्कालमतिचिरं रुरोद। विगते च मन्युवेगे वक्त्रैः समीपादाक्षिप्य भ्राता नीता निकटवर्त्तिनि तरुतले निषसाद।

शनैराचार्य्यस्तु तथा हर्ष इति विज्ञाय विवर्द्धितादरः सुतरां मुहूर्त्तमिवातिवाह्य निभृतसंज्ञाज्ञापितेन शिष्येणोपनीतं नलिनीदलैः स्वयमादाय नम्रो मुखप्रक्षालनायोदकमुपनिन्ये। नरेन्द्रोऽपि सादरं गृहीत्वा प्रथमम् अनवरतरोदनाताम्रं चिरप्रवृत्ताश्रुजलजालं रक्तपङ्कजमिव स्वसुश्चक्षुरक्षालयत् पश्चादात्मनः। प्रक्षालितमुखशशिनि च महीपाले सर्व्वतो निःशब्दः सम्बभूव सकलो लिखित इव लोकः। ततो नरेन्द्रो मन्दमन्दमब्रवीत् स्वसारं वत्से वन्दस्वात्रभवन्तं भदन्तम् एष ते भर्त्तुर्हृदयं द्वितीयम् अस्माकञ्च गुरुरिति। राजवचनात्तु राजदुहितरि पतिपरिचयश्रवणोद्गतेन पुनरानीतनेत्राम्भसि नमन्त्याम् आचार्य्यः प्रयत्नरक्षितागतवाष्पाम्भःसम्भारभज्यमानधैर्य्यार्द्रलोचनः किञ्चित् परावृत्तनयनो

दीर्घं निशश्वास। स्थित्वा च क्षणमेकं प्रदर्शितप्रश्रयो मृदुवादी मधुरया वाचा व्याजहार कल्याणराशे अलं रुदित्वातिचिरम् राजलोको नाद्यापि रोदनान्निवर्त्तते। क्रियतामवश्यकरणीयः स्नानविधिः स्नात्वा च गम्यतां तामेव भूयो भुवम्।

अथ भूपतिरनुवर्त्तमानो लौकिकमाचारमाचार्य्यवचनञ्च उत्थाय स्नात्वा गिरिसरिति सह स्वस्रा तामेव भूमिमयासीत्। तस्याञ्च सपरिजनां प्रथममाहितावधानः पार्श्ववर्त्ती परयतीं शुचा पतिपिण्डप्रदर्शितप्रयत्नप्रतिपन्नाभ्यवहारकरणां भगिनीमभोजयत् अनन्तरञ्च स्वयमाहारस्थितिमकरोत्। भुक्तवांश्च बन्धनात्प्रभृति विस्तरतः स्वसुः कान्यकुब्जात् गौडसम्भ्रमं गुप्तितो गुप्तनाम्ना कुलपुत्त्रेण निष्कासनं निर्गतायाश्च राज्यवर्द्धनमरणश्रवणं श्रुत्वा चाहारनिराकरणम् अनाहारपराहतायाश्च विन्ध्याटवीपर्य्यटन-खेदं जातनिर्वेदायाः पावकप्रवेशोपक्रमणं यावत् सर्व्वमशृणोत् व्यतिकरं परिजनतः। ततः सुखासीनमेकत्र तरुतले विविक्तभुवि भगिनीद्वितीयं दूरस्थितानुजीविजनं राजानमाचार्य्यः समुपसृत्य शनैरासाञ्चक्रे स्थित्वा च कञ्चित्कालाग्रं लेशतो वक्तुमुपचक्रमे। श्रीमन् आकर्ण्यताम् आख्येयमस्ति नः किञ्चित्—

अयं हि यौवनोन्मादात् परिभूय भूयसीर्भार्य्या यौवनावतारतरल-तरास्ताराराजो रजनीकर्णपूरः पुरुहूतपुरोधसो धिषणस्य पुरन्ध्रीं धर्म्मपत्नीं पत्नीयन्नतितरलस्तारां नामापजहार नाकतश्च पलाया-ञ्चक्रे। चकितचकोरलोचनया तया सहातिकामया सर्व्वाकाराभि-रामया रममाणो रमणीयेषु देशेषु चचार। चिराच्च कथञ्चित् सर्व्वगीर्व्वाणवाणीगौरवाद्गिरां पत्युः पुनरपि प्रत्यर्पयामास ताम्। हृदये त्वनिभ्रममदह्यत विरहाद्दाराहिणायाः तस्याः सततम्।

एकदा तु शैशवादुदयादुदयमानो विमले वारिणि वरुणालयस्य संक्रान्तमात्मनः प्रतिबिम्बं विलोकितवान्। दृष्ट्वा च तदा सस्मार सस्मरः स्मेरगण्डस्थलस्य ताराया मुखस्य। मुमोच च मन्मथोन्माथमथ्यमानमानसः स्वस्थोऽप्यस्वस्थः स्ववीयसः पीतसकलकुमुदवनप्रभाप्रवाहधवलताराभ्यामिव लोचनाभ्यां वाष्पवारिबिन्दून्। अथ पततस्तानुदन्वति समस्तानेव आचेमुर्मुक्ताशुक्तयः। तासाञ्च कुक्षिकोषेषु मुक्ताफलीभूतानवाप तान् कथमपि रसातलनिवासी वासुकिर्नाम विषमुचामीशः। स च तैर्मुक्ताफलैः पातालतलेऽपि तारागणमिव दर्शयद्भिरेकावलीमकल्पयत् चकार च मन्दाकिनीति नाम तस्याः। सा च भगवतः सोमस्य सर्व्वासामोषधीनामधिपतेः प्रभावादत्यन्तविषघ्नी हिमामृतसम्भवत्वाच्च स्पर्शेन सर्व्वसत्त्वसन्तापहारिणी बभूव। यतः स तां सर्व्वदा विषोष्मशान्तये वासुकिः पर्य्यधत्त।

समतिक्रामति च कियत्यपि काले कदाचित्तामेकावलीं तस्मान्नागराजात् नागार्ज्जुनो नाम नागैरेवानीतः पातालतलं भिक्षुरभिक्षत लेभे च। निर्गत्य रसातलात् त्रिसमुद्राधिपतये सातवाहननाम्ने नरेन्द्राय सुहृदे स ददौ ताम्। सा चास्माकं कालेन शिष्यपरम्परया कथमपि हस्तमुपगता। यद्यपि च परिभव इव भवति भवादृशां दत्तिम उपचारः तथाप्योषधिबुद्ध्या बुद्धिमता सर्व्वसत्त्वराशिरक्षाप्रवृत्तेन रक्षणीयशरीरेणायुष्मता विषरक्षापेक्षया गृह्यताम्। इत्यभिधाय भिक्षोरभ्यासवर्त्तिनश्चीवरपटान्तसंयता मुमोच तामेकावलीं मन्दाकिनीम्।

उन्मुच्यमानाया एव यस्याः प्रभालेपिनि लब्धावकाशे विषदमहसि महीयसि विसर्पति रश्मिमण्डले युगपद्धवलायमानेषु

दिङ्मुखेषु मुकुलितलताबद्धक्लिष्टैरामूलाद्धिकाशितमिव तरुभिः अभिनवमृणाललुब्धैर्धावितमिव धुतपक्षपुटपटलधवलितगगनं वनसरसीहंसयूथैः स्फुटितमिव भरवशविशीर्णमाणधूलिधवलैर्गर्भभेदसूचितसूचीसञ्चयशुचिभिः केतकीवाटैः उन्नलितदलदन्तुराभिः प्रबुद्धमिव कुमुदिनीभिः विधुतशितसटाभारभरितदिक्चक्रैर्ज्वलितमिव केसरिकुलैः प्रहसितमिव दशनांशुमालालोकलिप्यमानवनं वनदेवताभिः विकसितमिव शिथिलितकुसुमकोशकेसराट्टहासनिरङ्कुशं काशकाननैः भ्रान्तमिव सम्भ्रमभ्रमितबालपल्लवपरिवेशश्वेतायमानैश्चमरीकदम्बकैः प्रस्तुतमिव स्नायमानफेनिलतरलतरतरङ्गोद्गारिणा गिरिनदीपूरेण अपरताराग्रणालाभमुदितेन उदितमिव विकचमरीचिचक्राक्रान्तककुभा पूर्णचन्द्रेण प्रक्षालित इव दावानलधूलिधूसरितदिगन्तो दिवसः पुनरिव धौतान्यश्रुजलक्लिष्टानि नारीणां मुखानि।

राजा तु मांसलैस्तस्याः सम्मुखैर्मयूखैराकुलीक्रियमाणं मुहुर्मुहुरुन्मीलयन्निमीलयंश्च चक्षुः कथमपि प्रयत्नेन ददर्श सर्व्वाशापूरणीं पङ्क्तीकृतामिव दिङ्नागकर्णीकरसंहतिं घनमुक्तां शारदीम् इव लेखीकृतां ज्योत्स्नां प्रकटपदकचिह्नां सञ्चारणवीथीमिव बालेन्दोः निश्चलीभूतां सप्तर्षिमालामिव हस्तमुक्तामभिभूतसकलभुवनभूषणभूतिप्रभावामैशानीमिव शशिकलां धवलतागुणाट्टशीतां कान्तिमिव निर्गतां क्षीरराशेः अनेकमहामहीभृत्परम्परागतां गङ्गामिव दुर्गतिहराम् अनवरतस्फुरिततरलांशुकां पुरःसरपताकामिव महेश्वरभावागमस्य घनसारशुक्लां दन्तपङ्क्तिम् इवाभिमुखस्य ईश्वरस्य वरमनोरथपूरणसमर्थं स्वयम्वरस्रजमिव भुवनश्रियः निजकरपल्लवावरणदुर्लक्ष्यां मधूरागविहसतिकामिव

वसुधायाः मन्त्रकोषसाधनप्रवृत्तस्याक्षमालामिव राजधर्म्मस्य समुद्रालङ्कारभूतां सङ्ख्यालेख्यपट्टिकामिव कुवेरकोषस्य। पश्यन् चैतां विस्मयम् आजगाम मनसा सुचिरम्। आचार्य्यस्तु तामुद्धृत्य बबन्ध बन्धुरे स्कन्धभागे भूपतेः। अथ नरपतिरपि प्रीतिमुपदर्शयन् प्रत्यवादीत् आर्य्य रत्नानामीदृशानाम् अनर्घाः प्रायेण पुरुषाः। तपःसिद्धिरियमार्य्यस्य देवताप्रसादो वा। के च वयमिदानीमात्मनोऽपि किमुत ग्रहणस्य प्रत्याख्यानस्य वा। दर्शनात् प्रभृति प्रभूतगुरुगुणगणाकृष्टेन हृदयेन परवन्तो वयम्। सङ्कल्पितमिदमामरणादार्य्योपयोगाय शरीरम्। अत्र कामचारो वः कर्त्तव्यानामिति।

समतिक्रान्ते च कियत्यपि काले गते चैकावलीवर्णनालापे लोकस्य अनन्तरं लब्धविश्रम्भा राज्यश्रीताम्बूलवाहिनीं पत्रलताम् आहूयोपांशु किमपि कर्णमूले शनैरादिदेश। दर्शितविनया च पत्रलता पार्थिवं व्यज्ञापयत् देव देवी विज्ञापयति न स्मरामि आर्य्यस्य पुरः कदाचिदुच्चैर्व्वचनमपि कुतो विज्ञापनम्। इयं हि शुचाम् असह्यता व्यापारयन्ती हतदैवदत्तादेशा शिथिलयति विनयम्। अबलानां हि पतिरपत्यं वावलम्बनम्। उभयविकलानान्तु दुःखानलेन्धनायमानं प्राणितमश्लीलत्वमेव केवलम्। आर्य्यागमनेन च हतोऽपि प्रतिहतो मरणप्रयत्नः। अतः काषायग्रहणाभ्यनुज्ञया अनुगृह्यतामयमपुण्यभाजनं जन इति। जनाधिपस्तु तदाकर्ण्य तूष्णीमेवावतिष्ठत।

अथाचार्य्यः सुधीरमभ्यधात् आयुष्मति शोको हि नाम पर्य्यायः पिशाचस्य रूपान्तरमाक्षेपस्य तारुण्यं तमसः विशेषणं विषस्य अनन्तकः प्रेतनगरनायकः। अयमनिर्वृतिधर्म्मा दहनः। अयमक्षयो

राजयक्ष्मा। अयमलक्ष्मीनिवासो जनार्द्दनः। अयमपुण्यप्रष्टृत्तः श्वपाकः। अयमप्रतिबोधो निद्राप्रकारः। अयमनलसधर्म्मा सन्निपातः। अयमशिवसञ्चरो विनायकः। अयमबुधसेवितो ग्रहवर्गः। अयमयोगसमुत्थो ज्योतिष्प्रकारः। अयं स्नेहाद्वायुप्रकोपः मानसादग्निसम्भवः आर्द्रभावात् रजःक्षोभः रसादभिशोषः रागात्कालपरिणामः। तदस्याजन्मस्थायिनो हृदयमशप्रयास्य बहुलदोषान्धकारलब्धप्रवेशप्रसरस्य प्राणतस्करस्य शून्यताहेतोर्महाभूतग्रामघातकस्य सकलविग्रहलम्पटस्य दोषचक्रवर्त्तिनः कार्श्यश्वासप्रलापोपद्रववहलस्य दीर्घरोगस्य असदृग्रहस्य सकललोकक्षयधूमकेतोः जीवितापहारदक्षस्यात्तदारुवैरनभ्रवज्रपातस्य स्फुरदनवद्यविद्याविद्युद्द्योतमानानि गहनग्रन्थग्रन्थिगूढगर्भग्रहणगम्भीराणि भूरिकाव्यकथाकठोराणि बहुशास्त्रोद्वहनदृढानि विदुषामपि हृदयानि नालं सोढुमापातं किमुत नवनवमालिकाकुसुमकोमलानां सरसविसतन्तुदुर्ब्बलकमबलानां हृदयम्।

एवं सति सत्यव्रते वद किमत्र क्रियते कतम उपालभ्यते कस्य पुर उच्चैराक्रन्द्यते हृदयदाहि दुःखं वा ख्याप्यते। सर्व्वमक्षिणी निमील्य सोढव्यमभ्रूढेन मर्त्त्यधर्म्मणा। पुण्यवति पुरातन्यः स्थितय एताः केन शक्यन्तेऽन्यथाकर्त्तुम्। संसरन्त्यो नक्तन्दिवं द्राघीयस्यो जन्मजरामरणघटनघटीयन्त्रराजिरज्जवः पञ्चजनानाम्। पञ्चमहाभूतपञ्चकुलाधिष्ठितान्तःकरणव्यवहारदर्शननिपुणाः सर्व्वरूपा विषमा धर्म्मराजस्थितयः। क्षणमपि क्षममाणा गलन्त्यायुष्कालाकलनकुशला निलये निलये काञ्चननालिकाः। जगति सर्व्वजन्तु जीवितोपहारपातिनी सञ्चरति झटिति चण्डिका यमाज्ञा। रटन्त्यनवरतमखिलप्राणिप्रयाणप्रकटनपटवः प्रेतपतिपटहाः।

प्रतिदिशं पर्य्यटन्ति प्रेतकैः प्रतिपुरं प्रतप्तलोहलोहिताक्षाः कालकूटकान्तिकालकायाः कालपाशपाणयः कालपुरुषाः। प्रतिभवनं भ्रमन्ति भीषणकिङ्करकरघट्टितयमघण्टापुटपटुटाङ्कारभयङ्कराः सर्व्वसत्त्वसङ्घसंहरणाय घोराघातघोषणाः। दिशि दिशि वहन्ति बहुचिताधूमधूसरितप्रेतपतिपताकापट्टपतितग्टध्रदृष्टयः शोकात्त-कोलाहलाकुलकुटुम्बिनीविकीर्णकेशकलापशवलशर्वरीशविकासहस्त-सङ्कुलाः किलकिलायमानश्मशानशिविरशिवाशावकाः परलोकावसथपथिकसार्थप्रस्थानविशिखावीथयः। सकललोककवलावलेहलम्पटा बहुला बहुंलिहा लेढि लोहिताचिता चिताङ्गारकाली कालरात्रिजिह्वा जीवितानि जीविनाम्। त्वमिमशिचिता च भगवतः सर्व्वभूतभुजो बुभुक्षा मृत्योः। अतिद्रुतवाहिनी चानित्यतानदी। क्षणिकाश्च महाभूतग्रामगोष्ठ्यः। रात्रिषु भङ्गराणि पाञ्चयन्त्रपञ्जरदारूणि देहिनाम्। अशुभशुभावेशविवशा विशरारवः शरीरनिर्म्माणपरमाणवः। छिदुरा जीवबन्धनपाशतन्त्रीतन्तवः। सर्व्वमात्मनोऽनीश्वरं विश्वं नश्वरम्। एवमवष्टत्य नात्यर्थम् एवार्हसि मेधाविनि मृदुनि मनसि तमसः प्रसरं दातुम्। एको हि प्रतिसङ्ख्यानक्षण आधारीभवति धृतेः। अपिच दूरगतेऽपि हि शोके नन्विदानीमपेक्षणीय एवायं ज्येष्ठः पितृकल्पो भ्राता भवत्या गुरुः। इतरथा को न बहु मन्येत कल्याणरूपमीदृशं सङ्कल्पमत्र-भवत्याः काषायग्रहणकृतम्। अखिलमनोज्वरप्रशमनकारणं हि भगवती प्रव्रज्या। ज्यायः खल्विदं पदमात्मवताम्। महाभागस्तु भिनत्ति मनोरथमधुना। यदयमादिशति तदेवानुष्ठेयम्। यदि भ्रातेति यदि ज्येष्ठ इति यदि वत्सल इति यदि गुणवानिति यदि राजेति सर्व्वथा स्थातव्यमस्य नियोगे। इत्युक्त्वा व्यरंसीत्।

उपरतवचसि च तस्मिन् निजगाद नरपतिः आर्य्यमपहाय कोऽन्य एवमभिदध्यात्। अनभ्यर्थितदैवनिर्म्मिता हि विषमविपद्वलम्बनस्तम्भा भवन्तो लोकस्य। स्नेहार्द्रमूर्त्तयो मोहान्धकारध्वंसिनश्च धर्म्मप्रदीपाः। किन्तु प्रणयप्रदानदुर्ललिता दुर्लभमपि मनोरथमतिप्रीतिरभिलषति। धीरस्यापि धार्ष्ट्यमारोपयति हृदयलघिमलङ्घितमतिवल्लभत्वम्। युक्तायुक्तविचारशून्यत्वाच्च शालीनम् अपि शिक्षयन्ति स्वार्थतृष्णाः प्रागल्भ्यम्। अभ्यर्थनाया रक्षन्ति च जलनिधय इव मर्य्यादामार्य्याः। दत्तमेव च शरीरमिदम् अनभ्यर्थितेन प्रथममेवातिथ्याय माननीयेन भवता मह्यम्। अतः किञ्चिदर्थये भदन्तम् इयं नः स्वसा बाला च बहुदुःखखेदिता च सर्व्वकार्य्यावधीरणोपरोधेनापि यावल्लालनीया नित्यम्। अस्माभिश्च भ्रातृबधापकारिरिपुकुलप्रलयकरणोद्यतस्य बाहोर्विधेयैः भूत्वा सकललोकप्रत्यक्षं प्रतिज्ञा कृता। पूर्व्वावमाननाभिभवम् असहमानैरर्पित आत्मा कोपस्य। अतो नियुक्ता कियन्तमपि कालमात्मानमार्य्योऽपि कार्य्ये मदीये। दीयतामर्तिथये शरीरम् इदम्। अद्य प्रभृति यावदयं जनो लघयति प्रतिज्ञाभारम् आश्वासयति च तातविनाशदुःखविक्लवाः प्रजाः तावदिमामत्र भवतः कथाभिश्च धर्म्मार्थाभिः कुशलप्रतिबोधविधायिभिरुपदेशैश्च अरजोभिः शीलोपशमदायिनीभिश्च देशनाभिः क्लेशप्रहाणहेतुभूतैश्च तथागतदर्शनैः अस्मत्पार्श्वोपयायिनीमेव प्रतिबोध्यमानाम् इच्छामि। इयन्तु ग्रहीष्यति मयैव समं समाप्तकृत्येन काषायाणि। अर्थिजने च किमिव नातिसृजन्ति महान्तः। सुरनाथमात्मास्थिभिरपि यावत् कृतार्थमकरोत् धैर्य्योदधिर्दधीचः। मुनिनाथोऽप्यनपेक्षितात्मस्थितिरनुकम्पेति कृत्वा कृपावानात्मानं

वठरसत्त्वेभ्यः कतिकृत्वो न दत्तवान् । अतः परं भवन्त एव बहुतरं जानन्ति । इत्युक्त्वा तूष्णीम्बभूव भूपतिः ।

भूयस्तु बभाषे भदन्तः भव्या न हि वच्चारयन्ति वाचम् । चेतसा प्रथममेव प्रतिग्राहिता गुणाः कायबलिमिमाम् । अमुना जनेनोपयोगस्तु निरुपयोगस्यास्य लघुनि गुरुणि वा कृत्ये गुणवदायत्त इति । अथ तथा तस्मिन्नभिनन्दितप्रणये प्रीयमाणः पार्थिवः तत्र तामुषित्वा विभावरीम् उषसि वसनालङ्कारादि-प्रदानपरितोषितं विसर्ज्य निर्घातम् आचार्य्येण सह स्वसारमादाय प्रयाणकैः कतिपयैरेव कटकमनुजाह्नवि निविष्टं प्रत्याजगाम ।

तत्र च राज्यश्रीप्राप्तिव्यतिकरकथां कथयत एव प्रणयिभ्यो रविरपि ततार गगनतलम् । वहलमधुपङ्कपिङ्गलः पङ्कजाकर इव सञ्चुकोच चक्रवाकवल्लभो वासरः । प्रकीर्णानि नवरुधिर-रसारुणवर्णानि लोकालोकजूंषि यजूंषि इव कुपितयाज्ञवल्क्यवक्त्र-वान्तानि निजवपुषि पूषा पापमुषि पुनरपि संजहार जालकानि रोचिषाम् । क्रमेण च समुपोह्यमानमांसलरागरोचिष्णुरुष्णांशुः उष्णीषबन्धसहजचूडामणिरिव हकोदरकरपुटोत्पाटितः प्रत्यग्र-शोणितशोणाङ्गरागरौद्रो द्रौणायनस्य रुद्रभिक्षादानशौण्डपुर-मथनमुक्तमुण्डशिरानाड़िरुधिरपूरणकपिलः कपालकर्पर इव च पैतामहः पितृवधरुषितरामरागरचितः पृथुविकटकान्तवीर्य्यांस-कूटकुट्टाक कुठार तुण्डतष्टदुष्ट क्षत्रिय कण्ठकुहर रुधिरकुल्याप्रणाल-सहस्रपूरितो ह्रद इव दूररोधी रौधिरो भयनिगूढ़करचरणमुण्ड-मण्डलाकृतिर्गरुगरुडनखपञ्जराक्षेपक्षणक्षिप्तक्षतजोक्षितो व्यसुः विभावसुः कमठ इव च लोठ्यमानो नभस्यरुणगर्भमांसपिण्डाण्ड इव च खण्डिमानमानीतो नियतकालातिपातदूयमानदाक्षायणी-

क्षिप्तो धातुतट इव च सुमेरोः असुरवधाभिचारचरुपचनपिशुनः शोणितक्वाथकषायितकुक्षिरतिविसङ्कटः कटाह इव च बार्हस्पत्यः सद्योगलितगजदानवदेहलोहितोपलेपभीषणो मुखमण्डलाभोग इव महाभैरवस्य मुहूर्त्तमदृश्यत जलनिधिजलप्रतिबिम्बितरवि-बिम्बराजिभास्वराभावलम्बिनी गृहीतार्द्रमांसभारेव वामभागे वासरावसानवेला वेतालनिभा ज्वलत्सन्ध्यारागरज्यमानजलप्रवाहः पुनरिव पुराणपुरुषपीवरोरुसम्पर्दपिष्टमधुकैटभरुधिरपटलपाटल-वपुरभवदधिपतिरर्णसाम्। अवसिते सन्ध्यासमये समनन्तरम् अपरिमितयशःपानतृषिताय मुक्ताशैलशिलाचषक इव निजकुल कीर्त्त्या कृतयुगकरणोद्यतायादिराजराजशासनमुद्रानिवेश इव राज्यश्रिया सकलद्वीपजिगीषाचलिताय श्वेतद्वीपदूत इव चायत्या श्वेतभानुरुपानीयत निशया नरेन्द्रायेति।

इति श्रीबाणभट्टकृते हर्षचरिते अष्टम उच्छ्वासः।

सम्पूर्णम्।

PRINTED BY PITAMBARA VANDYOPADHYAYA,
AT THE SANSKRIT PRESS
62 AMHERST STREET 1883